राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान-राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यत अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट-ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

फतहसिंह, एम ए.,डी.लिट्.
निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर



ग्रन्थाङ्क ११४

सांख्यायनमुनिप्रणीतं

सांख्यायनतन्त्रम्

प्रकाशक

राजस्थान-राज्याज्ञानुसार

निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

१९७० ई०

वि० स० २०२६ भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८९१

मुद्रक—हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर

प्रधानसम्पादकीय वक्तव्य

प्रस्तुत ग्रन्थ का सम्पादन श्रीलक्ष्मीनारायण गोस्वामी ने ५ हस्तलेखो के आधार पर किया है और पाठान्तरो को पाद-टिप्पणियों मे दे दिया है। विद्वान् सम्पादक ने पुस्तक के पाठ को शुद्धतम रूप मे प्रस्तुत करने के अतिरिक्त न केवल विद्वानो के लिए अपि तु साधको के लिए भी उपयोगी एव आवश्यक सामग्री को भूमिका तथा परिशिष्टो के रूप मे दे दिया है। यह ग्रन्थ यद्यपि आकार मे छोटा है, परन्तु 'बगला' की साधना के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सम्पादक ने मन्त्रोद्धार को स्पष्ट करने का जो प्रयत्न किया है वह स्तुत्य है और इससे प्रकट है कि श्रीगोस्वामीजी को तन्त्र के व्यवहारपक्ष का कितना ज्ञान अपनी पैतृक सम्पत्ति के रूप मे मिला है। इसीप्रकार पुस्तक की भूमिका के अन्तर्गत सम्पादक ने आगम निगमादि के विषय मे जो सामग्री प्रस्तुत की है वह भी बडी उपयोगी है और मैं इस सबके लिए विद्वान् सम्पादक को बधाई देता हू। तन्त्रशास्त्र के अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं, परन्तु व्यवहार-पक्ष की उपेक्षा करने से वे प्राय दुर्बोध बन गए हैं। मेरी इच्छा थी कि वह कमी इस ग्रन्थ मे नही रहती। श्रीगोस्वामीजी तन्त्र-व्यवहार मे भी पारङ्गत हैं, अत इस कमी को दूर करना उनके लिए कठिन नही था और उन्होने किसी सीमा तक इसको दूर किया भी है। परन्तु फिर भी ग्रन्थ के आकार के बढने के भय से बहुत सी सामग्री नही दी गई। आशा है वह सब दूसरे रूप मे तन्त्र-शास्त्र के व्यवहारपक्ष को उपस्थित करते हुए अन्यत्र दी जा सकेगी।

ग्रन्थ का मुद्रण प्रारम्भ हो गया था, परन्तु सम्पादक महोदय की अनेक व्यक्तिगत कठिनाइयो अथवा प्रतिष्ठान या प्रस म उपस्थित अनेक विघ्न-बाधाओ के कारण, ग्रन्थ के प्रकाशन मे आशातीत विलम्ब हुआ जिसके लिए मैं प्रतिष्ठान की ओर से क्षमाप्रार्थी हूँ।

अन्त मे, मैं प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष म० विनयसागर तथा साधना प्रेस के व्यवस्थापक श्रीहरिप्रसाद पारीक को धन्यवाद अर्पित करता हूँ जिन्होने रुचि एव लगन के साथ इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने म सहयोग दिया है।

—फतहसिंह

१ जनवरी, १९७०
जोधपुर

भूमिका

भारतवर्ष एक धर्मप्रधान देश है। यहाँ अनादिकाल से निगम एवं आगम-सम्मत धर्म की ही स्थिति प्रधान रूप में प्रचलित रही है। मन्त्रब्राह्मणात्मक वेदों को निगम अथवा छन्द नाम से वामन, भट्टोजी दीक्षित आदि महापण्डितों ने अभिहित किया है— नितरामत्यन्तं निश्चयेन वा गच्छन्ति अवगच्छन्ति (जानन्ति) धर्ममनेनेति निगमश्छन्द' अर्थात् निरन्तर अथवा निश्चयपूर्वक जिसके द्वारा धर्म को जानते हैं उसे निगम अर्थात् छन्द कहते हैं। परा और अपरा-नामक विद्याओं[1] की स्थिति भी इसी में निहित है अतः इसी निगम को धर्मशास्त्र के आचार्य मनु ने विद्या एवं धर्म का स्थान माना है 'वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः' अर्थात् वेदविहित कार्य ही धर्म एवं तदितर कार्य अधर्म है। याज्ञवल्क्य ने भी पुराण, न्याय, मीमांसा एवं धर्मशास्त्रस्वरूप अङ्गों से युक्त वेद को धर्म एवं चौदह विद्याओं का स्थान बतलाया है—

'पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश।'

त्रिकालदर्शी महर्षियों ने सम्पूर्ण शब्दराशि को आगम-निगम-भेद से दो भागों में विभक्त किया है। क्यों कि प्रकृतिसिद्ध नित्यशब्दब्रह्म इन्हीं दो भागों में विभक्त है। यद्यपि 'अथो वागेवेदं सर्वम्'[2] 'वाचीमा विश्वा भुवनान्यर्पिता'[3] आदि श्रौतसिद्धान्तों के अनुसार वाक्तत्व से प्रादुर्भूत होने वाले शब्दप्रपञ्च से कोई स्थान खाली नहीं है तथापि स्वर्गनाम से प्रसिद्ध १४ प्रकार के भूतसर्ग के साथ प्रधानरूप से अग्निवाक् और इन्द्रवाक् का ही सम्बन्ध है। पृथिवी अग्निमयी है और द्युलोकोपलक्षित सूर्य इन्द्रमय है[4]। पार्थिव एवं सौर अग्नि अन्नाद (अन्न खानेवाले) हैं और मध्यपतित चान्द्र सोम इन अग्नियों का अन्न बन रहा है[5]। अन्न जब अन्नाद के उदर में चला जाता है तो केवल अन्नाद-सत्ता ही

---

१ 'द्वे विद्ये वेदितव्ये परा चैवापरा च। (१) परा—उपनिषद्विद्या। (२) अपरा—ऋग्वेदादि।

२ ऐतरेयारण्यक० ३।१।६।

३ तैत्तिरीय ब्राह्मण २।८।८।४।

४ यथाग्निगर्भा पृथिवी तथा द्यौरिन्द्रेण गर्भिणी शतपथब्राह्मण १४।६।७।२०

५ 'एष वै सोमो राजा देवानामन्नं यच्चन्द्रमा' ,, ११।६।४।५

रह जाती है, अन्न की स्वतन्त्रता हट जाती है[1]। इसीलिये त्रैलोक्य के लिये 'द्यावापृथिवी' का व्यवहार ही होता है। अत प्रधानत पृथिवीलोक एव सूर्यलोक ही रह जाते हैं। दोनो अग्निमय हैं। पार्थिवाग्नि गायत्राग्नि है और सौर अग्नि सावित्राग्नि है। ये दोनो अग्नियाँ 'वाक्' कहलाती हैं[2]। वैज्ञानिक परिभाषा के अनुसार पृथिवी की वाक् अनुष्टुप् और सूर्य की वाक् बृहती कहलाती है। अनुष्टुप् वाक् से कचटतप आदिरूपा वर्णवाक् का तथा बृहतीवाक् से अ आ इ आदिरूपा स्वरवाक् का प्रादुर्भाव होता है। 'स्वरोऽक्षरम्' के अनुसार स्वर अक्षर हैं, अविनाशी हैं। वर्ण क्षर हैं, विनाशशील हैं। जिस प्रकार अर्थसृष्टि मे भौतिक क्षरकूट की प्रतिष्ठा अक्षरतत्व है उसी प्रकार 'शब्दे ब्रह्मणि निष्णात पर ब्रह्माधिगच्छति' के अनुसार अर्थब्रह्म की समान धारा म प्रवाहित होने वाले शब्दब्रह्म मे भी क्षररूप वर्ण की प्रतिष्ठा अक्षररूप स्वरतत्व ही है। अर्थब्रह्म मे जैसे अक्षररूप सूर्यसत्ता को छोडकर क्षररूपा पृथिवी अपने रूप मे प्रतिष्ठित नही रह सकती है इसी प्रकार सूर्यवाङ्मूलक स्वरतत्व के बिना पृथिवीमूलिका वर्णराशि भी स्व-स्वरूप मे प्रतिष्ठित नही रह सकती है। स्वरमूलक इस सूर्यविद्या का ही नाम त्रयीविद्या' है। सूर्य नही तप रहा है, त्रयीविद्या तप रही है, 'सैपात्रय्येव विद्या तपति'[3] और त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नम ' का भी यही रहस्य है। यह वेदतत्व नित्यतत्व है, स्वय प्रादुर्भूत है, स्वय ब्रह्म के मुख से उदगीर्ण है। इसीलिये महर्षियो ने इसे निगम' एव श्रुति की सज्ञा दी है।

शनि, मङ्गल, शुक्र, बुध, पृथिवी आदि सूर्य के उपग्रह हैं। सूर्य का ही प्रवर्ग्यभाग शनि आदिरूप मे परिणत हो कर सूर्य के चारो ओर घूम रहा है। सूर्यविद्या का अशभूत पृथिवीलोक सूर्य के चारों ओर घूम रहा है। पृथिवीविद्या सूर्यविद्या से आई है। इसी रहस्य को समझाने के लिये महर्षियों ने पृथिवीविद्या का नाम 'आगम' रखा है। सूर्यविद्या की तरह पृथिवीविद्या स्वय निर्गत नही है अपि तु निगम से आई है 'निगमादागत आगम '। ऊपर कहा जा चुका है कि पृथिवी की वाक् वर्णवाक् स्वर से भिन्न है। अत आगमशास्त्रोक्त प्रयोगो का उदात्तादिस्वरो से विशेष सम्बन्ध नही माना जाता है। वहाँ केवल

---

१ 'द्वय वा इदम - अत्ता चैवाद्यञ्च । तद्यदोभय समागच्छति अत्तैवाख्यायते नाद्यम् । स वै य सोऽत्ताग्निरेव स ।' शतपथब्राह्मण १०।६।२।१

२ 'तस्य वा एतस्याग्नेर्वागेवोपनिषत् । ,   १०।५।१।१

३ शतपथब्राह्मणम् १०।५।२।२।

आदेश' को 'आगम' कहते हैं जिस प्रकार चारो वेदो मे प्रकट आदेश निगम कहा जाता है। आगमवादी इस उर्द्ध्वमुख को परमेश्वर अर्थात् शिव का पञ्चममुख कहते हैं और वह ऊर्ध्वस्रोत द्वारा ब्रह्मविद्या चार वेदो म ही समाप्त नही होती परन्तु देश, काल और निमित्तो के परिवर्त्तन से युगानुसार सिद्धजनो द्वारा प्रकट होती है। इसीलिये माण्डूक्योपनिषद् को आगमप्रकरण ही कहते हैं।

आगम का लक्षण वाचस्पतिमिश्र ने इस प्रकार किया है कि *जिससे भोग और मोक्ष दोनो का स्वरूप समझा जा सके वह आगम है।* प्राचीन वेद-साहित्य कर्मकाण्ड द्वारा केवल स्वर्गादि योगसाधनो का स्वरूप समझाता है अथवा ज्ञानकाण्ड द्वारा केवल मोक्ष का स्वरूप और उसके साधन बतलाता है, परन्तु पञ्चम आगम साहित्य भोग और मोक्ष की एकवाक्यता करके क्रमपूर्वक व्यवहारसुख और परमार्थसुख दोनो दे सकता है।

तन्त्र–आगम

तन्त्र वह विज्ञान है जो ऐसे साधनो और योगो का निर्देश करता है जिनके द्वारा मनोबल की उन्नति की जा सकती है। इन साधनो एव प्रयोगो का उद्देश्य निस्सदेह मोक्ष की प्राप्ति है। परन्तु एक जन्म मे सब लोग इस स्थिति पर नही पहुँच सकते, अभ्यास करते-करते उनके अन्दर कुछ विशिष्ट शक्तियाँ जागृत हो जाती हैं जिन्हें सिद्धि कहते हैं। सिद्धियाँ कुछ अलौकिक शक्तियाँ हैं जिनका प्रयोग वे ही कर सकते हैं जिन्होंने इन्हें प्राप्त किया है। अन्य कोई भी व्यक्ति इनका उपयोग नही कर सकता। पातञ्जल योगसूत्र में अणिमा, गरिमा, लघिमा आदि आठ सिद्धियाँ मानी हैं। परन्तु उसके पीछे के ग्रन्थो ने चौतीस सिद्धियाँ मानी हैं। हिन्दू और बौद्ध तन्त्रों के विभिन्न आगमो के द्वारा निर्दिष्ट विधि एव साधनो का अनुसरण करने से इनमे से कुछ अथवा अधिक सिद्धियो का प्राप्त कर लेना सम्भव है। तन्त्रों का यह उद्घोष है कि जगत् के भौतिक साधनो की उन्नति द्वारा जो कुछ सम्भव हो सकता है, उसे एक ही व्यक्ति अपनी मानसिक शक्ति के विकास द्वारा सिद्ध कर सकता है।

तन्त्रो के प्रति सामान्यतया यह भ्रान्ति फैली हुई है कि तन्त्र वेदो से भिन्न हैं और इनमे अनार्यो के से आचरण एव व्यवहारो का दर्शन होता है। वस्तुत यह भ्रान्तिमात्र है। तन्त्र वेदबाह्य न होकर वेद-सम्मत हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि तन्त्र वेदो की तरह किसी भी वर्ण के लिये अग्राह्य नही है। तन्त्रो मे सर्वसाधारणजनो के लिये साधन का मार्ग प्रस्तुत किया गया है। वेद की क्रियाएँ सामान्यजनो के लिये अधिक परिश्रमसाध्य, व्ययसाध्य एव प्रतिबन्ध-

साध्य होने से उन क्रियाओं को यथाविधि सम्पन्न करना सहजसाध्य नहीं है। इसीलिये परमकारुणिक भगवान् शिव ने सहजसाधनगम्य तन्त्रों का प्रकटीकरण 'आगम' नाम से किया है।

तन्त्र की व्युत्पत्ति एवं परिभाषा

भारतीय कोशकारों के अनुसार 'तन्त्र' शब्द का प्रयोग आगम, सिद्धान्त, शिवमुखोक्तशास्त्र आदि के अर्थों में हुआ है, वामन, भट्टोजी दीक्षित आदि महावैयाकरण पण्डितों ने 'तन्त्र' शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार की है—'तनोति सर्वशास्त्राणां सिद्धान्तान् यतस्तन्त्रम्' अर्थात् जो समस्त शास्त्रों के सिद्धान्त अथवा निर्णयों का विस्तार करे उसे 'तन्त्र' कहते हैं।

प्राचीन शास्त्रों में यद्यपि तन्त्र-शब्द का प्रयोग अनेक विषयों के शास्त्रों के लिये हुआ है जैसे—'कपिलतन्त्र, वासिष्ठतन्त्र, जैमिनितन्त्र, पूर्वतन्त्र, उत्तरतन्त्र आदि'। तथापि इस शब्द का अधिकतर प्रचलन आगमशास्त्र, निगमशास्त्र अथवा शिवमुखोद्गीर्ण शास्त्र के लिये ही हुआ है—

आगतं शिववक्त्रेभ्यो गतञ्च गिरिजामुखम्।
मतञ्च वासुदेवस्य तस्मादागममुच्यते॥

(सिद्धसिद्धान्तसिन्धु पृ०–४२६)

× × ×

आगतं शिववक्त्राच्च गतञ्च गिरिजामुखे।
तेनागमानि तन्त्राणि कथितानि वरानने॥१२७॥

यानि कानि च शास्त्राणि कथितान्यागमस्य च।
तानि तानि प्रकथ्यन्ते कौलाचरणहेतवे॥१२८॥

(समयाचारतन्त्र)

निर्गतं गिरिजावक्त्राद् गतं च गिरिजाश्रुतौ।
मतं च वासुदेवस्य तस्मान्निगम उच्यते॥
आचारस्तु समन्ताच्च गम्यत इत्यागमः स्मृत.।
तनुते त्रायते नित्यं तन्त्रमित्यं विदुर्बुधाः॥

[श्रीमत्कारिशर्मलिखित भूमिका (दुर्गासप्तशती चौ० सम्वासस्कृत सीरीजी वाराणसी)]

तन्त्र की परिभाषा शास्त्रों में इस प्रकार प्राप्त है—

अस्य वामस्य सूक्तं तु जपेज्वान्यत्र वा जले।
ब्रह्महत्यादिकं दग्ध्वा विष्णुलोकं स गच्छति॥

अर्थात् इस वामसूक्त के पाठमात्र से ही विष्णुलोक की प्राप्ति अर्थात् 'तद्विष्णोः परम पदम्' के अनुसार विष्णुपदप्राप्तिरूपी मोक्ष की प्राप्ति होती है।

निरुक्त (निघण्टु) मे वामशब्द का अर्थ 'प्रशस्य' लिखा है—

'अस्मेमा. अनेमा·, अनेद्यः, अनवद्यः, अनभिशस्ताः, उक्थ्यः, सुनीथः, पाक., वाम·, वयुनमिति दश प्रशस्यनामानि।

यहाँ वामनाम प्रशस्य का द्योतक है और प्रशस्य प्रज्ञावान् ही होते हैं—य एव हि प्रज्ञावन्तस्त एव हि प्रशस्या भवन्ति'। इससे स्पष्ट है कि प्रज्ञावान् प्रशस्य योगी क नाम ही 'वाम' है और उस योगी के मार्ग का ही नाम 'वाममार्ग' है। इस मार्ग मे जितेन्द्रिय के लिये ही अधिकार की व्यवस्था है, न कि इन्द्रियलोलुप प्राणियो के लिये जैसा कि भगवान् शङ्कर का कथन है—

परद्रव्येषु योऽन्धश्च परस्त्रीषु नपुंसक.।
परापवादे यो मूकः सर्वदा विजितेन्द्रियः।
तस्यैव ब्राह्मणस्यात्र वामे स्यादधिकारिता।

(मेरुतन्त्र)

अर्थात् परद्रव्य, परदारा और परापवाद से विमुख, सयमी ब्राह्मण ही वाममार्ग का अधिकारी होता है।

अथ सर्वोत्तमो धर्मं शिवोक्तः सर्वसिद्धिद।
जितेन्द्रियस्य सुलभो नान्यस्यानन्तजन्तुभि.।

(पुरश्चर्यार्णव)

इसी प्रकार मेरतन्त्र आदि आगमग्रन्थो मे पञ्चमकारो की व्याख्या इस प्रकार की गई है—

मद्य मांसञ्च मीनञ्च मुद्रा मैथुनमेव च।
मकारपञ्चकं प्राहुर्योगिनां मुक्तिदायकम्॥

अर्थात्—मद्य, मास, मीन, मुद्रा और मैथुन ये पांच आध्यात्मिक मकार ही योगियो को मोक्ष देने वाले हैं।

व्योमपङ्कजनिष्यन्दसुधापानरतो भवेत्।
मद्यपानमिद प्रोक्तमितरे मद्यपायिनः॥

ब्रह्मरन्ध्र-सहस्रदल से जो स्रवित होता है उसे सुधा (अमृत) कहते हैं जिसे

कुलकुण्डलिनी द्वारा योगिजन प्राप्त करते हैं इसी का नाम मद्यपान है। इसके अतिरिक्त पीने वाला मद्यप कहलाता है।

अर्थात्–ब्रह्मरन्ध्र के सहस्रारकमलरूपी पात्र से जो ब्रह्माण्ड को तृप्त करने वाली सुधा-धारा बहती है वही पीने योग्य मद्य (मदिरा) है।

पुण्यापुण्यपशुं हत्वा ज्ञानखड्गेन योगवित्।
परे लयं नयेच्चित्तं मांसाशी स निगद्यते॥

अर्थात्—पुण्य-पापरूपी पशु को ज्ञानरूपी खड्ग से मार कर जो योगी मन को ब्रह्म मे लीन करता है, वही मांसाशी (मांसाहारी) है।

और भी—

कामक्रोधौ पशू तुल्यौ बलिं दत्वा जपं चरेत्।

× × ×

कामक्रोधसुलोभमोहपशुकांश्छित्वा विवेकासिना।
मांसं निर्विषयं परात्मसुखदं भुञ्जन्ति तेषां बुधाः॥

अर्थात्—विवेकी पुरुष काम, क्रोध, लोभ और मोहरूपी पशुओं को विवेक-रूपी तलवार से काट कर दूसरे प्राणियों को भी सुख देने वाले निर्विषयरूप मांस का भक्षण करते हैं।

मानसादीन्द्रियगणं संयम्यात्मनि योजयेत्।
स मीनाशी भवेद्देवि इतरे प्राणिहिंसकाः॥

मन आदि सारी इन्द्रियों को वश में करके आत्मा मे लगाने वालों को ही मीनाशी (मत्स्याहारी) कहते हैं इससे इतर जीवहिंसक हैं।

आशातृष्णाजुगुप्साभयविषयघृणामानलज्जाप्रकोपा
ब्रह्माग्नावष्टमुद्रा परसुकृतिजनः पच्यमानः समन्तात्।
नित्यं सम्भावयेत्तानवहितमनसा दिव्यभावानुरागी,
योऽसौ ब्रह्माण्डभाण्डे पशुहतिविमुखो रुद्रतुल्यो महात्मा॥

अर्थात्—आशा-तृष्णादि आठ मुद्राओं को ब्रह्मरूपी अग्नि मे अच्छी तरह पकाता हुआ दिव्य भाव का अनुरागी जो योगी पशु-हिंसा से पराङ्मुख होकर सावधान मन से भक्षण करे, वह महात्मा पुरुष संसार मे रुद्रतुल्य होता है।

या नाडी सूक्ष्मरूपा परमपदगता सेवनीया सुषुम्णा,
सा कान्ताऽऽलिङ्गनार्हा न मनुजरमणी सुन्दरी वारयोषित्।

कुर्याच्चन्द्रार्कयोगे सुषुम्नपवनगते मैथुनं नैव योनौ,
योगीन्द्रो विश्ववन्द्यः सुखमयभवने तां परिष्वज्य नित्यम् ॥

अर्थात्—परमानन्द को प्राप्त हुई सूक्ष्मरूपवाली सुषुम्णा नाडी है, वही आलिङ्गन करने योग्य उपभोग्या कान्ता है, न कि मनुष्यरूपा सुन्दरी वेश्या। सुषुम्णा का सहस्रचक्रान्तर्गत परब्रह्म के साथ संयोग का ही नाम मैथुन है, स्त्री-सम्भोग का नहीं।

और भी—

ध्यानं देव्याः पदाम्भोजे पञ्चमं परिकीर्तितम्।

अर्थात्—श्रीदेवी के श्रीचरणों का चिन्तन ही पञ्चम अर्थात् मैथुन है।

सांख्यायनतन्त्र

प्रस्तुत 'सांख्यायनतन्त्र' तन्त्रशास्त्र का ही सांख्यायनमुनिप्रोक्त[1] एक लघुग्रन्थ है। यद्यपि इसकी परिगणना *शिवमुखोद्गीर्ण नानागमों में वर्णित* ६४ तन्त्रों में तो नहीं की गई है, फिर भी यह मुनिप्रणीत होने के कारण उपतन्त्रों में अवश्य ही परिगणनीय है जैसा कि वाराहीतन्त्र[2] के निम्न पद्यों से स्पष्ट है—

बौद्धोक्ता-न्युपतन्त्राणि कापिलोक्तानि यानि च।
अद्भुतानि च एतानि जैमिन्युक्तानि यानि च॥
वसिष्ठ कपिलश्चैव नारदो गर्ग एव च।
पुलस्त्यो भार्गवः सिद्धो याज्ञवल्क्यो भृगुस्तथा॥
शुक्रो बृहस्पतिश्चैव अन्ये ये मुनिसत्तमाः।
एभिः प्रणीतान्यन्यानि उपतन्त्राणि यानि च॥
न संख्यातानि तान्यत्र धर्मविद्भिर्महात्मभिः।
साराःसारतराण्येव संख्यातानि विशेषतः॥

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि 'जगत् के भौतिक साधनों की उन्नति के द्वारा जो कुछ सम्भव हो सकता है उसे एक ही व्यक्ति अपनी मानसिक शक्ति के विकास द्वारा सिद्ध कर सकता है। इस मानसिक शक्ति को बढ़ाने का उत्तम साधन है—वाणी द्वारा अथवा मन ही मन मन्त्रों का उच्चारण करना। आगम-ग्रन्थों में ऋषि महर्षियों द्वारा सुदीर्घकाल

---

१. पप्रच्छ नारदो विप्रः सांख्यायनमुनिं प्रति।
उपदेशक्रमेणैव उक्तवान् मेरुकन्दरे ॥१५॥
तत्र देवीकटाक्षेण कृतवानागमं भुवि।
[सांख्यायनतन्त्र प्रथम पटल]

२. शब्दकल्पद्रुम—द्वितीयकाण्ड, पृष्ठ – ५८४।

तक अनुभूत एव सुपरीक्षित कुछ ऐसे शब्दो एव शब्दसमूहो का निर्देश किया गया है जिन्हें 'बीजमन्त्र', 'हृदयमन्त्र' अथवा 'मालामन्त्र' कहा गया है[1]। इन मन्त्रो का निश्चित सख्या मे जप करने से (उच्चारण करने से) निश्चित ही अपने उद्देश्यो (मनोरथो) की प्राप्ति होती है जैसा कि निम्नोक्ति से स्पष्ट है– 'एक. शब्द' सुप्रयुक्त स्वर्गे लोके च कामधुग्भवति'।

प्रस्तुत ग्रन्थ इसी का एक ज्वलन्त उदाहरण है जिसमे नारदोपासिता श्री-बगलामुखीदेवी की पञ्चाङ्गोपासना-विधि के साथ ऐसे विशिष्ट १५ मन्त्रो के प्रयोग-विधान बतलाये गये हैं जिनके द्वारा साधक (उपासक) मनुष्य अत्यन्त विस्मयोत्पादक अलौकिक शक्तियो (सिद्धियो) को अर्जित कर अपनी समस्त अभिलाषाओ को प्राप्त कर सकता है।

श्रीबगलामुखी

श्रीबगलामुखी आगमग्रन्थो मे वर्णित दश महाविद्याओ[2] मे अन्यतम है जिसे इस तन्त्र मे ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनीविद्या, स्तब्धमाया, प्रवृत्तिरोधिनी, बगला, मन्त्रजीवनविद्या, प्राणिप्राणापहारिका एव षट्कर्माधारविद्या के नाम से अभिहित किया गया है—

ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनी विद्या स्तब्धमायामनुत्तया।
प्रवृत्तिरोधिनी विद्या बगला च कुमारक ॥९॥
मन्त्रजीवनविद्या च प्राणिप्राणापहारिका।
षट्कर्माधारविद्या च ये ते पर्यायवाचका. ॥१०॥

(प्रथम पटल)

ऐसा प्रतीत होता है कि निगमशास्त्रोक्त वल्गा'[3] ही आगमशास्त्रो की बगलामुखी है क्योकि सस्कृतभाषा मे जैसे 'हिंस' शब्द वर्णव्यत्यय होने के कारण 'सिंह' और लौकिक भाषा मे 'मतलब' मतबल बन जाता है वैसे ही निगम की

---

१. विंशत्यर्णाधिका मन्त्रा मालामन्त्रा इति स्मृताः।
दशाक्षराधिका मन्त्रास्तदर्वाग्बीजसंज्ञिता.। (सिंहसिद्धान्तसिन्धु पृष्ठ २९५)

२. काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश महाविद्या. सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः ॥ (प्राणतोषिणी, पृष्ठ-७१७)

३ यदा वै कृत्यामुत्खनन्ति अथ सालसा मोघा भवति। तथो एवैष एतद्यस्मा अत्र कश्चिद् द्विषन् भ्रातृव्य. कृत्या वल्गा निखनति तानेवैतदुत्किरति ॥ (शतपथब्राह्मण–३।५।४।३)

ख. ग्रथाङ्क–५५८५; लिपिकाल १६वी शताब्दी (विक्रम), पत्र-सख्या ५१; माप–३४'५+१३' से. मी; पक्ति–९, अक्षर ३६; दशा–सुन्दर, सुवाच्य एव अपेक्षाकृत शुद्ध प्रति।

ग. ग्रथाङ्क–१८३६५; लिपिकाल–स० १७९६ (विक्रम) पत्रसख्या ४२; माप–२३'×१२'५ से. मी., पक्ति–१२; अक्षर ३३, दशा–कुछ जीर्ण, सुवाच्य किन्तु अशुद्ध।

घ ग्रन्थाङ्क–१८३६३, लिपिकाल–१६वी शताब्दी (विक्रम) पत्र सख्या–१२४, पक्ति–९, अक्षर–१६, दशा–ठीक-ठीक है, सुवाच्य किन्तु अशुद्ध प्रति है।

रा० श्रीरामकृपालु शर्मासग्रह ग्रन्थाङ्क–माप–२२'×१०'८, लिपिकाल–स० १९२९ (विक्रम) पत्रसख्या–४६, पक्ति–८ अक्षर–४२, दशा–जीर्ण, सुवाच्य एव अशुद्ध प्रति है।

आभार-प्रदर्शन

मैं राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के निदेशक समादरणीय डॉ० फतहसिहजी का विशेष आभारी हू जिनके सत्परामर्श एव सत्प्रेरणा से इस अतिविलम्बित ग्रथ का सपादन-कार्य पूर्ण कर सका। जयपुर-निवासी प० श्रीरामकृपालुजी शर्मा का भी मैं विशेष आभार मानता हूँ जिन्होंने अपने सग्रह म से ढूढ कर इस ग्रन्थ की प्रति हमे अर्पित की। साथ ही मैं प्रतिष्ठान के सहयोगी विशेषत पुस्तकालय-सहायक श्रीमती गणेशी थानवी एवं प्रति-लिपिकर्त्ता श्रीनरेन्द्रकुमारसिंह को भी साधुवादो से सत्कृत करता हूँ जिन्होंने पद्यानुक्रम बना कर मुझे सहयोग दिया। अन्त मे मैं साधक विद्वानो से सनम्र प्रार्थना करता हूँ कि इस ग्रन्थ मे दृष्टि-दोष एव चित्तचाञ्चल्यवश यदि कोई त्रुटि रह गई हो उसका वे समाधान करते हुये 'समादधतु सज्जना.' के अनुसार, मुझे क्षमा करे।

कार्तिक शुक्ल एकादशी
विक्रम सवत् २०२६

विदुषामाश्रवो
गोस्वामी लक्ष्मीनारायणदीक्षित

विषयानुक्रमः



शुद्धिपत्रम्

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
१६	१२	चान्य	चान्ये
१८	११	तलतैलेन	तिलतैलेन
२१	७	घातोदरी	घालोदरी
२१	२६	विविखेत्	विलिखेत्
२४	१३	०वाकुपतिस्तुवा	०वाक्पतिस्तु वा
२७	२८	ऋपिसस्यया	ऋपिसस्यया
२७	२९	सक्ष्मीवान्	लक्ष्मीवान्
३१	१७	दाभिघातेन	गदाभिघातेन
३५	१७	सस्मरेत् १६[१]	सस्मरेत्[१६, १७]
३८	६	लकार	सकार
३८	७	ह्लं	ह्लं
३८	१९	गदा	गदा
४१	२०	मनुः[४५]	मनुः[१५]
४३	३	तन्त्रराज०	मन्त्रराज०
४५	१	०जिह्वाभेदानार्थं	०जिह्वाभेदनार्थं
५०	२०	जिह्वास्तम्भ	जिह्वास्तम्भ
५२	५	सदाहः	स दाहः
५२	७	०मूर्ध्दनि	०मूर्द्ध नि
५२	२३	३. घ. पुस्तक्के	३. घ. पुस्तके
६१	३	जिह्वास्तम्भन०	जिह्वास्तम्भन०
६४	१५	सक्षण	लक्षण
६४	२५	विरोशो	विरोपो
६४	२६	तु	तु
६७	२१	वन्यस्यता	विन्यस्यता
६७	२६	छन्दो ग्र	छन्दोऽग्र
६८	१३	द्रावर्णदेवताम्	हरिद्रावर्णदेवताम्
६८	२४	॥२॥	॥२२॥
७२	२	ग्रम्युत	ग्रयुत
७४	२	॥६॥	॥३॥
७५	१६	ध्यानपूर्वंरम्	ध्यानपूर्वकम्
७६	१३	चतर्पणम्	च तर्पणम्
८३	२५	ततत्फल०	ततत्फल०
८४	२	मण्डलातद्०	मण्डलात्तद्०

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
८५	२२	॥२२॥	॥२३॥
८७	३०	२२. ०तद्याशश्च	२२. रा० ०तद्याश च
८८	१६	॥१७॥	॥१८॥
८८	३१	१६. रा. तु षण्मास	१६. रा. श्लोकार्द्धमिद नास्ति
८६	२५	८. रा. यद्दूण०	८. रा. यद्द्वण०
६१	२३	परम	परम्
६२	१२	कृलिमैः	कृत्रिमैः
६२	१६	निश्चतम्	निश्चितम्
६२	२६	विशोपोऽय	विशेपोऽय
६३	१०	शवि लिखेद्	श विलिखेद्
६३	१०	चयथाक्रमम्	च यथाक्रमम्
६३	२१	नार्जयेद्	नार्चयेद्
६३	२६–३०	१५ १६. १७	१४. १५. १६.
६६	१६	योगो य	योगोऽय
६७	शीर्ष	त्रयस्त्रिशः	चतुस्त्रिशः
			पञ्चत्रिंशः
६६	"	"	षट्त्रिंशः
१००	६	षट्त्रशः	षट्त्रिंशः
१०१	शीर्ष	द्वात्रिंशः	षट्त्रिंशः
१०३	"	चतुस्त्रिंश.	पञ्चत्रिंशः
१०४	५	मध्यमागे	मध्यभागे
१०७	२०	ॐ बीज	ॐ बीज
११०	७	ज्वालामुख्यस०	ज्वालामुख्यस्त्र०
११०	१०	ऋष्यादि०	ऋष्यादि०
११०	१६	श्रीबहद्भानुमुख्यस०	श्रीबृहद्भानुमुख्यस्त्र०
११०	२६	ग्राह्माणि	ग्राह्याणि
११०	२६	ह्लींह्लोंह्लूं बगला०	ह्लींह्लोंह्लूं बगला०
११२	७	हुँ फट् स्वाहा	हुँ फट् स्वाहा
११२	६	परविद्यामक्षिणी	परविद्याभक्षिणी
११३	२६	कीलक्काय	कीलकाय
११५	६	०बगलास्त्रोपसहार०	बगलास्त्रोपसहार०
११५	१८	ॐ शिखायै	ॐ क्रूं शिखायै
११७	१६	विघ्नैर्ना०	विघ्नैर्ना०
११८	२१	मन्त्ररूप	मन्त्ररूपं
११८	२२	ज्ञेय	ज्ञेयं

शुद्धिपत्रम्

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
१३०	१	फ बं	फ व
१२२	१४	नगात्मने	नमात्मजे
१२३	७	बीज	वीज
१२३	२४	०स्थितिध्वसने	स्थितिध्वसने
१२४	१५	०सस्तम्भन	सस्तम्भनम्
१२५	८	वान्त	वात
१२५	१०	०सुदुर्लभ	सुदुर्लभ
१२५	२५	०मतीन्द्रिय	मतीन्द्रिय
१२५	२६	१ त्यपि पाठ.	इत्यपि पाठ.
१२६	७	हृद्य	हृद्य
१२६	८	गोप्यतम	गोप्यतम



सांख्यायनतन्त्रम्

॥ श्रीः ॥

सांख्यायनतन्त्रम्

॥ अथ प्रथमः पटलः ॥

श्रीशिवाय नमः ॥[1] पीतांबरायै नमः ॥[2]

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेद्यां
सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं[3]
देवीं भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥१॥

क्रौञ्चभेद उवाच—[4]

कैलाश(स)शिखरासीनं गौरीवामाङ्कसंस्थितम्[5] ।
भारतीपतिवाल्मीकि-[6]शेषसंयुतमीश्वरम् ॥२॥
अष्टदिक्पालकोशाष्ट-[7]विघ्नेशाष्टकसेवितम् ।
भैरवाष्टवृतं[8] देवं मातृमण्डलवेष्टितम् ॥३॥
महापाशुपताक्रान्तं[9] प्रमथैरावृतं प्रभुम् ।
नत्वा स्तुत्वा कुमारश्च[10] इदं वचनमब्रवीत् ॥४॥
चापचर्यासुनिपुणैर्युद्धचर्याभयङ्करैः ।
नानामायाविना चैव[11] जेतुमिच्छामि[12] राक्षसान्[13] ॥५॥
तस्योपायं च तद्विद्यां वद मे करुणाकर ।
पुत्रोऽहं तव शिष्योऽहं कृपापात्रोऽहमेव च ॥६॥

ईश्वर उवाच—[14]

साधु साधु महाप्राज्ञ क्रौञ्चभेदन[15]कोविद ।
ब्रह्मास्त्रेण विना शत्रुसंहारो[16] न भवेत्कलौ ॥७॥

---

१ ख घ श्रीगणेशाय नमः ; ग. श्रीशिवो जयत. । २ क. पीतांबराय नमः ; घ. नास्ति । ३ ग. ०विभुषितांगी । ४ ख घ क्रौंचभेदन उवाच : ग. क्रौंचभेदनोवाच । ५ घ. ०वामाङ्कसंस्थितम् । ६ ख. ०वाल्मीकी० ; ग. ०वाल्मिकी ; घ. वाल्मीक । ७. ख.ग.घ. अष्टदिक्पालकैशाष्ट० । ८ ख.ग. भैरवाष्टकवृतं ; घ. भैरवाष्टयुतं । ९ ग. महापशुपताक्रान्तम् ; घ. महापाशुपताक्रांतं । १० घ कुमारोपि । ११ ख नानामायाविनश्चैव ; घ नानामायाविन जेतुं । १२ घ. ज्ञातुमिच्छामि । १३ ख घ राक्षसान् ; घ राक्षसा । १४ ग ईश्वरोवाच । १५ घ. भदेन । १६ क.ग घ शत्रुसंहार ।

तद्विद्यां च प्रवक्ष्यामि त्रिषु लोकेषु दुर्लभाम् ।
पुत्रो देयः शिरो देयं न देया यस्य कस्यचित् ॥८॥
ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनी विद्या स्तब्धमायामनुस्तथा ।
प्रवृत्तिरोधिनी विद्या बगला च कुमारक !॥९॥
मन्त्रजीवनविद्या च प्राणिप्राणापहारिका ।
पट्कर्माधारविद्या[1] च ये ते[2] पर्य्यायवाचकाः ॥१०॥
पट्प्रयोगास्त्रयो विद्या ये विद्यागमभूषिताः ।[3]
तिरस्कृताखिला विद्या त्रिशक्तिमयमेव[4] च ॥११॥
स्तम्भनेन विना शान्तिर्वश्यञ्चैव तु तद्विना ।
मोहनाकर्पणञ्चैव विद्वेषोच्चाटनन्तथा[5] ॥१२॥
मारण भ्रान्तिरुद्वेगकारण[6] च कुमारक ।
विद्या च बगलानाम्नो मुनिगुह्य सुपावनम् ॥१३॥
विना च स्तम्भिनीविद्या "न विद्या च प्रभासते ।
तस्मादेव[7] महाविद्या[8] कमलासनजीवनम्[9] ॥१४॥
पद्मजो नारदो विद्या" साख्यायनमुनि प्रति ।
उपदेशक्रमेणैव उक्तवान्मेरुकन्दरे ॥१५॥
तेन देवीकटाक्षेण कृतवानागम भुवि ।
मूलमंत्रोपविद्याश्च[10] अङ्गमन्त्राश्च विस्तरात् ॥१६॥
प्रयोग चोपसहार[11] तदाराधनतद्गुणम्[12] ।
विस्तरेणोक्तवानस्मि वक्ष्ये तत्सर्वमादरात् ॥१७॥
स्वमन्त्राक्षरणी[13] विद्या स्वमन्त्रफलदायका[14] ।
स्वकीर्त्तिरक्षिणी विद्या शत्रुसहारकारिका[15] ॥१८॥
परविद्याछेदन[16] च परयन्त्रविदारणम्[17] ।
परमन्त्रप्रयोगेपु सदा विध्वसकारकम्[18] ॥१९॥

---

१. ग. पट्कर्माहार० । २ ख.घ एते । ३. ख पट्प्रयोगाथया विद्या षड्विद्यागमभूपिताः । ४. ग त्रिरात्रिमयमेव । घ. त्रिशक्ति खलु मेव । ५. ग. तद्वेषोचाटन० । ६. घ भ्रांतिमु० । "-" चिन्हान्तर्गतोऽशः घ पुस्तके नास्ति । ७ ख. तस्मादेता । ८. ख. ०विद्या । ९ ०प्र जीवनी । १० ग घ. ०विद्या च । ११. ग. चोपहार । १२ घ. ०लक्षणम् । १३. ख स्वमन्त्ररक्षणी , घ. स्वविद्यारक्षणी । १४. ख. ०दायिका , ग ० दायका । घ ० दायिनी । १५. ग. ०कारक ; घ. ०कारिणी । १६. ख घ. ०छेदनी । १७. ख घ. ०विदारिणी । १८ ख. ०कारिका ; घ. ०कारिणी ।

परानुष्ठानहरण[1] परकीर्त्तिविनाशनम्[2] ।
परापजयकृद्[3] विद्या परेषा भ्रमकारणम्[4] ॥२०॥
ये वा विजयमिच्छन्ति[5] ये वा जेतु क्षय[6] कलौ ।
ये वा क्रूरमृगेन्द्राणा[7] क्षयमिच्छन्ति मानवाः ॥२१॥
ये(य इ)च्छन्त्याकर्षशान्त्यादि[8] वश्य सम्मोहनादिकम् ।
विद्वेषोच्चाटन प्रीति तेनोपास्यस्त्वय मनु[9] ॥२२॥
सत्सम्प्रदायविधिना[10] सद्गुरोर्मुखतस्तथा ।
उपदेशक्रमेणैव गृहीत्वा साधयेन्मनुम् ॥२३॥
कुलाचारसमायुक्तः[11] कुलमार्गेण पुत्रक ।
दीक्षा कुलगुरोर्योगात् गृहीतव्या सुबुद्धिना[12] ॥२४॥
साधयेत्कुलमार्गेण तेन मन्त्र प्रयोजयेत् ।
उपसहारण[13] तेन कर्त्तव्य कुलयोगिना ॥२५॥
सौभाग्यचर्यासमायुक्त[14] सदा तर्पणपूर्व्वकम् ।
सदा पूजासमायुक्त[15]र्विन्तित भवति ध्रुवम् ॥२६॥
ऋषिसिद्धामरैश्चैव विद्याधरमहोरगैः ।
यक्षगन्धर्वनागैश्च पिशाचब्रह्मराक्षसैः[16] ॥२७॥
पञ्चेन्द्रियैश्च सञ्चार सद्यो नाशकरो[17] मनुः[18] ।
पिण्डजाण्डजजीवैश्च किम्पुनः क्रौञ्चभेदन[19] ॥२८॥

इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे प्रथम पटलम्[20] ॥१॥

॥ अथ द्वितीयः पटलः ॥

जिह्वाग्रमादाय करेण देवी वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम्[21] ।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्या द्विभुजा नमामि ॥१॥

---

१. ख. ०हारिणी । २. ख. ०विनाशनी । ३. घ परापजयिनी । ४. ख. ०कारणी ; ग घ ०कारकम् । ५ घ विलय० । ६. ख. ग. जतुक्षय । ७. घ. क्रूरमृगश्चैव । ८. ख घ. इच्छन्ति शान्तिकर्माणि; ग येच्छन्ति शान्तिकर्माणि । ९. क ग. ०मिद मनु. ; घ. मिद मनु । १०. घ. तत्संप्रदाय० । ११. क. ख समायुक्तो ; १२ घ. सुबुद्धिमान् । १३. घ. उपसहरण । १४ ग ०समायुक्तो । १५. ग समायुक्तः । १६. ग पीशाचा० । १७. क. ग. घ. नाशकर । १८. ग मुनिः ; घ. मनु । १९. ग. ०भेदन. ; घ भेदेन । २०. ख. ग. प्रथमपटलम् ; घ. मत्रवर्णन नाम प्रथमः पटलः । २१. ग. परिपीडयति ।

क्रौञ्चभेद उवाच[1]—

नमस्ते पार्वतीनाथ नमः पन्नगकङ्कण ।
वद दीक्षाविधिं तात तत्सर्वं स्तम्भनादय.[2] ॥२॥

ईश्वर उवाच[3]—

पुस्तके लिखितान्मन्त्रानवलोक्य जपेत्तु य.[4] ।
स जीवन्नेव चण्डालो मृत.[5] श्वानो भविष्यति ॥३॥

दीक्षामार्गं विना मन्त्र शैव शाक्तञ्च[6] वैष्णवम् ।
यो जपेत्त दहत्याशु देवता च जुगुप्सति ॥४॥

दीक्षाविधि विना मन्त्र यो जपेत्कोटिकोटय ।
न स सिद्धिमवाप्नोति सिन्धुसैकतवर्षवत्[7] ॥५॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन दीक्षा कुलगुरोर्मुखात् ।
उपदेशक्रमणैव मन्त्रसङ्ग्रहण चरेत् ॥६॥

वेदवेदाङ्गपारज्ञ वेदान्तार्थसुनिश्चितम् ।
वैदिकाचारसयुक्त कुर्याद् गुरुमतन्द्रित ॥७॥

गर्भकौलागमासक्त[8] नानाकौलपरायणम् ।
अष्टपाशविनिर्मुक्त कुर्याद् गुरुमतन्द्रित[9] ॥८॥[10]

पुरश्चरणकृत्सिद्धमन्त्रागमविशारदम् ।
उद्धर्तुं चैव सहर्तुं समर्थं सत्यवादिनम् ॥९॥

प्रस्थानज्ञानपारीण[11] नीतिशास्त्रार्थकोविदम् ।
श्रीविद्यामयमन्त्रज्ञ कुर्याद् गुरुमतन्द्रित[12] ॥१०॥

चक्रपूजासमायुक्त(क्तो)न्यासविद्याविशारदम्(द) ।
गुरर्यत्नाच्च[13] वक्तव्य[14] सतत सिद्धिकाक्षिभि.[15] ॥११॥

१. ख घ. क्रौञ्चभेदन०, ग क्रौञ्चभेदनोवाच । २ ख. स्तम्भनादिकम्, घ स्तम्भनादिनयो । ३. घ ईश्वरोवाच । ४ ख जपेच्च य, ग जपन्ति ये, घ जपति य । ५ ग घ मृत । ६ घ वा शाक्त । ७ घ सिन्धो० । ८ घ गुरुसेवा-समासक्त । ९ ग ०मतन्द्रित । १०. श्लोकोऽय ख पुस्तके नास्ति, घ पुस्तके विशेषतोऽवलोक्यतेऽय श्लोक —"घृणा शङ्का भय लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमम् । कुल शील च मान च अष्टपाशा[न्] विवर्जयेत्" ॥ ११ ख. प्रस्थान० ; घ स्वस्थान० । १२ घ. ०मत न्द्रितम् । १३ क घ गुरु०, ग गुरु० । १४ ग कर्तव्या; क घ कर्तव्यं । १५ घ सिद्धिकाक्षिण ।

गुरुशुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा ।
अथवा विद्यया विद्या चतुर्थं नोपलभ्यते ॥१२॥
शुश्रूषया गुरु सम्यक् तोषयेच्छिष्य अन्वहम्[1] ।
प्रसन्नचेतसा दत्त मन्त्रमुत्तममर्भक[2] ॥१३॥

स्वल्पं वा बहुलं चाथ शिष्यद्रव्य गुरुः स्वयम् ।
गृहीत्वा मन्त्रमादत्ते विक्रीत तदुदाहृतम् ॥१४॥
राजस चैव तद्विद्याद्[3] भोगद भुवि पुत्रक ।
विद्याप्रतिनिधि विद्या[द्] यद्दत्त[4] तामस मतम्[5] ॥१५॥

मोक्षार्थी च गुरुं यस्मात् शुश्रूषेणैव तोषयेत् ।
शुश्रूषेणैव यल्लब्ध[6] तद्विद्यात्[7]सर्वसिद्धिदम्[8] ॥१६॥
नो देयं (या)[9] विद्यया विद्या वित्तकाङ्क्षी तथैव च ।
सच्छिष्याय प्रदातव्य[10] धनदेहाद्यवञ्चकः ॥१७॥

दुरालापसमायुक्त दुर्गुणेन समन्वितम् ।
सर्वथा वर्जयेच्छिष्य स्वगुरोर्वाभिमानिनम्[11] ॥१८॥

भ्रष्टपाशसमायुक्त भ्रष्टाचारसमन्वितम् ।
सर्वदा वर्जयेच्छिष्य गुरुसेवाविवर्जितम्[12] ॥१९॥[13]

निर्मत्सर निरालम्ब नीतिशास्त्रविशारदम् ।
नित्यानित्यविवेक च शिष्यत्वेनोपकल्पयेत् ॥२०॥

श्रद्धाभक्तिसमोपेत धनदेहाद्यवञ्चितम्[14] ।
भ्रष्टपाशविनिर्मुक्त शिष्यत्वेनोपकल्पयेत् ॥२१॥

गुरुशिष्यावुभौ मोहादपरीक्ष्य[15] परस्परम् ।
उपदेश ददन् गृह्णन् प्राप्नुयात्तौ पिशाचताम् ॥२२॥

इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे द्वितीय पटलम्[16] ॥

---

१. ख. तोषयच्छ्ष्ठमन्वहम्; ग तोषयेच्छिष्यमन्वहम्; घ सतोष्याभीष्ट-सिद्धिदम् । २. ख ०मर्भकः । ३. क.ख.ग. तद्विद्या । ४. घ. तद्दत्त । ५ घ. स्मृतम् । ६. ग. यल्लम्य; घ. य लब्ध्वा । ७. क. ग. तद्विद्या; घ सा विद्या । ८ घ. सर्वसिद्धिदा । ९ ग. नोपदेय । १०. घ. प्रदातव्या । ११. घ गुरुसेवाभिमानिनम् । १२. ग. घ. गुरुसेवाभिमानिनम् । १३. घ पुस्तके विशेषोऽय श्लोकः—

'कामुक काञ्चनासक्त करुणालयवर्जितम् ।
सर्वदा वर्जयेच्छिष्य गुरुसेवाभिमानिनम्' ॥

१४. ख. घ. ०वञ्चकम् । १५. ख. ०दपरोक्ष्य; ग. ०दपरास । १६. ख. घ. द्वितीयः पटल. ।

॥ अथ तृतीयः पटलः ॥

चलत्कनककुण्डलोल्लसितचारुगण्डस्थलां[1]
　　लसत्कनकचम्पकद्युतिमदिन्दुबिम्बाननाम् ॥
गदाहतविपक्षका कलितलोलजिह्वाञ्चला[2]
　　स्मरामि बगलामुखीं विमुखवाङ्मुखस्तम्भिनीम्[3] ॥१॥

क्रौञ्चभेद उवाच—[4]

पूजाधारणयन्त्रज्ञ[5] सर्वमन्त्रविशारद ।
अभिषेकविधिं तात वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच[6]—

आश्विने कार्त्तिके चैव[7] चैत्रमासे[8] कुमारक ।
कुर्युस्तमभिषेकं[9] च मानवाः[10] सिद्धिकाङ्क्षिणः[11] ॥३॥

रवौ गुरौ भृगावब्जवासरे[12] च कुमारक ।
मन्त्राभिषेकं कर्त्तव्यं सततं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥४॥

रोहिणीश्रवणे चैव पुष्ये[13] चैव विशाखयोः ।
मन्त्राभिषेकं कर्त्तव्यं सदा[14] सिद्धिकरं भुवि ॥५॥

एवं शुद्धदिने[15] सम्यक् पूर्वेऽह्नि[16] समुपोषितम् ।
स्नापयेत्पञ्चगव्येन ततश्चामलकेन तु ॥६॥

ततः शिष्यं समानीय[17] देवतासन्निधौ पुनः ।
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं गायत्रीजपमाचरेत्[18] ॥७॥

देवस्यैशानभागे तु गोमयेनोपलेपितम्[19] ।
रङ्गवल्ल्या लिखेद्यन्त्रं रक्तपीतसितासितैः ॥८॥

---

१ ग. पुस्तके 'चलत्कनककुण्डलो' इत्यस्मादग्रेतनपद्यांशो नास्ति । घ चलत्कनककुण्डला लसत्० । २. घ. कलितवैरि० । ३ ख. घ. विमुखवाङ्मन । ४. ख. घ क्रौञ्चभेदन उवाच, ग. क्रौञ्चभेदनोवाच । ५ क पुस्तके 'पूजा' स्थाने 'पूज्य' एवं घ [illegible] पुस्तके 'यन्त्रज' स्थाने 'यन्त्रज्ञ' इति शब्दो स्तः । ६. ग. पुस्तके 'क्रौञ्चभेदनोवाच' तथा च 'ईश्वरोवाच' इत्येवाय प्रयोग सर्वत्र दृश्यते; अतोऽग्रे एतच्छब्दयो रेप एव पाठान्तर ऊहनीयो विद्वद्भिरिति ७ ख. चैत्रे । ८. ख वैशाखे तु । ९ ख ग. कर्त्तव्यमभिषेक, घ कर्त्तव्य चाभिषक । १०. ख. ग मानवै । ११ ख. ग सिद्धिकाङ्क्षिभिः । १२ ग भृगा[वि]दौ०; घ भृगौ इदु० । १३ ग. स्वार्ती । घ सार्पं । १४ ग. सर्वं । १५. ग सिद्धिदिने । १६ ग पूर्वेवह्नि, घ. पूर्वाह्ने । १७ ग घ समानीत्वा । १८. घ. गायत्रीं वदमातरम् । १९. क. ग. ०लेपिताम्, ख. ०लेपयेत् ।

षोडशाङ्गुलमान[1] तु लिखेद् विन्दुमनन्यधी ।
ततो(तदु)परि लिखेद् वृत्त[2]मष्टपत्र तु शोभनम् ॥९॥
प्रियङ्गुशालिगोधूमचरणकाटकमाषकं[3] ।
कुलत्थमुद्गनीवारं[4] क्रमान्मध्यादि विन्यसेत ॥१०॥
प्रस्थ चैव चतुर्विंश प्रत्येक धान्यमेव च ।
अव्रण स्थूलकलश मध्ये संस्थाप्य बुद्धिमान् ॥११॥
अष्टपत्र[5] न्यसेत्पुत्र कलशाष्टकमादरात् ।
क्षालित[6] वासित[6] शुद्ध कलश च समर्पयत्[7] ॥१२॥
षोडशैरुपचारश्च धूपाद्यनव[8]विन्यसेत ।
आपोवानेन पूर्येत नदीजसमकल्मषम् ॥१३॥
नि क्षिपेन्नवभाण्डषु नवरत्नान् कुमारक ।
कस्तूरीचन्दनोपेतान्[9]नवभाण्डेषु नि क्षिपेत ॥१४॥
मध्ये देवी समावाह्य चिन्मयी बगलामुखीम ।
प्राणस्थापनमार्गेण केरलोक्तविधानत ॥१५॥
वाणी चैव रमा गौरी शची स्वाहा रतिस्तया ।
दुर्गा छाया[10] समभ्यच्य पूर्वाद्यष्टकपत्रयो[11] ॥१६॥
अर्चयेत्पूववत्पुत्र केरलोक्तविधानत ।
नवीननवसस्याकवस्त्रणव तु वेष्टयत ॥१७॥
सुगन्धपत्रपुष्पादीन्[12] विन्यसेत्कलशान्तरे ।
तत्र शिष्य[13] समानीत्वा(य)ऋत्विग्वरणमाचरेत् ॥१८॥
वेदवेदागपारीणमष्टौ[14] ब्राह्मणमादरात् ।
प्रार्थयद्युग्मसयुक्त[15]मचयद्वस्त्रभूषणं ॥१९॥
शाकुनादिषु मन्त्रषु प्रथम कलशमाजनम्[16] ।
लक्ष्मीसूक्तेन श्रीयुक्त[17] द्वितीय कलशन्तथा[18] ॥२०॥

---

१ ख ०माने । २ ख ०पद्म । ३ ग घ चणकाढकमाषको । ४ घ ०नीवारा । ५ ख मत्र पत्र । ६ क चासित । ७ ख ग घ समचयत । ८ घ धूपाद्यं परि । ९ घ ०चन्दनोपेत । १० घ पुस्तके वाण्यादिशब्दा द्वितीया ता दृश्य ते । ११ घ पूर्वाद्यष्टकसिद्धम । सुगन्धि पुत्र० , घ सुगध पुत्र पुष्पादि । १३ ग शिषां । १४ घ ०पारीणानष्टौ । १५ घ ०दक्ष्यसयुक्त० १६ घ कुम्भ मार्जनम् । १७ घ श्रीयुक्तं । १८ घ कुम्भमाजनम् ।

पौरुषेणैव सूक्तेन तृतीयं कलशं तथा[1] ।
नारायणानुवाकेन[2] चतुर्थं रुद्रसूक्तकैः[3] ॥२१॥
पञ्चब्रह्ममयैर्मन्त्रैः[4] पञ्चमं कलशं तथा ।
षष्ठं चाम्भस्यवारेण[5] ब्रह्मवल्ल्या च[6] सप्तमम् ॥२२॥
अष्टमं कठवल्ल्या[7] च मार्जयेन्मन्त्रकोविदः[8] ।
मध्यमं[9] पूर्वकलशं[10] मूलमन्त्रेण[11] मार्जयेत् ॥२३॥
एवञ्च मार्जनं कृत्वा नवीनैर्वस्त्रभूषणैः ।
अलङ्कृत्वा तु शिष्यं[12] तमानीय[13] मण्डपान्तरे ॥२४॥
वामोरूपरि विन्यस्य मूर्द्धनि चाघ्राय सादरात् ।
एकैकं च पुरश्चर्यामूलमन्त्रं कुमारकं ॥२५॥
स हिरण्योदके पूर्वं दद्याच्छिष्याय पुत्रकं ।
स्वहृत्कमलमध्यस्था विद्या ज्योतिर्मयी पुनः ॥२६॥
शिष्यस्य हृदयं चैव प्रविशन्तीति भावयेत् ।[14]
तद्वच्छिष्यस्तु[15] सभाव्य गुरुं यत्नेन तोषयेत् ॥२७॥
एवं मन्त्राभिषेकञ्च[16] कुर्याद् ब्रह्मास्त्रविद्यया ।
सद्यः[17] सिद्धिर्भवेत्पुत्र पुरश्चर्यां विना[18] भुवि ॥२८॥

इति षड्विद्यागमे[19] सांख्यायनतन्त्रे तृतीयं पटलम्[20] ॥३॥

---

१. ग कुम्भमार्जनम् । २. ख. ॰नुवाकेन; ग नुवाकेन, घ पाठोऽत्र नास्ति । ३. ख ग कलशं तथा ; घ. कुम्भमार्जनम् । ४ घ ॰ब्रह्ममयी॰ । ५ ख. चाभंस्य चारेण ; घ चांदस्य पारेण । ६ ख. ग. ब्रह्मवल्ल्या च ; घ ब्रह्मवल्ल्या तु । ७. ख. ग कठवल्ल्या ; घ भृगुवल्ल्या । ८. घ अथवा कठोरेन च । ९. घ. मध्यस्थं । १० ग घ पूर्णकलशं । ११ घ मूलमन्त्रेण । १२. घ सुशिष्यं । १३. घ आनीय तं । १४ घ. पुस्तकेऽत्र विशेष पाठ —

"कर्मयोग तत्र उक्त्वा त मन्त्राणां पदे पदे ।
षष्ठकुम्भोदकं दत्त्वा मन्त्रं च विशावयत् ॥
विद्यारूपे भवेत् पुत्र सामान्यं परिकल्पयेत् ।"

१५. घ तद्वच्छिष्य तु । १६ घ मन्त्राभिषिक्त च । १७ घ. सर्वं । १८ घ पुरश्चर्यादिना । १९ ख. ॰गमरहस्य । २० घ ॰त्रीय विधिस्तृतीयपटल ।

॥ अथ चतुर्थः पटलः ॥

पीयूषोदधिमध्यचारुविलसद्रत्नोज्ज्वले मण्डपे,
श्रीसिंहासनमौलिपातितरिपुप्रेतासनाध्यासिनीम् ।
स्वर्णाभा करपीडितारिरसना भ्राम्यद्गदा बिभ्रती,
स्वप्ने[1] पश्यति तस्य याति विलयं सद्योऽम्ब[2] सर्वापदः ॥१

क्रौञ्चभेद(दन) उवाच—

[3]गङ्गाधर नमस्तेऽस्तु गौरीपति[3] नमो नमः ।
ब्रह्मास्त्रमन्त्रसंध्या च वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

मन्त्रमध्यापयेत्[4] सम्यक् शिष्यस्य गुरुरादरात् ।
सदारब्ध[5] तु तन्मन्त्र[6] मन्त्रसन्ध्या समाचरेत्[7] ॥३॥
तन्मन्त्रसंध्या वक्ष्यामि शरजन्मन् समासतः ।
मन्त्रसन्ध्याविहीनस्य सर्वं तन्निष्फलं भवेत् ॥४॥
पञ्चाङ्गविधिना स्नात्वा मन्त्रस्नानमनन्तरम्[8] ।
ततः स्नायादङ्गमन्त्रैर्मूलेनैव तु मार्जयेत् ॥५॥
धौतवस्त्रं परीधाय स्वगृह्योक्तविधानतः ।
नित्यकर्म समाप्याथ मन्त्रसंध्यां समाचरेत् ॥६॥
अङ्कुशेनैव मुद्रायाः[9] सूर्यमण्डलगं जलम् ।
आनयेत्तोयमध्ये तु ध्यानयोगेन बुद्धिमान् ॥७॥
आवाहिनी स्थापनी च सन्निधानमतः[10] परम् ।
सन्निरोधनमुद्रा च सम्मुखी प्रार्थनी तथा ॥८॥
एता मुद्राश्च ततो[11] दर्शयेत्साधकोत्तमः ।
शोधयेदङ्कुशेनादौ[12] चामृतीकरणं[13] ततः[14] ॥९॥
तज्जलं वामचुलुके गृहीत्वा साधकोत्तमः ।
मूलेनैव त्रिधामन्त्र्य अष्टपत्राम्बुजं लिखेत् ॥१०॥

---

१. घ. यस्त्वां । २. ग. सद्योप । ३. ख. ग. घ. गौरीप्रिय । ४. घ. मन्त्रसंध्यापयेत् । ५. ख. घ. सदारम्य । ६. ख. घ. तन्मन्त्रैः । ७ घ. समाचर । ८. घ. ०मतः परम् । ९. ख. मुद्रयाः मकुशेनैव । १०. क. सन्निध्यानमतः । ग. सन्निधापनीतः । ११. ख. सतत । घ. तत्तोये । १२. घ. नादौ । १३. घ. वामृतो० । १४. घ. तथा ।

मध्ये एकाक्षरीमन्त्र बगलानाम्नि पुत्रक ।
वेदसंख्यामन्त्रवर्णान्[1] सप्तपत्र[2] क्रमाल्लिखेत् ॥११

अन्त्यपत्रे चाष्टवर्णा[3]ल्लिखेन्मूलमनु तथा ।
पुनरेकाक्षरं मन्त्रं त्रिसप्तमभिमन्त्रयेत्[4] ॥१२॥

तेन मूलेन सम्मार्ज्य मार्जनक्रमतोऽर्भक ।
तन्मार्जनविधिं वक्ष्ये ऐहिकामुष्मिकेषु च[5] ॥१३॥

त्रिधा मूर्द्धनि द्विधा बाह्वोस्त्रिधा हृन्नाभिदेशयोः ।
द्विधा पादेषु सम्मार्ज्य सौम्यकर्मस्वयं[6] क्रमः[7] ॥१४॥[8]

एवञ्च मार्जनं कृत्वा गायत्र्या बगलाह्वया ।
अर्घ्यत्रयञ्च निक्षिप्य हृदि सभाव्य देवताम् ॥१५॥

मूलेन मन्त्रितं तोयं त्रिवारञ्च त्रिधा क्षिपेत[9] ।
एवमेव त्रिकालञ्च मन्त्रसन्ध्या समाचरेत् ॥१६॥

उपस्थानं त्रिकालस्य वक्ष्येऽहं क्रौञ्चभेदन ।
उपस्थानं विना सन्ध्या निष्फला[10] नात्र संशयः ॥१७॥

गम्भीरां च मदोन्मत्तां स्वर्णकान्तिसमप्रभाम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥१८॥

मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च बिभ्रतीम्[11] ।
पीताम्बरधरां सौम्यां दृढपीनपयोधराम् ॥१९॥

हेमकुण्डलभूषाङ्गीं पीतचन्द्रार्द्धशेखराम् ।
पीतभूषणभूषाङ्गीं स्वर्णसिंहासने स्थिताम् ॥२०॥[12]

एवं ध्यात्वा तु देवेशीं[13] प्रातः सन्ध्यां समाचरेत् ।
उपस्थानं प्रवक्ष्यामि मध्याह्नस्य[14] कुमारक ॥२१॥

दुष्टस्तम्भनमुग्रविघ्नशमनं दारिद्र्यविद्रावणम्,
भूभृत्स्तम्भनकारणं मृगदृशां चेतः समाकर्षणम् ।

---

१. घ. देवसंख्या । २ क घ सप्तपत्रैः ३. घ अन्त्यमूपत्रे मष्टार्णं । ४. ख. त्रि सप्त० । ५ ख. वा । ६ खग. ०कर्मस्वयं । घ. मार्गस्वयं । ७. घ. क्रमात् । ८. घ पुस्तके विशेषः पाठः

"पादादिमूर्द्धनिपर्यन्तं क्रूरकर्मसु मार्जयेत्" ।

९. ख. घ पिबेत् । ग. पुनः । १० घ निष्फल । ११. क. विभ्रकम् । ग. घ. वज्रकम् । १२. घ- पुस्तकेऽयमन्यो विशेषः—

"रत्नसिंहासनां वन्दे देवीं त्रैलोक्यसुन्दरीम्" ।

१३. ग. देवेशि । घ. देवेश । १४ घ. मध्याह्ने च ।

सौभाग्यैकनिकेतन मम दृशोः कारुण्यपूर्णेक्षण[1],
विघ्नौघं बगले हर प्रतिदिनं कल्याणि तुभ्यं नमः ॥२२॥
एवं मध्यदिनोपास्ति[2] कुरु[3] कर्म सुपुत्रक[4]।
'उपस्थानं प्रवक्ष्यामि'[5] सायाह्नस्य कुमारक ॥२३॥

मातर्भञ्जय मद्विपक्षवदनं जिह्वाञ्चलं कीलय
ब्राह्मी मुद्रय[6] मुद्रयाशु धिषणामङ्घ्र्योर्गतिं स्तम्भय।
शत्रूंश्चूर्णय चूर्णयाशु गदया गौराङ्गि पीताम्बरे[7],
विघ्नौघं बगले हर प्रतिदिनं कल्याणि तुभ्यं नमः ॥२४॥

सायमोपास्ति[8]कर्तव्यमेवमेव[9] कुमारक।
विघ्नग्रहविनाशाय[10]'एवं ध्यायेज्जगन्मयीम्[11] ॥२५॥
मन्त्रसन्ध्यां विना मन्त्रं कोटिकोटिं जपन्ति ये[12]।
न भवेन्मौनसिद्धार्थं[13]मन्त्रसिद्धिं कुमारक ॥२६॥
त्रिकालमाचरेत्सन्ध्यामुपस्थानं तथैव च।
सहस्रं च जपेन्नित्यं सिद्धिः षण्मासतो भवेत् ॥२७॥
पूर्वोक्तविधिवत्सन्ध्यां कृत्वा चाष्टोत्तरं जपेत्।
यं यं वापि स्मरन्[14] पुत्र तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥२८॥
सन्ध्यामन्त्रेषु सर्वेषु[15] अङ्गमेव कुमारक।
न प्रसिद्ध्यत्यङ्गहीनं[16] तस्मात्सन्ध्यां समाचरेत् ॥२९॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे चतुर्थं पटलम्[17]॥४॥

॥ अथ पञ्चमः पटलः ॥

पीतवर्णां मदाघूर्णां समपीनपयोधराम्।
चिन्तयेद् बगलां देवीं स्तम्भनास्त्राधिदेवताम् ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नमस्तेऽस्तु जगन्नाथ भस्मोद्धूलितविग्रह।
एकाक्षरीमहामन्त्रं बगलाख्यं महाप्रभो[18] ॥२॥

---

१. ख. कारुण्यपूर्वेक्षण। २. घ. ०पास्ति। ३. घ. क्रूर। ४. घ पुस्तके विशेषः पाठ —

"उपस्थानं चैवमेतत्कर्तव्यं विधिवत्सुर."।

५. '—' चिह्नगतोऽशो नैवास्ति घ. पुस्तके।

६. ग. पुस्तके नास्ति। ७. घ. पीताम्बरो। ८. घ. ०मोपास्ति। ९. घ. ०मन्ह्री मेव। १०. घ. ०विनाशे च। ११. घ. ध्याय०। १२. ग. जपेन तु। १३ घ. ०मौनिसिद्धार्थं। १४. घ. स्मरेत्। १५. घ. पूर्वेषु। १६. ख. न च सिद्धयंत्यग-हीना। १७. घ. ०सन्ध्याविधिर्नाम चतुर्थः पटलः। १८ घ. वद प्रभो।

ईश्वर उवाच--

तत्तदेकाक्षरीबीज तत्तन्मन्त्रेपु जीवनम् ।
उत्तम बीजमुक्त [1]च मन्त्रसर्वार्थसाधनम्[2] ॥३॥
नानामन्त्रेपु मन्त्र वा बीजाढ्य [3] सर्वसिद्धिदम् ।
निर्बीजमेव निर्वीर्यं शिवस्य वचन यथा[4] ॥४॥[5]
तद्बीजोद्धारमनघ[6] सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
पूजन[7] च प्रयोग च वक्ष्येऽह तव पुत्रक ॥५॥
सान्त रान्तसमायुक्त चतुर्थस्वरसयुतम् ।
रेफाकान्त विन्दुयुक्त ब्रह्मास्त्रैकाक्षर(रो) मनु[8] ॥६॥
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोय(न्दोऽस्य)गायत्री समुदाहृतम् ।
देवता बगला नाम[9] शक्तिश्चिन्मयरूपिणी ॥७॥
लँ बीज ह्री च शक्तिश्च ईं कीलकमुदाहृतम् ।
न्यासविद्या प्रवक्ष्यामि मन्त्रसिद्धिकर[10] नृणाम् ॥८॥
भूशुद्धि भूतशुद्धिञ्च मातृकादित्रय न्यसेत् ।
पञ्चाक्षरेण[11] विन्यस्य तद्विधि शृणु पुत्रक ॥९॥
नेत्रबाण पुनः पञ्च नव पञ्चदशाक्षरम् ।
विन्यसेदगुलीभिश्च षडङ्गेपु तथैव च ॥१०॥
वक्ष्येऽह पञ्जर न्यास मन्त्रसिद्धिकर नृणाम् ।
बगला पूर्वतो रक्षदाग्नय्या च गदाधरी ॥११॥
पीताम्बरा[12] दक्षिणे च स्तम्भिनी चैव नैर्ऋते[13] ।
जिह्वाकीलिन्यतो रक्षेत्[14] पश्चिमे सर्वतोमयी[15] ॥१२॥
वायव्ये च मदोन्मत्ता कौबेरे[16] च त्रिशूलिनी ।
ब्रह्मास्त्रदेवतैशान्ये[17] पाताले स्तभमातर.[18] ॥१३॥

---

१ घ बीजयुक्त । २ घ मत्र सर्वार्थसाधकम् । ३. घ बीजाज्य । ४. घ. तथा ५ घ प्रथमतो विशेष —'एकाक्षरी बगला उद्धार' । ६. ख. ०मनघ । ७. ग योजन । ८ ख मनुम् । ९ ख घ नाम्नी । १० ख. ०सिद्धिकरी । ११. ख. घ मन्त्राक्षरेण । १२. घ. पीताम्बरी । १३. घ नैर्ऋतो । १४. घ. जिह्वा कीलयतो रक्षो । १५. ख. सर्वचिन्मयी । ग सर्वतामयि । घ. सर्वतोमयि । १६ घ. कौबर्या । १७ ख घ. ०देवतेशान्य । १८. घ. पातालस्तम्भमातृक. ।

ऊर्ध्वं रक्षेन्महादेवी जिह्वास्तम्भनकारिणी ।
एवं दश दिशो रक्षेद् बगला सर्वसिद्धिदा ॥१४॥

एवं न्यासविधिं कृत्वा यत्किञ्चिज्जपमाचरेत् ।
तस्य सस्मरणादेव[1] शत्रूणां स्तम्भनं भवेत् ॥१५॥

सर्वं[2] न्यासविधिं कृत्वा बगलामातृकां न्यसेत् ।
तन्मातृकाविधिं वक्ष्ये सारात्सारतरं तथा ॥१६॥

तारञ्च मातृकावर्णं[3] बगलाबीजमेव च ।
नमोऽन्तेन च विन्यस्य मातृकास्थानतोऽनघ ॥१७॥

ध्यानेन[4] मन्त्रसिद्धिः स्याद् ध्यानं सर्वार्थसाधनम्[5] ।
ध्यानं विना भवेन्मूकः सिद्धमन्त्रोऽपि पुत्रक ॥१८॥

वादी मूकति रङ्कति क्षितिपतिर्वैश्वानरः शीतति,
क्रोधी शाम्यति दुर्जनः सुजनति क्षिप्रानुगः खञ्जति ।
गर्वी खर्वति सर्वविच्च जडति त्वद्यन्त्रिणा[6] यन्त्रित[7],
श्रीनित्ये बगलामुखि प्रतिदिनं कल्याणि तुभ्यं नमः ॥१९॥

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं[8] तत्त्वलक्षं सुबुद्धिमान् ।
गुडोदकेन सन्तर्प्य तद्दशांशं कुमारक ॥२०॥

त्रिकोणकुण्डे जुहुयाद्धस्तनिम्नोन्नते शुभे ।
हयारिकुसुमैर्नैव सरक्तेनाज्यसयुतम्[9] ॥२१॥

ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् तत्त्वसंख्या तु युग्मकम् ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्पुत्र नान्यथा शिवभाषितम्[10] ॥२२॥

वाममार्गक्रमेणैव वामामभ्यर्च्य पुष्पिणीम् ।
मन्त्रसिद्धिकरं चैतत्[11] सर्वदा रिपुनाशनम् ॥२३॥

परमन्त्रप्रयोगेषु नानाकृत्रिमचेटकैः ।
सद्यः स्तम्भनविद्या च[12] बगला च न संशयः ॥२४॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे पञ्चमं पटलम्[13] ॥५॥

---

१. घ. ०र्द्ध्वं । २. ग. घ. सर्वं । ३. ख मातृकावर्णः । घ. मातृकावर्णं । ४. घ. न्यासेन । ५. घ. ०साधकम् । ६. ग. त्वद्यन्त्रिणा । घ. त्वद्यन्त्रिणो । ७. घ यन्त्रितो । ८. घ. जपे-मूलम् । ९. ख सरक्तेन्याज्य० । ग. सरक्तेनाह्ल० । १०. घ. शिव-भाषणम् । ११. घ. चैव । १२. ख. स्तंभनकृद्विद्या । घ. स्तंभनविद्यादि । १३. ग. ०एकाक्षरमन्त्रकथनं नाम पञ्चमः पटलः ।

।। अथ षष्ठः पटलः ।।

पाठीननेत्रां[1] परिपूर्णववत्रा[2] पञ्चेन्द्रियस्तम्भनचित्तरूपाम् ।
पीताम्बराढ्यां पिशितासना[3] सदा भजामि सस्तम्भनकारिणी सदा ।।१।।

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नमस्ते योगिससेव्य नमः कारुणिकोत्तम ।
एकाक्षरीमहामन्त्रप्रयोग[4] वद शङ्कर ।।२।।

ईश्वर उवाच—

उत्तमं कुण्डहोमञ्च स्थण्डिलञ्चैव मध्यमम्[5] ।
स्थण्डिलेन विना होम निष्फल भवति ध्रुवम् ।।३।।
षट्कोण चाष्टकोणञ्च चतुष्कोण कुमारक ।
त्रिविध स्थण्डिल चैव वक्ष्येऽह कुरु आदरात् ।।४।।
लक्ष्मी(.)शान्तिस्तथा पुष्टिविघ्नाविघ्ननिवारणैः[6] ।
चतुरस्रे हुनेत्कुण्डे तन्त्रवित् परिशोधिते ।।५।।
वशीकरणसम्मोहे वाणिज्ये द्रव्यसग्रहे ।
कीर्त्तिकामस्तु जुहुयाद्भगाकारे च कुण्डके[7] ।।६।।
दशेन्द्रियस्तभने तु दिव्यैर्गन्धैस्तथैव च ।
त्रिकोणकुण्डे जुहुयाद् गुरुमार्गेण बुद्धिमान् ।।७।।
विद्वेषणे तु जुहुयाद्वर्त्तुले कुण्डमध्यमे[8] ।
उच्चाटने तु जुहुयात् षट्कोणाख्ये तु[9] कुण्डके ।।८।।
मारणे चाष्टकोणे तु कतत्तत्कर्मानुसारत[10] ।
तत्तद्द्रव्येण जुहुयात्तत्तद्ग्रन्थोक्तमेव च ।।९।।
वक्ष्येऽह स्थण्डिलैर्होम[11] षट्कर्मसु[12] कुमारक ।
जुहुयाच्छान्तिवश्यपु स्थण्डिले चतुरस्रके ।।१०।।
विद्वेषणे स्तम्भने च जुहुयादष्टकोणके ।
मारणोच्चाटने पुत्र षट्कोणेषु विधीयते ।।११।।

---

१ ग. पाटिन नेत्रां । घ. भालेन नेत्रां । २. घ. ०गात्रा । ३. ख. ग. पिशिताशना। घ पिशिनी । ४. ग घ. ०महामत्र० । ५. घ. स्थंडिल मध्यमं तथा । ६. ग. घ. विद्या विघ्न० । ७. क. कुण्डले । ८. घ कुण्डमध्यगे । ९. घ. च । १०. ग तत्तत्कामा० ११. ख. घ. स्थडिले होम । १२ ख ग. षट्कर्मेषु ।

\

प्रादेश शतहोमे च[1] अरत्निश्च सहस्रके ।
हस्त चायुतहोमेषु[2] द्विहस्त लक्षहोमके ॥१२॥

गुणहस्त कोटिहोमे[3] कुण्ड निम्नोन्नत सुत[4] ।
स्थण्डिलस्य च[5] वक्ष्यामि तान्त्रिकोक्तस्य लक्षणम् ॥१३॥

अरत्निर्हस्तमात्र च द्विरत्निश्च द्विहस्तयोः[6] ।
शतं सहस्रमयुतं लक्षहोमेष्वय क्रमः ॥१४॥

सर्वत्रैवोन्नतं पुत्र प्रादेश स्थण्डिलक्रमम्[7] ।
लक्षण[8] स्थण्डिलैः[9] कुण्डे[10]र्न ज्ञात्वा निष्फलं हुतम् ॥१५॥

शान्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटन तथा ।
मारणान्तानि शसन्ति षट्कर्माणि मनीषिणः ॥१६॥

नानारोगैः कृत्रिमैश्च नानाचेटकमेव च ।
विषभूतप्रयोगेषु निरासः[11] शान्तिरुच्यते[12] ॥१७॥

वश्य जनाना सर्वेषा वात्सल्य हृद्गत स्मृतम् ।
स्तम्भन रोधन पुत्र सर्वकर्मसु निष्फलम्[13] ॥१८॥

मैत्रस्य[14] कलहोत्पत्तिविद्वेषणमुदाहृतम्[15] ।
चलबुद्धिभ्रमेणोक्तमुच्चाटनमिदम्भुवि ॥१९॥

प्राणिनां प्राणहरण मारण समुदाहृतम् ।
प्रत्येकमेषा वक्ष्यामि होमयोग सुनिश्चितम् ॥२०॥

दूर्वाहोम त्रिमध्वक्तं जुहुयादयुतत्रयम् ।
रोगहन्ता[16] ग्रहादिभ्यः सद्य. शान्तिकर भवेत् ॥२१॥

सुमन्त-[17] कुसुमैराज्य[18] कृत बाणायुत तथा ।
जुहुयान्निशि काले च वश्य सम्मोहन[19] भवेत् ॥२२॥

बिभीतकसमिद्भिर्वा करञ्जबीजमेव च ।
नेत्रायुत हुनेत्पुत्र स्तम्भन परम मतम्[20] ॥२३॥

---

१. घ. तु । २. घ. चायुतहोमे तु । ३. घ. कोटिहोमे । ४. घ. तथा । ५. ग. प्र । ६. ख. द्विहस्तकम् । ७. घ. स्थण्डिल क्रमात् । ८. ख. लक्षणैः । ९. ख. स्थण्डिल । घ. स्थंडिले । १०. ख. कुण्ड । ११. क. घ. निराशः । १२. क. ०मुच्यते । १३. घ. निश्चितम् । १४. ख. मित्रस्य । १५. ख. ०विद्वेष च मुदा० । १६. ख. रोगकृत्या । १७. ख. स्यमन्त । घ. शामत । १८. घ. राज्यैः । १९. घ. मोहनक । २०. घ. परम् ।

निम्बार्कपत्रहोमेन निम्बतैलेन मिश्रितम् ।
नेत्रायुतेन विद्वेष भवेत्पाषाणयोरपि ॥२४॥
उलूककाकयोः पत्रैर्वाणायुतमखण्डिभिः ।
जुहुयाच्च ततो रात्रौ भवेदुच्चाटन सुत ॥२५॥
तिलतैलसमायुक्त[1] शाल्मलीकुसुम[2] तथा ।
लक्षमेक हुनेद्रात्रौ प्रेताग्नौ प्रेतकानने ॥२६॥
नग्नः प्रेतमुखे[3] भौमे[4] प्रेतकाष्ठेन[5] बुद्धिमान् ।
मृकण्डुसदृशे[6] चैव मारण भवति ध्रुवम् ॥२७॥

इति षट्‌विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे षष्ठ पटलम्[7] ॥६॥

॥ अथ सप्तमः पटलः ॥

पीताम्बरधरा देवी पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ।
वामे जिह्वा गदा चान्य धारयन्ती भजाम्यहम् ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

महापाशुपताक्रान्त नमः पन्नगभूषण[8] ।
षट्त्रिंशदक्षरी विद्या[9] बगलाद्यामेव च[10] ॥२॥

ईश्वर उवाच—

मन्त्रोद्धार प्रवक्ष्यामि पुरश्चरणलक्षणम् ।
प्रयोग चोपसहार शान्ति तच्छृणु पुत्रक[11] ॥३॥
तार च बगलाबीज बगलापदमुच्चरेत् ।
मुखीति पदमुच्चार्य सर्वशब्द ततोच्चरेत् ॥४॥
दुष्टाना पदमुच्चार्य वाच[12] मुख पद[13] वदेत् ।
स्तम्भयेति पद चोक्त्वा जिह्वा कीलय उच्चरेत्[14] ॥५॥
बुद्धिशब्द ततोच्चार्य विनाशय[15] ततो[16] वदेत् ।
स्थिरमाया[17] ततोच्चार्य प्रणव च ततोच्चरेत् ॥६॥

---

१. घ. तिलतैलेन सयुक्त । २. ग. शाल्मिली० । ३. घ. प्रेतमुख । ४. क. भौमे । घ भौमैः । ५. घ. प्रेतकाष्ठे च । ६ ख. मृकण्ड० । घ. मुकुण्डसदृशे । ७ घ. ०एकाक्षरीषट्प्रयोगकथन नाम षष्ठः पटलः ॥ ८. ख. ०भूषणम् । ९.ख, ग. षट्त्रिंशदक्षरी-विद्या । १०. ख. बगला ता च मे वद । ग. बगलायाश्च मे वद । घ. बगलायाश्च देवता । ११. घ. साम्प्रत शृणु पुत्रक । १२. ख. वाचे । १३. ग. पदे । १४. घ. कीलयमुच्चरेत् । १५. ग विनाशयेति । घ. विनाशाय । १६. घ. पद । १७. घ स्तम्भमायां ।

वह्निजाया समुच्चार्य्य एव मन्त्र समुद्धरेत् ।
षट्त्रिंशदक्षर मन्त्रं मन्त्रराजमिद भुवि ॥७॥
न्यासविद्या प्रवक्ष्यामि सदा सिद्धिकरी पराम् ।
बगलामातृका चादौ कामतार्तीयवाग्भवम् ॥८॥
श्रीमायामातृका चैव बगलापञ्जर न्यसेत् ।
लघुषोढा च विन्यस्य सर्वमन्त्रष्वय क्रमः ॥९॥
ध्यान यत्नात्प्रवक्ष्यामि ध्यान सर्वार्थसिद्धिदम्[1] ।
आदौ मध्ये तथा चान्ते ध्यान सर्वार्थसिद्धिदम् ॥१०॥
चतुर्भुजा त्रिनयना कमलासनसस्थिताम् ।
त्रिशूल पानपात्र च गदा जिह्वा च बिभ्रतीम् ॥११॥
बिम्बोष्ठी कम्बुकण्ठी च समपीनपयोधराम् ।
पीताम्बरा मदाघूर्णां ध्यायेद् ब्रह्मास्त्रदेवताम् ॥१२॥
नारदो ऋषिरेवात्र बृहतीच्छन्द एव च ।
देवता बगला नाम स्तम्भनास्तभचिन्मयीम्[2] ॥१३॥
लँ बीज चैव ह्रूँ शक्तिः इँ[3] कीलकमुदाहृतम् ।
शत्रूणा स्तम्भनार्थञ्च जपेऽहं[4] विधिपूर्वकम् ॥१४॥
सङ्कल्पपूर्वक मन्त्र कीलचक्रक्रमेण च ।
पृथ्वीलक्ष जपेन्मन्त्र न्यासध्यानसमन्वितम् ॥१५॥
तर्प्पयेत्तद्दशाशच हेतुमिश्रेण[5] वारिणा ।
जुहुयाद्बिल्वकुसुमं[6] तद्दशाश च बुद्धिमान् ॥१६॥
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्तद्दशाश घृतप्लुतम् ।
तर्पयेत्[7]तर्पयामीति स्वाहान्त होममाचरेत् ॥१७॥
पूजा त्रैकालिकी नित्य जपस्तर्पणमेव[8] च ।
होमो[9] ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते ॥१८॥
पुरश्चर्या[10] विना मन्त्र न प्रसिद्धयति[11] भूतले ।
एव स्वाधीनमन्त्रण[12] षट्प्रयोगान् समाचरेत् ॥१९॥

---

१. ख. सर्वकामार्थसिद्धिदम् । २ ख. स्तभनास्त्रे च चिन्मयीं । ग घ स्तभनास्त्र च चिन्मयी । ३. ग. रँ । ४. घ जपेय । ५. घ हेतुसमिश्र । ६. ग विल्वकसुमं । ७. घ. तर्पणे । ८ ग. घ जपतर्प० । ९ घ. होम । १०. ख. पुरश्चर्या । ११. ग सा सिद्धयति । १२. घ साधितमन्त्रण ।

शान्त्याद्य(न्त्यर्थं) जुहुयाच्छालिसक्तुराज्यसमन्वितम्[1] ।
गुणायुत हुते[2] धीमान् कुण्डे पूर्वोक्तमादरात् ॥२०॥
वशीकरणकार्येषु विल्वपत्र घृतप्लुतम्[3] ।
गुणायुत चामलकप्रमाण क्रौन्चभेदन[4] ॥२१॥
स्तम्भनेषु[5] हुनेद्धीमान् तालक घृतसम्प्लुतम् ।
वदरीफलमात्र तु गुणायुतमनन्यधीः ॥२२॥
विद्वेषणे च जुहुयात्पत्रैर्निम्बार्कसयुतैः[6] ।
रात्रौ वेदायुत धीमान् सद्यो विद्वेषण परम्[7] ॥२३॥
राजीलवणसयुक्त बाणायुतमनन्यधीः ।
तस्य[8] चोच्चाटन[9] शीघ्र ध्रुवकूर्मादयोरपि[10] ॥२४॥
तलतैलेन सयुक्त मापहोम गुणायुतम् ।
प्रेताग्नौ प्रेतकाष्ठ[11] च जुहुयात्प्रेतकानने ॥२५॥
भौमवारे निशा[12] नग्नो जुहुयात्प्रेत उल्मुके[13] ।
सद्यो मारणमाप्नोति मृकण्डुसहशोऽपि च[14] ॥२६॥

॥ इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे सप्तम पटलम्[15] ॥

॥ अथाष्टमः पटलः ॥

बिम्बोष्ठी चारुवदना समपीनपयोधराम् ।
पानपात्र वैरिजिह्वा धारयन्ती शिवा भजे ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नमः कौलागमाचार्य वेदवेदाङ्गपारग ।
बगलामन्त्रराजस्य प्रयोग वद शङ्कर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

राजीलवणमादाय मूलमन्त्रेण पुत्रक ।
ग्रस्त कृत्वा साध्यनाम जुहुयादयुत निशि ॥३॥

---

१. ख. ०द्यावतुमाज्य० । २. ख. ग घ हुनेद् । ३. ख. घृतप्लुते । ४ घ पुस्तके पद्यमिद नास्ति । ५. ख. स्तम्भने सु । घ. स्तम्भने तु । ६. ख. घ ०निम्बार्क सभवं । ७ ख. ग. घ. भवेत् । ८. ध. सद्य । ९. ग उच्चाटन । घ. मुच्चाटन । १० ख ध्रुवकूर्मा० । घ. ध्रुवकर्मा० । ११. ख. प्रेतकाष्ठे । १२. ख. निशी । ग. घ निशा । १३. ख. गोल्मुके । घ. दिङ्मुखे । १४. घ. वा । १५. घ. मन्त्रराजकथन नाम सप्तम. पटलः ।

नानारोगहरं चैव नानाभूतनिकृन्तनम् ।
नानाकृत्रिमनाशञ्च भवेत्सत्य न सशयः ॥४॥
हरिद्राखण्डहोमेन अयुतेन कुमारक ।
वशीकरणसम्मोहं भवेच्छङ्करभाषणम् ॥५॥
तालकेन हुनेद्रात्रौ नेत्रायुतमनन्यधीः ।
नानास्तम्भनमार्गेषु सत्यमेतन्न सशयः ॥६॥
खरस्य[1] रक्तमादाय जातिकर्मविरोधिनाम् ।
निम्बार्कपत्रमादाय प्रत्येकं नाम चालिखेत् ॥७॥
प्रेताग्नौ प्रेतकाष्ठे च नग्ने च[2] प्रेतदिङ्मुखे[3] ।
हुनेत्प्रेतवने धीमानयुतं द्वेषकारकम् ॥८॥
अनाथस्य चितौ रात्रौ शत्रुप्रकृतिं लिखेत् ।
हृदये नाम आलिख्य[4] मारयेति ललाटके ॥९॥
दहयुग्मं लिखेद् बाहो ऊर्वोस्तस्य[5] कुरुद्वयम् ।
एवं च विलिखेत्सम्यक् सशत्रोर्वर्णमादरात्[6] ॥१०॥
ताडयेद् हृदये[7] मन्त्री शतमष्टोत्तरं जपेत् ।
तद्भस्म सग्रहे[8] धीमान् गोपयेन्नगराद्बहिः[9] ॥११॥
पुनर्भौमनिशाकाले मन्त्रयेन्मूलमन्त्रतः ।
अष्टोत्तरसहस्रं च शत्रुमूर्द्ध्नि[10] विनिक्षिपेत्[11] ॥१२॥
स शत्रुः सप्तरात्रेण म्रियते नात्र सशयः ।
उष्ट्रारूढं रिपुं ध्यात्वाग्रस्य दण्डेन[12] मन्त्रयेत्[13] ॥१३॥
निःक्षिपेत्सप्तरात्रं तु सप्तधा मन्त्रित[14] तथा ।
उच्चाटनं भवेत्सत्यं शिवस्य वचनं यथा[15] ॥१४॥
प्रेतभस्म रवौ[16] ग्राह्यं बगलामन्त्रराजतः ।
सहस्रं मन्त्रयेच्छत्रो[17] रात्रौ[18] नग्नो न[19] भौमके ॥१५॥

---

१. ग. घ. वाराह । २. ख. नग्नश्च । घ. नग्नो वा । ३. ख. घ. प्रेत-दिङ्मुख । ४. ग. घ. मालिख्य । ५. ख. ऊर्वोर्भस्मं । घ. ऊर्वोर्भस्म । ६. ख. स्वशत्रो० । घ. शत्रोर्वर्णसमादरात् । ७. ग. घ. गदया । ८. ख. ग. घ. सग्रहेद् । ९. घ. रोपयेच्च० । १०. घ. शत्रोर्मूर्धनि । ११. घ. निक्षिपेत् । १२. ख. ग्रस्य-दण्डेन । घ. ग्रस्त कृत्वा तु । १३. घ. मन्त्रवित् । १४. ख. मन्त्रिते । १५. घ. तथा । १६. क. वशो । १७. ख. भस्म । घ. रात्रौ । १८. घ. मन्त्री । १९. ख. नग्नोऽथ । ग. घ. नग्नेन ।

शत सहस्रमयुत कार्यलाघवगौरवात् ।
तत्तार्पणासव[1] पीत्वा[2] प्रयोग शान्तिमाप्नुयात् ॥२८॥
न कर्तव्य मुमुक्षैश्च[3] परपीडा कदाचन ।
प्राणे कण्ठगते कुर्यात् पश्चात् सस्कारमाचरेत् ॥२९॥

इति षट्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे अष्टम पटलम्[4] ॥८॥

॥ अथ नवम पटल. ॥

पीताम्बरालङ्कृतपीतवर्णा शातोदरी[5] सर्वमुखामृतार्चिताम्[6] ।
पीनस्तनालङ्कृतपीतपुष्पा सदा स्मरेय बगलामुखी हृदि ॥१॥

क्रौंचभेदन उवाच—

नमोऽस्तु मन्त्रागमकोविदाय श्रीनीलकण्ठाय नमो नमस्ते ।
एतन्मनोर्यन्त्रमखण्डतेजसे[7] प्रयोगमूल वद चन्द्रचूड ॥२॥

ईश्वर उवाच—

यन्त्रप्रयोग यमशासने[8] कलौ यन्त्रप्रयोग यमिना च दुर्लभम् ।
यन्त्रप्रयोग यतयस्तु कुर्वता[9] यज्ञाद्वि[10]गोविप्रयतश्च[11]रक्षणे ॥३॥

बिन्दु[12] त्रिकोण वृत्त च अष्टकोण ततोपरि ।
ततोपरि लिखेत्पुत्र षट्कोण वृत्तमादरात् ॥४॥
ततोपरि लिखेत्सम्यक् भूपुरद्वयमादरात्[13] ।
बिन्दुमध्ये लिखे[14]त्कोणत्रितये[15] त्रितय[16] त्रिधा ॥५॥
अष्टकोणेपु[17] विलिखेद गायत्री बगलाह्वयाम् ।
षट्कोणेषु[18] सुसलिख्य[19] विद्या षट्त्रिंशदक्षरीम् ॥६॥
वृत्तेषु[20] विलिखेत्पुत्र पञ्चाशद्वर्णमादरात् ।
भूपुरेषु च सलिख्य प्राणस्थापनक मनुम्[21] ॥७॥

---

१ ख तत्सर्पणाम्भ । २. ख सपीत्वा । ३ ख मुमुक्षेश्च ४ ०अष्टम पटलः। ५ ख शा तोदरी । ६ ख. घ सवमुखामरा० । ७ क, ख ग येतन्मनोयन्त्रमखण्ड-तेक्ष । ८ घ यमशासन । ९ घ कुवन् । १०. ख घ यज्ञादि । ११ घ ०यतश्च । १२ ख घ बिन्दु । ग बिन्दुः । १३ ख. ग घ पुस्तकेष्वयमशो विशेष —

"बि दुमध्ये लिखेद्बीज बगलायाश्च पुत्रक ।
साध्य तद्बीजगर्भे (मध्य घ) स्थ कुर्यात् सम्यक् सुबुद्धिमान् ॥

१४ क ख. ग तद्बीज विलिखेत् । १५ घ त्रितयेपु । १६ घ त्रिधा । १७. घ. अष्ट. पत्रेपु । १८. षट्कोणके । १९ ख घ. च सलिख्य । २० घ वृत्ते सु । २१ घ मनु ।

रजते स्वर्णपट्टे वा प्रादेश चतुरस्रके ।
लेखिन्या स्वर्णमय्या[1] च लिखेद्गुरुर्गववासरे ॥८॥

पूजायन्त्रमिद पुत्र पूजनात् सर्वसिद्धिदम् ।
पूजाविधि प्रवक्ष्यामि मुनिगुह्य सुपावनम् ॥९॥

मूलमन्त्रेण सम्पूज्य उपचारैश्च षोडशं ।
शुद्धप्रदेशजा दूर्वा निर्मला च सुकोमलाम् ॥१०॥

सग्रहेत्क्षालयेत् सम्यक् मन्त्रराजेन पुत्रक ।
मन्त्रान्ते च नम[2] पूर्वं[3] नि क्षिपेद् दूर्वमादरात्[4] ॥११॥

एव भूतसहस्र च पूजयेच्च दिने दिने ।
मण्डलाद्व्याधय.[5] सर्वे[6] मुच्यन्ते कृत्रिमादय ॥१२॥

भूतप्रतपिशाचाद्या क्रूरा खेचरभूचरा ।
पूजनान्नाशमाप्नोति शिवस्य वचन यथा ॥१३॥

अर्चयेत्पूर्ववद्यन्त्रमुपचारैश्च षोडशं ।
सग्रहेद्रक्तकुसुम[7] हयारिं च सुनिर्मलम् ॥१४॥

तेन पूजा प्रकर्त्तव्या[8] पूर्ववन्मण्डल सुधी ।
सम्मोहन च वश्यञ्च द्रव्यलाभ भवेद्ध्रुवम् ॥१५॥

बिभीतकोद्भव पुष्पमाहरेद्भौमवासरे ।
पूजयेत्पूर्ववत्पुत्र नानास्तम्भनकर्मणि ॥१६॥

निम्बार्ककुसुमेनाथ[9] यन्त्र वापि[10] कुमारक ।
पूर्ववत्पूजयेन्मन्त्री[11] सद्यो विद्वषण भवेत् ॥१७॥

धत्तूरकुसुमेनैव पूर्ववत्पूजयेत्सुत ।
उच्चाटन भवेत्सत्य नान्यथा शिवभाषणम् ॥१८॥

विपतिन्दुकपुष्पेण पूर्ववत्सम्यगर्चयेत् ।
सद्यो विनाशमाप्नोति[12] मृकण्डुसहशो[13] रिपु ॥१९॥

---

१. ख स्वर्णमय्या । २ ग पुन । ३. ख पूर्वा । ४ घ क्षिपेद् र्वा समाद रात् । ५ घ ०दामया । ६ ख सर्दा । ७. क. सग्रहे प्रकुसुम । ८ घ प्रकत्तव्य । ९ घ ०नाथ । १०. घ पुत्रणाथ । ११. घ. ०पूजयन् । १२. घ विनाशमायाति । घ नाशमवाप्नोति १३ घ मृकुण्ड० ।

शमन्तकुसुमेनैव[1] पूर्ववत्पूजयेन्नरः ।
पूर्ववज्जायते[2] लोके वेदशास्त्रार्थकोविदः ॥२०॥

पलाशकुसुमेनैव पूर्ववत्पूजयेन्नरः ।
सद्यो मन्दो भवेद्वाग्मी लभेत्सर्वज्ञतां सुतं ॥२१॥

पूर्ववत्पूजयेत् पुत्र अशोककुसुमेन च ।
ईप्सिता[3] लभते[4] कन्या सा तु पुत्रवती भवेत् ॥२२॥

तुलसीमञ्जरीभिश्च पूर्ववत्पूजयेन्नरः ।
ज्ञानभक्तिश्च वैराग्य लभते[5] तरलैरपि[6] ॥२३॥

नन्दावर्त्तेन[7] सम्पूज्य वातरोग व्यपोहति ।
मल्लिकाकुसुमेनैव पूजयेज्ज्वरशान्तये ॥२४॥

कुसुमैश्चम्पकैरर्च्यै[8] शीतज्वरनिवारणम् ।
अर्चयेज्जातिकुसुमैर्महरोग[9] विनश्यति ॥२५॥

वन्यैश्च मल्लिकापुष्पैर्नि क्षेप[10] लभते ध्रुवम् ।
केतकीकुसुमेनार्च्य द्रव्यवान् जायते ध्रुवम् ॥२६॥

एवं च पूजयेद्यन्त्र न जपेन च होमतः ।
प्रयोगसिद्धिर्भवति बगलायाः प्रसादतः ॥२७॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे नवम पटलम्[11] ॥९॥

॥ अथ दशमः पटलः ॥

कम्बुकण्ठीसुताम्रोष्ठी[12] मदविह्वललोचनाम् ।
भजेऽहं बगला देवी पीताम्बरधरा शुभाम् ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

अष्टमूर्त्ते महामूर्त्ते नमस्ते चन्द्रशेखर ।
वद प्रयोग मन्त्रस्य[13] लेपनक्रममादरात्[14] ॥२॥

ईश्वर उवाच—

पूर्वोक्त यन्त्रमालिख्य[15] प्राणस्थापनपूर्वकम् ।
अर्चयेदुपचारेण[16] चन्दनेन विलेपयेत् ॥३॥

---

१. घ श्यमन्त । २. ग. पुत्रवान्० । घ. पुत्र वा० । ३. घ. ईप्सितां च । ४. घ लभेत् । ५. ग. लभ्यते । ६. घ. च परैरपि । ७. ख नन्दावर्त्तैव । नन्द्यावर्तैश्च । घ. नद्यावर्त्तेन । ८. घ ०रर्चेत् । ९. ग. महारोगं । १०. घ. निक्षिप्त । ११. घ. ०यन्त्रप्रयोग नाम नवमः पटल. । १२. ख ग. कम्बुकण्ठी० । १३. घ. यन्त्रस्य । १४. घ. लेपन० । १५. घ. ०मालिख्य । १६. घ. ०दुपचारैश्च ।

वाणायुत जपेद्धीमान् नित्यपूजासमन्वितम् ।
राज्यसिद्धिर्भवेत्सत्यमयत्नेन[1] कुमारक ॥४॥

कस्तूरीलेपन कुर्यात्सम्यगर्चितयन्त्रके ।
नित्य वाणसहस्रं च[2] न्यासध्यानसमन्वितम् ॥५॥

मण्डलद्वययोगेन रोगकृत्याग्रहादयः ।
तत्क्षणान्नाशमायान्ति[3] तम. सूर्योदये[4] यथा[5] ॥६॥

पूर्ति चार्द्धपल[6] नित्य लेपयेद्यन्त्रमादरात् ।
जप कुर्यात्पूर्ववच्च मास वा मण्डल तु वा ॥७॥

वशीकर तु सम्मोह द्रव्यसग्रहमेव च ।
भवत्येव न सन्देहो नात्र कार्या विचारणा ॥८॥

हरिद्रातालक चैव मर्कक्षीरेण मर्दितम्[7] ।
त्रिकाल लेपयेन्नित्य त्रिसहस्र जपेद्दिने ॥९॥

महास्तभनमाप्नोति[8] कर्णाक्षिवाक्पतिस्तुवा[9] ।
मण्डलान्नगर[10] ग्राम रणसम्मोहमेव च[11] ॥१०॥

सर्षपास्त्रिकटूर्वैश्च[12] दुग्धैर्वज्रार्कसम्भवैः ।
क्षारेण[13] मर्दयेत्सम्यक् यन्त्रलेपनमाचरेत् ॥११॥

कृत्वार्धमण्डल चैव षट्सहस्रं दिने दिने ।
विद्वेषण भवेत्सिद्ध शिवस्य वचन यथा ॥१२॥

धत्तूर तिन्दुक[14] बीज तालकेन समन्वितम् ।
निम्बपत्रद्रवेनैव मर्दयेल्लेपयेत्त्रिधा ॥१३॥

एव मासप्रयोगेण नगर ग्राममेव च ।
रणे[15] वा राजगेहे[16] वा शीघ्रमुच्चाटन भवेत् ॥१४॥

प्रेताास्र प्रेतभस्म[17] च प्रेताङ्गार सम समम् ।
अर्कवज्रीमय[18] क्षीर खल्वेनैव[19] तु मर्दयेत् ॥१५॥

---

१. क. ०मयनेन । २. घ. तु । ३. घ ०माप्नोति । ४ घ सूर्योदय. । ५ घ तथा । ६. ख. भूचिन्तार्थं फल । ७. घ. मर्द्दयेत् । ८. घ. पश्यात् । ९. ख. कर्णाक्षिवाक्श्रुतिस्तु । घ. कर्णाक्षी वाङ्मतिस्तु । १०. घ. नगरे । ११. घ. वा । १२. ख. सर्षपास्त्रिकट्वर्कैश्च । ग. सर्षपास्त्रिकटुर्वर्वा । घ. सर्षपा त्रिकटुश्चैव । १३. ग. क्षीरेण । घ. खल्वेन । १४. घ. निंतिदुबक । १५ घ. रणं । १६. घ. राजगेह । १७. ख. प्रेतभूति । १८. ग. मर्कवज्रमयो । घ. मर्कवज्रमय । १९. क. खलेनैव ।

त्रिकालं लेपनं कुर्यात् प्रीतये होमयुक्तिना[1] ।
नित्यं[2] ऋतुसहस्रं[3] तु मन्त्रराजमिमं[4] जपेत् ॥१६॥

पक्षान्मारणमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
अथवा निम्बतैलेन तद्वत्कृत्वा तु मारणम् ॥१७॥

तिलतैलेन संयुक्तं मर्दयेद् गरमादरात्[5] ।
यन्त्रस्य लेपनं कुर्यात् त्रिकालं मूलविद्यया ॥१८॥

सन्तपेद्दीपशिखया पक्षमेकं कुमारक ।
मारणं च भवेन्नित्यं नात्र कार्या विचारणा ॥१९॥

वज्रीक्षीरं[6] त्रिकालं तु पूर्ववल्लेखनेषु[7] च ।
तापज्वरस्य पीडाया षण्मासाद्रिपुमारणम् ॥२०॥

पूर्ववल्लेपनं चैव जपसन्तर्पणं[8] तथा ।
त्रिसप्तदिनमात्रेण मारणं चोरगोरगैः[9] ॥२१॥

धत्तूरद्रवसंयुक्तं मर्दयेत्सर्षपं तथा ।
जपलेपनयोः[10] पुत्र गुल्मरोगी भवेद्रिपुः ॥२२॥

निम्बपत्रद्रवं चैव विषकण्टकजं[11] तथा ।
विषतिन्दुकजं चैव त्रिविधं च समं समम् ॥२३॥

त्रिकाललेपनं[12] कुर्यात् षट्सहस्रं[13] मनुं जपेत् ।
पक्षेण[14] द्वादशाहेन[15] मारणं च समं समम्[16] ॥२४॥

त्रिकाल लेपनं कुर्यात् षट्सहस्रं मनुं जपेत् ।[17]
मर्द्दयेदारनालेन मारिच त्रिफलां तथा ॥२५॥

त्रिकालं लेपनं कुर्यात्[18] त्रिकालं जपमाचरेत् ।
करपादादिदाहेन[19] मण्डलाच्छत्रुमारणम्[20] ॥२६॥

---

१. घ. सन्तपेद्दीपवह्निना । २. घ. नित्यं । ३. घ. क्रतु० । ४. घ. ०मिद । ५. ध. ०रलवमा० । ६. घ. वज्रक्षीरं । ७. घ. ०लेपनेन च । ८. घ. जपः० । ९. घ. वैरिकैर्गुह्यैः । घ. चोरचोरजैः । १०. ख. यन्त्रलेपनयोः । घ. जपलेपनया । ११. ग. ०कण्टककं । १२. ख. ग. त्रिकालं० । १३. क. सहस्रं । १४. घ. पक्षाद्वा । १५. घ. द्वादशाहं वा । १६. ख. ग. घ. न संशयः । १७. पादद्वयं पुस्तकान्तरेषु नास्ति । १८. घ. कृत्वा । १९. क. करपादापि० । ग. करपादादि । घ. करपाददहेनैव । २०. क. ०मारणम् ।

गोमयैर्लेपन[1] दत्वा गुल्मरोगी भवेद्रिपुः ।
गोमूत्रं छागमूत्रं च मिश्रितं पूर्ववत्तथा ॥२७॥
पित्तरोगी[2] भवेच्छत्रुरर्द्धमण्डलमात्रतः ।
लेपनं छागरक्तेन भ्रान्तान्पंत्ति[3] भवेद् ध्रुवम् ॥२८॥
मत्कुणस्य च रक्तेन उन्मादी जायते रिपुः ॥

॥ इतिषड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे दशम पटलम्[4] ॥१०॥

॥ अथैकादशः पटलः ॥

नमस्ते बगलादेवीमासवप्रियभामिनीम्[5] ।
भे(भ)जेऽहं स्तम्भनार्थं च गदा जिह्वा च बिभ्रतीम्[6] ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नमस्ते मौलिससेव्य[7] नम. पन्नगभूषण[8] ।
तर्पणेन[9] प्रयोगं च वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

पूजयेन्मन्त्रराजं च उपचारैश्च षोडशैः ।
तद्यन्त्रोपरि सन्तर्प्य तर्पणस्य विधिं शृणु ॥३॥
गुडोदकैस्तर्पणं च कुर्यात्पञ्चायुतं तथा ।
शान्तिवृत्त्य भवेच्छीघ्रं नात्र कार्या विचारणा ॥४॥
द्रवेण[10] तर्पणं कुर्यात् पूर्वसस्यास्तु पुत्रक ।
यस्य सम्मोहनं चैव भवेत्तर्पणयोगतः ॥५॥
मोहिनीद्रवसमिश्र[11] जलेनैव तु तर्पणम् ।
नेत्रायुतप्रमाणेन जिह्वास्तम्भनमाप्नुयात् ॥६॥
गतिगर्भं[12] च वाक्यानि[13] गात्रं श्रोत्रं तथाक्षिवम् ।
क्षुधा तृष्णा च निद्रा[14] च स्तम्भनं च भवेद् ध्रुवम् ॥७॥
निम्बार्कपत्रजद्रावैर्मिश्रितं तूर्यवारिणा ।
पञ्चायुत तर्पणेन सद्यो विद्वेषणं भवेत् ॥८॥

१. ॥ गोमये० । २. प पैत्यरोगी । ३. ख. भ्रा ठचिरो । प. भ्रान्तान्पंति । घ भ्रान्तिरोगी । ४. प. ०त्रि(वि)लेपनं नाम दशम पटलः । ५. घ बगला० । प. बगलादेवी वामवप्रियमोदिनी । ६. प. बिभ्रती । ७. प. मौलि० । ८. प. ०भूषणे । ९ घ तर्पणस्य । १०. ख. घ प. द्रव्येण । ११ प. मोहनोद्रवसयुक्त । १२. प. गतिस्तभं । घ गति गर्भं । १३. घ. प. वाक्पाणि । १४. प. तृष्णा क्षुधा च निद्रा ।

वज्रार्कक्षीरमिश्र च 'कान्ता च'[1] तर्पणेन च ।
उच्चाटन[2] भवेच्छ्त्रोरयुतत्रयमादरात् ॥९॥

प्रेतान्नं प्रेतभस्म[3] च प्रेताङ्गारं च पुत्रक ।
समं समं गरं[4] ग्राह्यं जीवेनैव[5] तु मिश्रितम् ॥१०॥

नेत्रायुतं तर्पणेन साक्षाद् रिपुविनाशनम् ।
हयारिपत्रजद्रावैर्मिश्रित[6] मारणं भवेत् ॥११॥

कर्पूरमिश्रित तोय[7] पचाशच्छतमादरात् ।
नित्य च तर्पयेद् धीमान् मासमेकमतन्द्रितः ॥१२॥

पुराणज्वरमत्युग्रं[8] पित्तरोगं विनश्यति ।
चन्दनाम्भस्तर्पणेन ताप कृत्रिमज हरेत् ॥१३॥

कस्तूरीमिश्रित तोये राज्यलाभो भवेद् ध्रुवम् ।[9]
पैस्तु[10] तर्पणमन्त्रेषु[11] अयुत रविसख्यया[12] ॥१४॥

कुबेरसदृशः श्रीमान् जायते नात्र सशयः ।
माध्वीद्रव्येण सम्मिश्र[13] पूजितं[14] शुद्धवारिणा ॥१५॥

रत्नायुत[15] तर्पणेन लक्ष्मीर्वा[16] जायते ध्रुवम् ।
गोक्षीरतर्पणेनैव ईप्सिता सिद्धिमाप्नुयात् ॥१६॥

तक्रेण तर्पणं चैव[17] पित्तरोग व्यपोहति ।
आरनालेन संतर्प्य जलदोष च[18] शाम्यति ॥१७॥

हृग्द्राम्भस्तर्पणेन स्त्रीणामाकर्षण भवेत् ।
शमतकुसुमेनैव[19] मिश्रित जलतर्पणम् ॥१८॥

पुत्रवान् जायते मर्त्यो[20] अयुतेन न सशयः ।
कदलीफलगोक्षीरं शर्करा च सम समम् ॥१९॥

---

१. '–' ख. कराभ। घ. कौशाभः। २. क. उच्चाटनो। ३. ख. प्रेतभूमि। ४. घ. च स०। ५. ख. मानेनैव। ६. घ. मयूरपत्रजे द्रावैः०। ७. क. तोये। ८. ग. घ. ०मृत्युप्र। ९. घ. पुस्तकेऽय विशेषः पाठः—

"गौडीद्रव्यस्तर्पणेन द्रव्यलाभो भवेद् ध्रुवम् ।"

१०. ख. ग. पैष्ट्या। घ. पैष्टी। ११. ख. तर्पणमन्त्रेण। ग. तर्पणमात्रेषु। घ. तर्पण-मात्रेण। १२. घ. ऋषिसख्यया। १३. घ. समिश्र। १४. घ. पूरित। १५. ख. तत्रायुत। घ. तत्वायुतं। १६. ख. ग. घ. लक्ष्मीवान्। १७. ख. घ. तर्पणेनैव। १८. ख. प्र। १९. घ. श्यमन्त०। २०. घ. मृत्यो।

पलाष्टक च प्रत्येक मिश्रित जलतर्पणम् ।
मन्त्रसिद्धिर्विना[1] सिद्धिर्भक्तिर्वैराग्यमेव च ॥२०॥

भ्रमज्ञानं व्यपोहति नान्यथा शिवभाषणम् ।
छागरक्तेन समिश्र चार्चित तैलतर्पणात्[2] ॥२१॥

मूकांश्च कुरुते प्राज्ञान्[3] रिपुसघाननेकशः[4] ।
जलेन मिश्रित पुत्र शोणित विड्वराहजम्[5] ॥२२॥

वेदायुत तर्पणेन उन्मादी जायते रिपु ।
काकरक्तेन सम्मिश्र तर्पण शुद्धवारिणा[6] ॥२३॥

जातिभ्रष्टो भवेच्छत्रु स भवेन्निन्दको[7] भुवि ।
उलूकरक्तसमिश्र वारिणा तर्पण तथा ॥२४॥[8]

व्रणेन म्रियते शत्रुरयुतद्वयसमततः[9] ।[10]
श्वानरक्तेन समिश्र वारिणा तर्पणं तथा ॥२५॥

श्वानवज्ज्वलते[11] शत्रुर्म्रियते नात्र सशयः ।
मार्जाररक्तसम्मिश्र[12] तर्पण वारिणा तथा ॥२६॥

क्षयरोगी भवेच्छत्रु. षण्मासैर्म्रियते रिपुः ।[13]
उष्ट्रशोणित[14] मिश्र तोये[15] सन्तर्प्पयेत् सह[16] ॥२७॥

---

१. घ. ०ज्ञान । २. घ. तेन तर्पणम् । ३. घ. यत्नाद् । ४. घ. ०सघानमेकश । ५. घ. विड्वराहकम् । ६. घ. मिष्टवारिणा । ७. घ. सन्ततिनिन्दिता । ८. ग घ पुस्तकद्वये विशेषोऽय पाठ.—

'नेत्रायुत[1] भवेच्छत्रु नेत्ररोगी[2] न सशय ।
खररक्तेन समिश्र वारिणा तर्पण तथा ॥

९ ख. ०द्वयमन्ततः । ग. ०द्वययोगत. ।

१०. घ. पुस्तके पादद्वयस्थानेऽयमशो दृश्यते—

तृणवज्ज्वलते शत्रु रयुत ज्वरयोगत. ।"

११. ख. जायते । ग. घ. जल्पते । १२. घ. ०समुत्त । १३. ख. पुस्तकेऽस्मात्परमशो विशेष —

' भुजगशोणितेनैव तर्पयेद्दशवासरके ।
निशि सहस्रमानेन सिद्ध रिपुविनाशनम्" ॥

१४. घ. उष्ट्रस्य शोणित । १५. ख. तोयैः । घ. तोय । १६. घ. सतर्प्य बुद्धिमान् ।

---

१ घ. नेत्रानुवाद् । २ घ नेत्रनाशो ।

मासेन शत्रुमरणं मूकडुसदृशोऽपि वा ।
जपसंख्या यत्र नोक्ता लक्षमेकं कुमारक ॥२८॥
दिनसंख्या यत्र नोक्ता पक्षमेव[1] न संशयः ॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे एकादश पटलम्[2] ॥११॥

॥ अथ द्वादशः पटलः ॥

कौलागमैकसंवेद्या सदा कौलागमाम्बिकाम् ।
भजेऽहं सर्वसिद्ध्यर्थं बगला चिन्मयी हृदि[3] ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नमस्ते सर्वसर्वेश गर्वितासुरभञ्जन ।
गायत्री बगलाख्या च वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

मन्त्रोद्धार प्रवक्ष्यामि मन्त्रमाहात्म्यमेव च।
पुर[4]श्चर्याप्रयोग च वक्ष्येऽहं तव पुत्रक ॥३॥
ब्रह्मास्त्रायपदं चोक्त्वा 'विद्महेति पद ततः'[5] ।
स्तम्भनेति पद चोक्त्वा बाणाय तदनन्तरम् ॥४॥
धीमहीति पदं चोक्त्वा तमः[6] शब्द ततो(दो)च्यते[7] ।
बगलापदमुच्चार्य उद्धरेच्च प्रचोदयात् ॥५॥
गायत्री बगलानाम्नी सर्वसिद्धिप्रदा भुवि ।
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोय(स्य) गायत्री समुदाहृतम्[8] ॥६॥
देवता बगलानाम्नी चिन्मयी[9] शक्तिरूपिणी ।
ॐ बीज 'चैव शक्तिह्ली'[10] कीलक विद्महे पदम् ॥७॥
चतुर्लक्ष पुरश्चर्य्या तद्दशांश च तर्प्पणम् ।
तद्दशांश हुनेदाज्य तावद्ब्राह्मणभोजनम् ॥८॥
न्यासध्यानादिक सर्वं कुर्यात् 'तन्मन्त्रवो जपेत्'[11] ।
प्रयोगानथ वक्ष्यामि गायत्रीबगलाह्वये[12] ॥९॥

---

१. घ. पक्षद्वयं । २. घ. ०एकादश. पटलः । ३. घ. बगलाख्य करुणाकरम् । ४. क. पुन । ५. '—' ख. विद्महेति पद तथा । घ. विद्महेति तत; पदम् । ६. घ. तत. । घ. तमो । ७. ग. घ. ततोच्चरेत् । ८. ख. समुदाहृतम् । ९. ख. बगला । १०. '—' घ. शक्तिह्ली चैव । ११. '—' घ. तन्मन्त्रराजवत् । १२. ख. ०बगलाह्वया । घ. गायत्र्या बगलाह्वया ।

तारादि प्रजपेन्मन्त्र मोक्षार्थी[1] च कुमारक ।
शान्त्यर्थं च[2] जपेत्पुत्र शारदाबीजपूर्वकम्[3] ॥१०॥
सम्मोहनार्थं प्रजपेत् कामराजपुरस्सरम् ।
स्तम्भनार्थं प्रजपेच्छक्तिदाहकपूर्वकम्[4] ॥११॥
वाराह शक्तिवाराह स्तब्धमायापुरस्सरम् ।
प्रजपेन्मन्त्रमेतद्धि मारणं भवति ध्रुवम् ॥१२॥
वाग्भवादि जपेन्मन्त्र विद्यासिद्धिर्भविष्यति ।
बालादि प्रजपेन्मन्त्र 'कन्यका क्षिप्रमाप्नुयात्'[5] ॥१३॥
वाराहीबीजमध्यस्था[6] गायत्री लक्षजापनात् ।
भूलाभ(भो) जायते तस्य ग्रनायासेन[7] पुत्रक ॥१४॥
श्रीबीजादि जपेत् पुत्र गायत्री[8] बगलाह्वयाम्[9] ।
कुबेरसदृश: श्रीमान् जायते नात्र संशयः ॥१५॥
तार्क्ष्यबीजादि मन्त्र प्रजपेद् ध्यानपूर्वकम् ।
नानाविषप्रयोगाश्च ग्रहरोगादिनाशनम्[10] ॥१६॥
भैरवी[11] बीजमाद्य च प्रजपेच्च कुमारक ।
भूतप्रेतपिशाचाद्यास्तत्प्रयोगाद् व्यपोहति ॥१७॥
जपेदमृतबीजानि[12] गायत्री बगलाह्वयाम् ।
तापज्वरमहाताप[13] शमयेत्[14] क्रौञ्चभेदन ॥१८॥
जपेच्च वायुबीजादि गायत्री बगलाह्वयाम् ।
क्षिप्रमुच्चाटन चैव भवेच्छङ्करभाषणम् ॥१९॥
ग्रग्निबीजादिगायत्री प्रजपेद् बगलाह्वयाम् ।
महता(दा)तापसयुक्त:[15] पक्षाच्छत्रुर्मृतो भवेत् ॥२०॥

---

१. घ. मोक्षार्थं । २. घ प्र । ३. घ. तारावाराहपूर्वकम् । ४. ख. ग घ. पुस्तकेष्वय पाठ —
स्तम्भनार्थं जपेत्पुत्र बगलाबीजपूर्वकम् ॥
विद्वेषणार्थं प्रजपेद्धुकारद्वयपूर्वकम् ।
उच्चाटनार्थं (घ. उच्चाटने) जपेत्पुत्र शक्तिवाराहपूर्वकम् ।
५ घ. कन्याकाक्षी मवाप्नुयात् । ६. घ. वाराहीमध्यबीजस्था । ७. ग. मत्यायासेन । ८. क. ग. घ. गायत्री ।~ ९. ख. बगलाह्वया । १०. घ. गलरोगादि० । ११. ख. घ. भैरव । १२. ख. घ. बीजादि । १३. ख तापज्वर महातापं । घ. ०महावात । १४. घ. नाशयेत् । १५. घ. सयुक्त ।

मायादि प्रजपेत् पुत्र गायत्री बगलाह्वयाम् ।[1]
इष्टसिद्धिर्भवेत् क्षिप्र शिवस्य वचन यथा[2] ॥२१॥
मन्त्रराजस्य गायत्री पादाद्यवयव[3] तथा ।[4]
गायत्री च विना मन्त्र न सिद्धयति कलौ युगे ॥२२॥
पुरश्चरणकाले तु गायत्री प्रजपेन्नरः ।
मूलविद्या[5] दशांश च मन्त्रसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥२३॥
त्यक्त्वा तन्मन्त्रगायत्री यो जपेन्मन्त्रमादरात् ।
कोटिकोटिजपेनैव 'तस्य सिद्धिर्न जायते'[6] ॥२४॥
जपसख्या यत्र नोक्ता लक्षमेक कुमारक ।
दिनसंख्या यत्र नोक्ता पक्षमेक न सशयः ॥२५॥
गायत्री बगलानाम्नी बगलायाश्च जीवनम् ।
मन्त्रादौ चाथ मन्त्रान्ते जपेद्[7] ध्यानपुरस्सरम् ॥२६॥

इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे द्वादश पटलम्[8] ॥१२॥

॥ अथ त्रयोदशः पटलः ॥

निधाय पाद हृदि वामपाणिना,
जिह्वा समुत्पाटलकोपसयुताम् ।
गदाभिघातेन च फालदेसे[9],
अम्बां भजेऽहं बगला हृदब्जे ॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—
श्रीकण्ठ श्रीगराधार[10] शार्दूलाम्बरभूषण[11] ।
शान्तवद्[12] वद मे पूजा बगलायाश्च शङ्कर ॥२॥

---

१. अतः पर ख. ग. घ. पुस्तकेषु विशेषः पाठः—
"राजा वा राजपुत्रो वा मरणान्तं वशीभवेत् ।
महामाया(घ. मायामाया)दिगायत्रीं प्रजपेद् बगलाह्वयाम् ।"
२. घ. तथा । ३. घ. पादावयावयव । ४. घ. पुस्तकेऽस्य विशेषः—
मन्त्रसिद्धिर्भवेद् क्षिप्र शिवस्य वचन यथा
५. ख. घ. मूलविद्या । ६. '–' घ. न च सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् । ७. ख. ग. जपे । घ. जप ।
८. घ. ०द्वादशः पटलः । ९. ख. फालदेशे । घ. फालदेशं । १०. घ. श्रीधराधार ।
११. घ. ०भूषणम् । १२. घ. शान्तवद् ।

ईश्वर उवाच–

बिन्दुमध्ये च सम्पूज्य स्वर्णसिंहासनोपरि ।
चिन्मयी बगलादेवी सर्वसिद्धिप्रदायिकाम् ॥३॥
चतुर्भुजां च द्विभुजां गदां जिह्वां च बिभ्रतीम् ।
पीतवर्णां महापूर्णामर्चयेन्मूलविद्यया[1] ॥४॥
त्रिकोणे पूजयेत् पुत्र 'वाणीं गौरीं रमां'[2] क्रमात् ।
तत्तद्बीजेन सम्पूज्य तदावाहनपूर्वकम्[3] ॥५॥
पञ्चास्त्र[4] पञ्चकोणेषु वक्ष्ये तत्पूजनं क्रमात् ।
पूर्वकोणे तु सम्पूज्य मस्त्र च बगलामुखीम् ॥६॥
द्वितीयकोणे सपूज्य मस्त्रराज कुमारकं ।
उल्कामुखीति विख्यात तन्मन्त्रेणैव पूजयेत् ॥७॥
तृतीयकोणे सम्पूज्य मस्त्रराजं कुमारक ।
'नाम्नी ज्वालामुखी चैव तन्मन्त्रेणैव पूजयेत्'[5] ॥८॥
'चतुर्थकोणे सम्पूज्य मस्त्रराज कुमारक'[6] ।
जातवेदमुखीनाम्नीं तन्मन्त्रेणैव पूजयेत् ॥९॥
पञ्चमेषु च कोणेषु अस्त्रराजं कुमारक ।
बृहद्भानुमुखी ख्याता त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ॥१०॥[7]
पञ्चकोणेष्वेवमेतत्पञ्चास्त्र[8] सम्यगर्चयेत् ।
मूलमन्त्रेण तेनैव पूजायन्त्रं कुमारक ॥११॥
तदुपरि समभ्यर्च्य दिक्पालाष्टकमादरात् ।
वद्वाहन च तच्छक्तिदशायुतपुरस्सरम्[9] ॥१२॥
तदुपरि समभ्यर्च्य मातृकाष्टकमेव च ।[10]
तदुपरि समभ्यर्च्य विघ्नेशाष्टकमेव च ॥१३॥

---

१. ख. घ. मदापूर्णा० । घ. महाघूर्णा । २. घ. वाणीगौरीरमाः । ३. घ. तदावाहनपूर्वकम् । ४. घ. पञ्चास्त्रान् । ५. '–' चिह्नगोऽशो घ. पुस्तके नास्ति । ६. '–' चिह्नान्तर्गतोऽशो नावलोक्यते घ. पुस्तके । ७. घ. पद्यमिद नास्ति । ८. घ. पञ्चमेषु च कोणेष्वेवमेव पञ्चास्त्र । ९. ख. तच्छक्तिदशायुध० । घ. तच्छक्तिस्तदायुध० । १०. घ पुस्तके विशेषः—

"तदुपरि समभ्यर्च्यं भैरवाष्टकमेव च ।"

'पूजायश्च क्रमेणैव'[1] एवमेव कुमारक ।
शालग्रामशिलाया वा वह्निमण्डलमध्यमे ॥१४॥
कन्यका[2] चाथवा पुत्र पूजयेद् बगलाम्बिकाम्[3] ।
उत्तम[4]युवतीपूजा मध्यम[5] वह्निमण्डले[6] ॥१५॥
प्रधम[7] च शिलापूजा क्रम एव[8] शिवोदितः[9] ।
नमोऽतेनैव नाम्ना च पूजयेच्च कुमारक ॥१६॥
एव च पूजयेत् सम्यक् पुरश्चरणके विधौ ।
द्रव्य यत्त्रिविध[10] प्रोक्त पूजायां च विशेषतः ॥१७॥
गौडी माध्वी च पैष्टी च गौडी चैवोत्तमोत्तमा[11] ।
छागकुक्कुटमत्स्य[12] च बगलाप्रीतिकारकम् ॥१८॥
त्रिकाल पूजयेद्देवीं त्रिकाल च[13] जपेन्मनुम् ।
यस्य दर्शनमात्रेण पण्डितैर्वाग्विदा वरैः ॥१९॥
तस्य[14] प्रज्ञा पलानीय[15] तम सूर्योदये[16] यथा[17] ।
तेजोभेदमनेक च सर्वशत्रो[18] कुमारक ॥२०॥
वह्नौ यद्वत् प्रविशति[19] तद्वद्वादय[20] चातुरी[21] ।
बगला मन्त्रसिद्धस्य[22] 'हृदये च प्रविश्यति'[23] ॥२१॥
प्रतिवादि[24] भवेत्स्तम्भो[25] बृहस्पतिसमोऽपि च ।
प्रज्ञाकर्षणशक्तिश्च बगला भूतले स्मरेत्[26] ॥२२॥
विद्यामाकर्षणार्थ[27] च स एव च[28] न सशयः[29] ।
ब्रह्मचारी गृही वापि वानप्रस्थोऽथवा यति ॥२३॥

---

१. '–' पूजायश्चक्रमे चैव । २. ख. कन्यायां । ३ ग बगलामुखीम् । ४ घ उत्तमा । ५. घ मध्यमा । ६. घ. वह्निमण्डलम् । ७. घ. प्रथमा । ८ ख एष । ग. एव । घ. त्रय । ९. क. ग. शिवोदिता । १०. घ त्रिविध । ११. क ग ०त्तमा । १२. मांस । १३. घ. प्र । १४. घ तस्य । १५ घ. पलायते । १६. घ सूर्योदयः । १७. घ. तथा । १८ घ. शत्रो । १९. घ. प्रणश्यति । २० ख. तद्वद्वादपद । २१. घ. चातुरम् । २२. घ. ०मन्त्रसिद्धिः स्याद् । २३. '–' घ. दूरादेव प्रदर्शनात् । २४. घ. प्रतिवादी । २५. ख. घ. भवेत् स्तम्भो । २६. ख. स्मृता । २७. घ. वज्ञामाकर्षणार्थं । २८. घ. तु । २९. ख घ. पुस्तकद्वयेऽधिकोऽयमशो दृश्यते—

'उल्लघ्य बगलामन्त्रमुपवास (घ. मुपासक) मनन्यधी." ।
यत्किंचित् कुरुते (घ. क्रियते) कर्म पूर्वो (घ शिला) बीजमिवांकुरं. (घ ०वांकुर)"

बगलामन्त्रसिद्धस्तु[1] सैव पूज्यो यतीश्वर[2] ।
बगलामन्त्रसिद्धश्च[3] यत्र तिष्ठति भूतले ॥२४॥
पञ्चक्रोशप्रमाणेन विद्वानेव च भासते ।
न भासते चान्यविद्या न स्मरन्न परामुखो[4] ॥२५॥
प्रयोग चैव न भवेद् बगलार्चापरे[5] पुरा[6] ।
प्रसने[7] सर्वविद्याना बगला यैव[8] भूतले ॥२६॥
बगलाया विना मन्त्र त्रिपु लोकेपु दुर्लभम् ।
तत्सम्प्रदायविधिना[9] साधयेद् बगलामुखीम् ॥२७॥
एव च बगलामन्त्र मन्त्रराजमिद भुवि ॥

इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे त्रयोदश पटलम्[10] ॥१३॥

॥ अथः चतुर्दशः पटल ॥

सुधाब्धौ रत्नपर्य्यङ्क मूले कल्पतरोस्तथा ।
ब्रह्मादिभि परिवृता बगला भावयद्[11] हृदि ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

वीर[12] चिद्रूप विश्वश चिदानन्दस्वरूपिणे[13] ।
बगलार्चाविधि चैव वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

'सृष्टि स्थिति च सहार'[14] पूजा च त्रिविधा कलौ ।
केरले सृष्टिरूपा च गर्भकौलागमक्रमात् ॥३॥
प्रचंन गौडदेशे[15] च[16] स्थितिमार्ग[17] कुमारक ।
साख्पा महदेशे तु[18] सहाराचनमेव[19] च ॥४॥
गुप्त कौलागम नाम[20] गौडदेशार्चनादिभि[21] ।
कामरूपागम नाम सहारक्रमपूजनम् ॥५॥

---

१ घ ०सिद्धिस्तु । २ '—' घ सर्वे पूज्यो मुनीश्वरैः । ३ घ ०सिद्धिश्च । ४ घ तस्य वचनात् पराङ्मुखो । ५ घ ०र्चापरः । ६ घ परा । ७ घ प्रस्ते । ८ घ एव । ९ ख घ तत्सम्प्रदाय० । १० घ ०त्रयोदश पटल । ११ घ चिन्तयद । १२ घ चिद । १३ घ स्वरूपक । १४ '—' घ सृष्टिस्थितिश्च सहार । १५ घ गौडदेश । १६ घ स्य । १७ ख स्थितिमार्गे । १८ —' ख घ कामरूपाख्यदेशे तु । १९ घ सहारक्रममेव । २० घ नाम्ना । २१ घ गाडदेशऽर्चन विधि ।

लाटार्चनं[1] चावलम्ब्य सांख्यायनमुनिस्तथा ।
उक्तवानागमं[2] चैव सृष्टयर्थं[3] शृणु पुत्रक ॥६॥

सर्वाङ्गसुन्दरी श्यामा सर्वावयवशोभिनीम् ।
नवोढा पुष्पिणी चैव प्रार्थयेद्विप्रकन्यकाम् ॥७॥

कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां कुमारक ।
अथवा भौमवारे च निशा[4] भृगुजवासरे[5] ॥८॥

'सुवासिनो च[6]' तैलेन कुर्यादभ्यगनं[7] तथा ।
तूलिकातल्पमानीत्वा[8] आस्तीर्यादङ्मुखेषु[9] च ॥९॥

तस्योपरि ततस्तीर्यं[10] शमन्तैर्जातिचम्पकैः ।
कर्पूरं चैव कस्तूरीमिश्रितं चन्दनं तथा ॥१०॥

सर्वाङ्गे लेपनं कुर्याल्लक्ष्मीसूक्तेन बुद्धिमान् ।
पर्य्यङ्कोपरि तत्कन्या चन्दनेन विलेपिताम् ॥११॥

ध्रुवाद्यौरिति[11] मन्त्रेण कुर्याद्दक्षिणतोमुखीम् ।
उन्मुखेत्यर्चनं[12] कुर्यात् श्रीसूक्तेन कुमारक ॥१२॥
पादौ प्रसार्य[13] तत्कन्या[14] गुप्तेनार्चनमाचरेत् ।
न्यस्त्वा षोढाद्यं चादौ बगलापञ्जरं न्यसेत् ॥१३॥

कन्या चैव न्यसेदेव तत्तदङ्गानि[15] संस्मरेत्[16]
गन्धद्वारेति[17] मन्त्रेण कुर्यात् कस्तूरिलेपनम् ॥१४॥

मूलमन्त्रेण चाभ्यर्च्य[18] पुष्पमाला समर्चयेत्[19] ।
निवेदयेद् द्रव्यशुद्धिं तत्रैव जपमाचरेत् ॥१५॥

शतं वाऽथ सहस्रं वा मन्त्रराजमिदं सुत ।
पुरश्चरणमध्ये तु प्रतिभार्गववासरे ॥१६॥

---

१. ग. लाजार्चनं । घ. शोढायपं । २. घ. उक्तमार्गक्रमे । ३. घ. सृष्टयर्थं ।
४. ख. ग. घ. निशायां । ५. ख. ग. घ. भृगुवासरे । ६. घ. सुवासितेन । ७. ग. ०दभ्यगना । . ०दभ्यगक । ८. घ. ०मानीय । ९. घ. ०मुखेन । १०. ख. घ. समास्तीर्य । ११. घ. ध्रुवा द्यौरिति । १२. घ. तन्मुखे शयनं । १३ घ. प्रस्तार्य । १४. ख. तां कन्यां । १५. घ. तत्र चाङ्गानि । १६. ख. घ. संस्पृशेत् ।
१७. ख. घ. पुस्तकद्वये विशेषः पाठः—

धनजयपुरं चैव घर्षयेत् (घ. मार्जयेत्) मूलविद्यया ।

१८. घ. गन्धद्वारेण । १९. घ. तस्यैव । २०. ख. घ. समर्पयेत् ।

अथवा पौर्णमास्या वा सौभाग्यार्चनमाचरेत् ।
प्रयोगसिद्धिद शस्त[1] मन्त्रसिद्धिकर परम् ॥१७॥
एतत्पूजा विना पुत्र प्रयोग न भवेत् कलौ ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रयोगादि च भूतले ॥१८॥
सौभाग्यार्चा विना पुत्र न भवेज्जपकोटिभि. ।
अभिमानाष्टक त्यक्त्वा त्यक्त्वा चैवेषणात्रयम् ॥१९॥
त्यक्त्वा पञ्चेन्द्रियासक्ति सौभाग्यार्चनमाचरेत् ।
सुखदु ख समे[2] कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ॥२०॥
शीतोष्णे[3] समता कृत्वा सौभाग्यार्चनमाचरेत् ।
पीठाद्वय च न ज्ञात्वा य॰ करोत्यर्चन भुवि ॥२१॥
स पतितो भवेत् पु सा रौरव नरक व्रजेत् ।
बाह्याभ्यतरत [4] पुत्र अभेदज्ञानयोर्विना ॥२२॥
सौभाग्यार्चनकर्त्तॄणामनन्त[5] शापमाप्नुयात् ।
सकल्प च विकल्प च त्यक्त्वा विश्रान्तमानस [6] ॥२३॥
कुर्यात् सौभाग्यसम्पूजा च नो चेद् भ्रष्टो भवेन्नर ।
जितेन्द्रिय [7] सुख त्यक्त्वा कुर्यात् सौभाग्यपूजनम् ॥२४॥
सुखापेक्षण यत् कुर्याद् देवताशापमाप्नुयात् ।
स्वस्यादेशविधि[8] चैव न ज्ञात्वा क्रौञ्चभेदन ॥२५॥
य करोत्यचन चैव [illegible] विप्र पतितो भवेत् ।[9]
स्वपत्नी भ्रातृपत्नी वा गुरुभार्यामथापि वा ॥२६॥
अर्चयत षड्सोपेता[10] सांख्यायनमत त्विदम ।
दीक्षालयस्था रजकी कुलालगृहकन्यकाम् ॥२७॥

---

१. घ पु सां । २ घ समौ । ३ घ शीतोष्ण । ४ ग ब्रह्माभ्यन्तरत । घ बाह्याभ्य तरयो ५ घ ०कर्तॄणां देवता । ६ घ विभ्रान्तमानस । ७ घ जित्वेन्द्रिय ।
८ घ स्वस्यदेशविधि । [illegible] अत पर ख घ पुस्तकद्वय विशेष —
"कल्पते (करोति घ) चित्तसक्षोभ तत(घ॰ त्वत्)कन्याया कुमारक ।
भ्रान्तचित्तो भवेत् सद्यो (घ सोपि) वाचस्पतिसमोऽपि वा" ॥
[illegible] पुस्तकेऽस्मादप्यधिकोऽयमशो दृश्यते—
'नोत्पादयत् कामनया वेदन च शरीरयो ।
वेदना जनयद्यस्तु स नर पतितो भवेत्' ॥
१० घ यौवनोपेता ।

पुलिन्दकन्यकां चैव मृकण्डुमतमादिशेत् ।
अर्चयेद् ऋषिपत्नी[1]च पूर्वोक्तां लक्षणान्विताम् ॥२८॥

अर्चयेद्[2] विधिमार्गेण पूजा दूर्वाससम्मता[3] ।
सर्वलक्षणसम्पन्नां पुष्पिणीमर्चयेत्ततः[4] २९॥

मतङ्गमुनिनोक्तं च[5] सद्यः सिद्धिकरं भुवि ।
इति[6] मार्गमतं[7] पुत्र नास्ति सिद्धिर्गुरोर्विना ॥३०॥

तस्मात् सर्वप्रयत्नेनार्चयेद्[8] गुर्वनुज्ञया ॥३१॥

॥ इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे चतुर्दशः पटलः ॥१४॥

॥ अथ पञ्चदशः पटलः ॥

पीतवर्णां मदाघूर्णां दृढपीनपयोधराम् ।
वन्देऽहं बगलां देवीं स्तम्भनास्त्रस्वरूपिणीम् ।

क्रौञ्चभेदन उवाच—

राजराज स वै[9] श्रीमान् रजताद्रिनिकेतन ।
पञ्चास्त्रविद्यां वद मे स्तंभनाख्यान्सपावनान्[10] ॥२॥

ईश्वर उवाच—

आद्यास्त्रं बगलानाम्नी रणस्तम्भनकारणम्[11] ।
उल्कामुखी द्वितीय[12] च स्तम्भनं भुवनत्रये ॥३॥

ज्वालामुखी तृतीयास्त्रं स्तम्भनं त्रिषु[13] दैवतैः ।
जातवेदमुखी चैव चतुर्थास्त्रं कुमारक ॥४॥

ब्रह्मविष्णुमहेशानां स्तंभनं नात्र संशयः ।
बृहद्भानुमुखी चास्त्रं पञ्चमं तु कुमारक ॥५॥

पद्मपञ्चकोटिचामुण्डा कालिकादिशतं[14] सुत ।
सपादकोटि त्रिपुरा स्तंभनास्त्रं च उत्तमम्[15] ॥६॥

---

१. घ. वैश्यपत्नी । २. घ. अर्चनं । ३. घ. दुर्वाससमता ४. घ. पुष्पितां० ।
५. घ. मातङ्गमुनिना चोक्तं । ६. ख. ग. घ. सिद्धि । ७. घ. मार्गगत । ८. ख. ०प्रयत्नेन वा० । ग. घ. प्रयत्नेन अर्चयेद् । ९. ख. सुख । ग. स चे । घ. सख ।
१०. ख. स्तम्भनाख्य सुपावनो । घ. स्तम्भनाख्यां सुपावनीं । ११. घ. ०कारणीम् ।
१२. घ. द्वितीया । १३. घ. ऋषि । १४. घ. कालिकोटिशत । १५. घ. पञ्चमम् ।

सस्कारेण विना मन्त्र साधकस्य प्रमादकृत् ।
लोकालोकस्तभन च नाम्ना उल्कामुखी[1] तथा ॥१९॥

मन्त्रोद्वार प्रवक्ष्यामि शरजन्मन् समासत ।
तार च स्तब्धमाया च शक्तिवाराहमेव च ॥२०॥

बगलामुखीपद चोक्त्वा बीजत्रय तु सर्व च ।
दुष्टाना पदमुच्चार्य पूर्वबीजत्रय वदेत् ॥२१॥

वाच मुख पद चोक्त्वा पूर्वबीजत्रय[2] वदेत् ।
स्तम्भयद्वितय चोक्त्वा 'बीजत्रय ततो'[3] वदेत् ॥२२॥

जिह्वा कीलय उच्चार्य पुनर्बीजत्रय वदेत् ।
बुद्धि विनाशयोच्चार्य पूर्वबीजत्रय[4] वदेत् ॥२३॥
प्रणव वह्निजाया च उल्कामुख्या मय मनु ।[5]
पञ्चाशदूर्द्ध्व चैवाष्टबीजबद्ध[6] सुपावनम् ॥२४॥
ऋषिश्चाप्यग्निवाराहश्छन्द:[7] ककुभमव च ।
उल्कामुखी देवता च जगत्स्तम्भनकारिणी ॥२५॥
बीज च बगलाबीज शक्ति[8] स्वाहासमन्वितम् ।
कीलक शक्तिवाराह न्यास पूर्ववदाचरेत् ॥२६॥
ध्यान यत्नात् प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदे[9] कुमारक ।
विलयानलसकाशा[10] वीरवेषेण[11] सस्थिताम् ॥२७॥

वीराम्नायमहादेवी[12] स्तम्भनार्थं भजाम्यहम् ।
एव ध्यात्वा जपेन्मन्त्र मनुलक्ष कुमारक ॥२८॥

प्रपञ्चस्तम्भन कृत्वा स्वविद्या च प्रकाशयेत् ।
तालकेन हुनेत् पुत्र लक्षमेक हुताशने[13] ॥२९॥
मन्त्रसिद्धिर्भवेत् पुत्र त्रैलोक्ये कीर्त्तिमान् भवेत् ।
तस्याज्ञया जगत्सर्व स्थावर जङ्गमात्मकम् ॥३०॥

कुमारक प्रवर्त्तन्ते[14] सर्वाश्चर्यकर भुवि ।
'सिद्धि चतुर्विधा'[15] चैव एतन्मन्त्रस्य जापके ॥३१॥

---

१. घ धोल्का मुखी । २ घ पुनर्बीजत्रय । ३ घ पुनर्बीजत्रय । ४ घ पुनर्बीज० । ५. घ. स्तब्धमायां ध्रुव वह्निजायांतोल्कामुखीमनुः । ६ घ. ०बीजयुक्त । ७ घ. ऋषिश्च । यज्ञवाराहश्छन्दः । ८ घ शक्ति । ९. घ. मन्त्रभेद । १० घ विनया० । ११. ख. वीरवेशेन । घ वीरावेशेन । १२. घ. विराण्मयीं महादेवी । १३. क ख.ग. क्षपाशन । १४. घ. प्रवर्त्तत । १५. ख. घ. सिद्धिश्चतुर्विधा ।

इच्छया वर्त्तते सर्वमाश्चर्यंकरमादरात् ।
नदी नदश्च[1] रतिमान्[2] नानापादपसंकुलम् ॥३२॥
आगच्छेत्याज्ञया[3] तस्य पुनर्गच्छन्ति चादरात्[4] ।
किन्न स्यात् पद्ययुक्तानि माहात्म्य पदग मनोः[5] ॥३३॥
कामयेन्मन्त्रमेतद्धि[6] क्रौंचभेदनकोविद ॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे पञ्चदशपटलः[7] ॥१५॥

॥ अथ षोडशः पटलः ॥

बन्धूककुसुमाभासा[8] बुद्धिनाशनतत्पराम् ।
वन्देऽहं वगला देवी स्तम्भनास्त्राधिदेवताम् ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—
नमस्ते गिरिजानाथ मन्त्रविद्यागमप्रभो ।
अधुना चास्यविस्तार वद मे करुणाकर ॥२॥

ईश्वर उवाच—
तार च स्तब्धमाया च प्रासाद[9] च ततः परम् ।
पुनर्लिख्य[10] स्तब्धमाया प्रणव च ततः परम् ॥३॥
वगलामुखिपद चोक्त्वा सर्वदुष्टपदं वदेत् ।
न(ल?)वार दीर्घसंयुक्तं बिन्दुना भूषित तथा ॥४॥
बीजपञ्चमुच्चार्य वाच मुख पद वदेत् ।
स्तम्भयद्वयमुच्चार्य पञ्चबीजानि चोच्चरेत् ॥५॥
जिह्वां कीलय उच्चार्य पञ्चबीजानि चोच्चरेत् ।
बुद्धि विनाशययुग[11] पञ्चबीजानि चोच्चरेत् ॥६॥
वह्निजायासमायुक्त[12] षष्टिवर्णात्मक[13] मनुम्[14],[15]
जातवेदमुखोमन्त्र जगदाश्चर्यंकारकम् ॥७॥
अर्कपञ्चषवर्णेन वडोऽस्य मन्त्रनायकः ।
ऋषिः कालाग्निरुद्रस्तु पङ्क्तिश्छन्द उदाहृतम् ॥८॥

---

१ प. नदाश्च । २. प. विरक्तो । ३. प. आगच्छन्ययज्ञया । ४ प. सादरात् ।
५. प. किन्न तस्याच्चद्युक्तानि० । प. पुस्तके विशेषः—
कि तस्य अपदुक्तानां माहात्म्ये वेदूप मनो ।
यद्योऽवजि पुष्पाणां त्रौंचोचदारुपंणश्च ॥
६. प. मोवदन्मन्त्र० । ७. प. ०दागमयोग पञ्चदशपटलः । ८. प. भादी । ९. प. प्रसादं । १०. प. पुनर्लिखेत् । ११ प. नाशनयुग्म च । १२. प. ०समायुक्तः । १३. प. ०त्मको । १४. प. मनु । १५. पादद्वय प. पुस्तके नास्ति ।

जातवेदमुखी मन्त्रदेवता[1] समुदाहृता ।
ॐ बीजं ह्लीं[2] च शक्तिश्च ह्रं कीलकमुदाहृतम् ॥९॥
पूर्ववन्न्यासविद्या[3] च ध्यानं वक्ष्यामि पुत्रक ।
जातवेदमुखी देवी देवता प्राणरूपिणी ॥१०॥
भजेऽहं स्तम्भनार्थं च स्तम्भनीं[4] विश्वरूपिणीम्[5] ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं त्रिशल्लक्षं सुपावनम् ॥११॥
धर्मधृग्वसनो भूत्वा चिन्तितार्थप्रदं ध्रुवम् ।
गन्धर्वाश्चैव यक्षाश्च गरुडोरगपन्नगान् ॥१२॥
वेतालडाकिनीप्रेतशाकिनीब्रह्मराक्षसान् ।
ऋषिदेवगणाश्चैव सिद्धानन्याश्च पुत्रक ॥१३॥
मधुना स्तम्भयत्येतत्[6] सत्यं शङ्करभाषणम् ।
तारं च स्तब्धमाया च वह्निबीजं च पचकम् ॥१४॥
प्रस्फुरद्वितयं चैव बीजं चैव[7] त्रयोदश ।
ज्वालामुखी 'पदं चोक्त्वा'[8] वदेद्बीज[9] त्रयोदश ॥१५॥
सर्वशब्दं ततोच्चार्य दुष्टाना पदमुच्चरेत् ।
बीज[10] त्रयोदशं चोक्त्वा वाच मुखं पदं वदेत् ॥१६॥
स्तम्भयद्वितयं चोक्त्वा पुनर्बीज[11] त्रयोदश ।
जिह्वां कीलय चोच्चार्य[12] पुनर्बीजं त्रयोदश ॥१७॥
बुद्धिं 'विनाशय चोक्त्वा'[13] पुनर्बीजं त्रयोदश ।
वह्निजायासमायुक्तं ज्वालामुख्यमय[14] मनुः[15] ॥१८॥
शतोत्तरं भवेद्विंशद्बीजवद्धो मनुस्त्वयम् ।
अत्रिश्च ऋषिरेवात्र[16] गायत्रीछन्द उच्यते[17] ॥१९॥
ज्वालामुखी देवता च स्तम्भनाय त्रिमूर्तिभिः ।
ध्यानं यत्नात् प्रवक्ष्यामि न्यासं पूर्ववदाचरेत् ॥२०॥

---

१. घ. देवी देवता । २. ख. घ. ह्रीं । ३. घ. ०विद्याः । ४. घ स्तम्भनी । ५. घ. विश्वरूपिणी । ६. घ. मनूनां सम्भवेस्येतत् । ७ घ. न्योत । ८. घ. च उच्चार्य । ९. क बोज । १०. घ. बीजा । ११. ०बीजां । १२. घ. युग्म च । १३. घ. नाशयपरम च । १४. ख. ज्वालामुख्यास्त्वय । १५. घ. स्तब्धमामाग्निद्वह्निजाया ज्वालामुखीमनुः । १६. घ. ०रेवास्य । १७. घ. एव च ।

ध्यान विना भवेन् मूकः सिद्धमन्त्रोऽपि पुत्रक।
ज्वालापुञ्जसटोन्मुक्ता[1] कालानलसमप्रभाम् ॥२१॥
चिन्मयी स्तम्भनी देवी भजेऽह विधिपूर्वकम् ।
एव ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमर्कलक्ष सुबुद्धिमान् ॥२२॥
तर्पण च गवा क्षीरैस्तालकेन हुनेत् सदा ।
तर्पण च चतुर्ल्लक्ष लक्षमेकं हुनेत्सदा[2] ॥२३॥
सहस्रद्वितय चैव 'ब्राह्मणाना सुभोजयेत्'[3] ।
त्रिमूर्त्ति स्तम्भयेन्मन्त्री पञ्चतत्वान्यपि क्षणात् ॥२४॥
प्राश्चर्यद महामन्त्र नराणा दुर्ल्लभ भुवि ।
इदानी मन्त्रराज च बृहद्भानुमुखाह्वयम् ॥२५॥
'मारण स्तम्भबाण'[4] च प्राश्चर्यं च कलौ युगे ।
तारं ह्लूँ ह्लीँ च उच्चार्य ह्लूँ ह्लँ ह्लीँ च ततः परम् ॥२६॥
ह्लुस्तथाप्युच्चरेत् पुत्र ह्ला ह्ली ह्लूँ च ततः परम् ।
ह्लँ ह्लीँ ह्लूश्च ततश्चोक्त्वा[5] बगलामुखिपद वदेत् ॥२७॥[6]
सर्वशब्द ततोच्चार्य दुष्टाना पदमुच्चरेत् ।
वाच मुख पद चोक्त्वा स्तम्भयद्वयमुच्चरेत् ॥२८॥
माद्यबीज पुनश्चोक्त्वा[7] उद्धरेत् पुनराद्यवत् ।[8]
जिह्वा कीलय उच्चार्य पूर्ववद् बीजमुद्धरेत् ॥२९॥
बुद्धि विनाशयोच्चार्य[9] पूर्वबीजानि[10] चोच्चरेत्[11] ।
वह्निजायासमायुक्तो बृहद्भानुमुखोमनुः ॥३०॥[12]
सविता च ऋषि स्यातो[13] गायत्रीछन्द एव च ।
देवता स्तम्भनार्थं च बृहद्भानुमुखो तथा ॥३१॥

---

१. प. ज्वलपुञ्जजटामुक्त । २. प. ०सुत । ३. प. ब्राह्मणान् सुत भोजयेत् ।
४. प. रणस्तम्भनबाण । ५. प. ततस्तार । ६. प्रतः परमयमधो दृश्यते प. पुस्तके—
"माद्यबीज मनोः सस्या उद्धरेत् पुनरादरात"
७. प. मनो. सस्या । ८. प. पुनरादरात् । ९ प. नाशय उच्चार्य्यं । १०. प. पूर्वबीजं । ११. प. समुच्चरेत् । १२. प. पुस्तके स्वयमशो विद्यप.—
स्तम्भमाया तारकं च वह्निजायान्तक सुत ।
बृहद्भानुमुखोमन्त्र पडुत्तरशताणके" ॥
१३ प. ऋषिरथात्र ।

बीजं च बगलाबीजं शक्तिर्माया कुमारक ।
कीलकं प्रणवं चात्र विनियोगस्ततः[1] परम्[2] ॥३२॥
पूर्ववन्न्यासविधां च तन्त्रराजवदाचरेत् ।
ध्यानं यत्नात् प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदेन पुत्रक ॥३३॥
कालानलनिभां देवी ज्वलत्पुञ्जशिरोरुहाम् ।
कोटिबाहुसमायुक्तां वैरिजिह्वासमन्विताम्[3] ॥३४॥
स्तम्भनास्त्रमयीं देवीं दृढपीनपयोधराम् ।
मदिरामदसंयुक्तां[4] वृहद्भानुमुखीं भजे[5] ॥३५॥
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमर्कलक्षं कुमारक ।
तर्पयेत्तद्दशांशं च गुडोदकसमन्वितम् ॥३६॥
तालकेन हुनेत्तस्य दशांशं संस्कृताग्निना ।
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् तद्दशांशं कुमारक ॥३७॥
मन्त्रान्ते च प्रकर्त्तव्यं सौभाग्यार्चनमादरात् ।
सौभाग्यार्चां विना पुत्र मन्त्रसिद्धिर्न जायते ॥३८॥
पञ्चास्त्रमन्त्रसिद्धिर्हि दिवि देवेषु दुर्लभा[6] ।
गोपयेत् सर्वदा पुत्र[7] 'गुप्ता वीर्यवती'[8] भवेत् ॥३९॥
'न कर्त्तव्यः प्रयोगोऽस्य'[9] सपयादि[10] कदाचन ।
यः करोति प्रयोगं च देवताशापमाप्नुयात् ॥४०॥

इति वह्निवासागमे सांख्यायनतन्त्रे षोडशः पटलः ॥१६॥

॥ अथ सप्तदशः पटलः ॥

[11]जिह्वाग्रमादाय 'करेण देवी'[12] 'वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम्'[13] ।
पीताम्बरा पीनपयोधराढ्यां[14] सदा 'स्मरेऽहं बगलाम्बिका'[15] हृदि ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

चन्द्रचूड नमस्तेऽस्तु इन्दिरापतिपूजित ।
शताक्षरीमहामन्त्रं बगलायाश्च मे वद ॥२॥

---

१. घ. विनियोगं च । २. घ. संस्मृतम् । ३. घ. ललज्जिह्वासमन्विताम् । ४. घ. मदिरामोदसंयुक्तां । ५. घ. भजेत् । ६. घ. दुर्लभम् । ७. घ. पुत्रा । ८. घ. गोप्ता वीर्यापतिर् । ९. घ. न कर्त्तव्य प्रयोगश्च । १०. ख. घ. पापदपि । ११. इतः पूर्वमयमंशो घ. पुस्तके—'हरीहरेश्च समर्थां' । १२. घ. करद्वयेन । १३. घ. मुत्पाटयन्तिमरिशक्तियुक्ताम् । १४. घ. पीत० । १५. घ. स्मरेयं बगलामुखीं ।

ईश्वर उवाच—

मन्त्रोद्धार प्रवक्ष्यामि पुरश्चर्याविधि तथा ।
प्रयोग चोपसहार वक्ष्येऽह तव पुत्रक ॥३॥

स्तब्धमाया च वाग्बीज माया मन्मथमेव च ।
श्रीबीज[1] शक्तिवाराह 'वगलामुखि चोच्चरेत्'[2] ॥४॥

स्फुरद्वय तथा चोक्त्वा सर्वशब्द[3] ततोच्चरेत् ।
दुष्टाना पदमुच्चार्य वाच मुख पद वदेत् ॥५॥

स्तम्भयद्वयमुच्चार्य प्रस्फुरद्वयमुच्चरेत् ।
विकटाङ्गीपद चोक्त्वा घोररूपीपद[4] वदेत् ॥६॥

जिह्वा कीलय उच्चार्य[5] महाशब्द ततोच्चरेत् ।
पश्चाद्भ्रमकरी चैव बुद्धि नाशय उच्चरेत् ॥७॥

विरामयपद[6] चोक्त्वा 'सर्वप्रज्ञामयीति च'[7] ।
प्रज्ञा नाशय उच्चार्य उन्मादीकुरु[8] युग्मकम् ॥८॥

मनोपहारिणी चोक्त्वा स्तभमाया[9] समुच्चरेत् ।
शक्तिवाराहबीज च लक्ष्मीबीज[10] ततः परम् ॥९॥

कामराज च हृल्लेखा वाग्भव तदनन्तरम् ।
स्तब्धमाया ततोच्चार्य वह्निजायासमन्वितम् ॥१०॥

शताक्षरीमहामन्त्र वगलानाम पावनम् ।
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोऽस्य गायत्री समुदाहृता ॥११॥

देवता वगलानाम्नी जगत्स्तम्भनकारिणी ।
ह्लीं बीज शक्तिरित्येव वाग्भव कीलक तथा ॥१२॥

पूर्वोक्ता न्यासविद्या च वगलापञ्जरादयः ।
न्यासानुक्तक्रमेणैव[11] 'जपाद्या पच एव च'[12] ॥१३॥

पीताम्बरधरा सौम्या पीतभूषणभूषिताम् ।
स्वर्णसिंहासनस्था च मूले कल्पतरोरध[13] ॥१४॥

१ घ रमा च । २. ह्लीकार बगलामुखी । ३. घ. सर्व शब्द । ४. घ घोररूप पद । ५ घ. मुच्चार्य । ६. घ. विराम्भयोपदं । ७. घ. सर्वप्रज्ञामयीत्यरे । ८. घ. उन्माद कुरु । ९. घ स्तब्धमायां । १०. घ. रमाबीज । ११ घ. न्यासमुक्तक्रमेणैव । १२ ख जपादावाचरेत् सुधी. । घ. जपादावन्त्यमेव च । १३. घ. ०स्तया ।

वैरिजिह्वाभेदनार्थं[1] छुरिका[2]बिभ्रतीं शिवाम् ।
पानपात्रं गदां पाशं धारयन्तीं भजाम्यहम् ॥१५॥

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमर्कलक्षं क्षपाशनः ।
तर्पयेद्धेतुमिश्रेण वारिणा वाथ पुत्रक ॥१६॥

'जातिपंचकसंमिश्रजलेन[3] च कुमारक ।
पूजायुतं[4] च सन्तर्प्य ह्यर्चितेन जलेन च ॥१७॥

त्रिमध्वक्तं पायसेन[5] अथवा पायसाज्ययोः ।
चरुणा वा हुनेत् पुत्र[6] सहस्रं तत्त्वसंख्यया ॥१८॥

नानादेहजरोगाश्च कृत्रिमग्रहसंभवान् ।
यावकाश्च[7] प्रयोगाश्च[8] 'तुल्यधातुसमुद्भवान्'[9] ॥१९॥

सद्यो नाशनमायान्ति मन्त्रहोमेन साधकः ।
'साज्यसक्तुघृताक्त'[10] च शमन्तकुसुमेन वा ॥२०॥

षट्सहस्रं हुनेत् पुत्र स्थण्डिले वाथ कुण्डके ।
वशीकरं च संमोहं कीर्त्तिं प्रज्ञां भवेद् ध्रुवम् ॥२१॥

तालकेन हुनेत् पुत्र सहस्रं वसुसंख्यया ।
कुण्डं चैव भगाकारे राजताग्नौ[11] कलौ निशा ॥२२॥

स्तम्भनं च भवेत् पुत्र नात्र कार्या विचारणा ।
अर्कश्च पिचुमर्दश्च[12] समिधः[13] संग्रहेत्तरः ॥२३॥

प्रत्येकं त्रिसहस्रं च प्रादेशसमिधा क्रमं[14] ।
मन्त्रं सर्वं समुच्चार्य समिधाद्वयमेव च ॥२४॥

हुनेद् ध्यानसमायुक्तः सद्यो विद्वेषणं भवेत् ।
विभीतकस्य समिधो ग्राह्यास्तु[15] त्रिसहस्रकम् ॥२५॥

षट्कोणकुण्डे जुहुयान्निशायां कृष्णपक्षके ।
स्थावरांश्च गिरींश्चैव नदीपादपसंकुलान्[16] ॥२६॥

---

१ घ. ०छेदनार्थं । २ घ क्षुरिका । ३ ख ग घ जातो(ति) पंचक० । ४ घ, वाद्यायुत । ५ घ पायसं च । ६ घ पुस्तकेऽस्मात्परमधिकोऽशो दृश्यते—
'पर्यायफलदायकं । तपस्तेन हुनेत्पुत्र' ।
७–८ घ यावकाश्च प्रयोगाश्च ९ ख ग घ वल्प(ल्य)धातु० । १० ख. शाली सक्तु० । ग साज्यसक्तु० । घ शालिसक्तुघृतावक्तां च । ११ घ रजकाग्नौ । १२ ख पिचुमर्दश्च । १३ घ समिधा । १४ ख ग प्रादेशसमिध क्रम । घ प्रादेश-समिधाक्रमात् । १५ क ग्रहास्तु । ग ग्रहान्तु । १६ घ नदीपादपसकुसुमं तथा ।

क्षणादुच्चाटन कुर्याद् होमस्यास्य प्रभावतः ।
निम्बतैलेन सयुक्तं शाल्मलीकुसुम तथा ॥२७॥[1]

जुहुयाद्देवतां[2] ध्यात्वा[3] मारणं भवति ध्रुवम् ।
षट्कर्मनिर्माणमिदं[4] सुसिद्धं
शताक्षरीमन्त्रमदोषदुःखहम् ।
होमेन सस्तम्भनमाचरेद् बुधो-
विद्यासुसिद्ध मुनिगुह्यमादरात् ॥२८॥

॥ इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे सप्तदश[5] पटलम्[6] ॥१७॥

॥ अथ अष्टादशः पटलः ॥

नमस्ते जगता[7] देवी जिह्वास्तम्भनकारिणीम् ।
भजेऽहं शत्रुनाशार्थं[8] साधकासक्तमानसाम्[9] ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

सम्यग्ज्ञान[10] महेशान नित्यनित्यस्वरूपक[11] ।
चन्द्रचूड नमस्तेऽस्तु प्रयोग वद मे प्रभो ॥२॥

ईश्वर उवाच—

षट्सहस्रं हुनेत् पुत्र दूर्वाहोममतन्द्रितः ।
'सम्यग् विषज्वर'[12] हन्ति बगलायाः प्रसादतः ॥३॥

कुशेन जुहुयात्तस्य तापज्वरहर[13] परम् ।
हुनेत् तावत् श्वेतदूर्वा ज्वरं चातुर्थिक हरेत् ॥४॥

त्रिमध्वक्त[14] श्वेतदूर्वा षट्सहस्रं हुनेत् क्रमात् ।
नानाविध गर हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥५॥

दधिमिश्र गुडूचीभिः शर्करागुडसम्मिश्रम्[15] ।
जुहुयात् षट्सहस्रं तु नानामेहनिवारणम् ॥६॥

---

१. ध. पुस्तके श्लोकोऽयं नास्ति । २. ध. जुहुयाद्दत्त । ३. ध. ध्यायन् । ४. ध. षट्कर्माणि मिद । ५. ध. सप्तदशम । ध. सप्तदशः । ६. ध. पटमः । ७. ध. बगला । ८. ध. शत्रुनाशाय । ९. ध. मदिरासक्त० । १०. ध. सत्यज्ञान । ११. ध. नित्यानित्य० । १२. ध. सद्यस्तापज्वर । १३. ध. शीतज्वर० । १४. ध. त्रिमधुयुक्ता । १५. ख. मिश्रितम् ।

सर्षपं लवणोपेतं पूर्ववज्जुहुयान्नरः ।
नाशयेद् गुल्मरोग[1] च भोषधेन विना महत् ॥७॥

षट्सहस्रं हुनेत् पुत्र शर्कराज्यसमन्वितम् ।
'पित्तोद्रेकादिसर्वा श्च'[2] रोगान्नाशयति[3] ध्रुवम् ॥८॥

शालिसक्तुं[4] घृतोपेत[5] वशीकरणमुत्तमम् ।
लाजाहोम[6] षट्सहस्र लमेद्वाञ्छितकन्यकाम् ॥९॥

हरिद्राखडहोम[7] तु षट्सहस्र[8] सुबुद्धिमान् ।
गर्भस्तम्भो भवेन्नारी सापि वश्या[9] भवेद् ध्रुवम् ॥१०॥

केतकीदलहोमेन गणिका वश्यमाप्नुयात्[10] ।
हुनेत् पद्मदलेनैव नेत्ररोग विनश्यति ॥११॥

मल्लिकाकुसुमेनैव प्रधिका च मतिर्भवेत्[11] ।
जातीफलेन जुहुयादुन्मत्तो जायते रिपुः ॥१२॥

षट्सहस्रं देवकुसुम[12] शर्कराज्यसमन्वितम् ।
बुद्धिग[13]श्चैव चाञ्चल्य सज्ञानमुन्मतिस्तथा[14] ॥१३॥

प्रलोकेन[15] क्षुद्रमतिर्दुबुंद्धि सिद्धबुद्धिता[16] ।
तत्क्षणान्नाशमाप्नोति तम. सूर्योदये[17] यथा ॥१४॥

मास सपुटसयुक्त[18] 'द्रव्येण सममेव च'[19] ।
अयुत जुहुयाद्रात्रौ सद्यो धनपतिर्भवेत् ॥१५॥

मध्वाक्त 'छागमास च'[20] त्रिसहस्र हुनेत् सुत ।
'भूलाभ जायते'[21] शीघ्रं ग्रामादिपतिरेव[22] च ॥१६॥

गौडोद्रव्येण जुहुयात् सहस्रं बाणसख्यया ।
बहुमूत्रादिरोगाश्च नाशयेत्तान्[23] न संशय ॥१७॥

---

१. ग गुल्मरोग । २. घ. पैस्योद्भवाश्च घातशो । ३. •नाशयेद् । ४. ख. ग. घ. शालिशक्तु । ५. घ. सितोपेत । ६. घ. लाजहोमात् । ७. घ. होमस्तु । ८. क. सहस्रं । ९. ख. वश्या । १०. घ. •मादरात् । ११. ख. बाधिका शुभमतिर्भवेत् । १२. घ देवपुष्प । १३. ख. उद्वेग । १४. उच्चाटकमतिस्तथा । १५. ख. प्रविवेक घ. प्रविवको । १६. ख. मन्दबुद्धिता । घ. धिद्धिबुद्धिता । १७. घ. सूर्योदयो । १८. ख. तु कुक्कुटस्यैव । घ. कुक्कुटसमूत । १९. घ. त्रिमधुः सहितेन । २०. घ. छागपिशितं । २१. घ सुलभ च भवेत् । २२. घ. ग्रामाधि० । २३. क. ग. घ नाशयति ।

माध्वीद्रव्येण जुहुयात् षट्सहस्रं क्रमेण च ।
ज्वरपैक्ष्यादिरोगांश्च[1] सद्यो नाशनमाप्नुयात् ॥१८॥

पैष्टीद्रव्येण जुहुयान्निशास्वष्टसहस्रकम् ।
सग्रहग्रहणीरोग सद्यो नाशनमाप्नुयात् ॥१९॥

अन्नेन 'अन्वहो हुत्वा'[2] अन्नदानपतिर्भवेत्[3] ।
घृतेन कान्तिमान् भूत्वा[4] नारीणामात्मदो[5] भवेत् ॥२०॥

क्षीरेण श्रमनाशश्च दध्ना तापननाशनम्[6] ।
पञ्चगव्येन जुहुयात् पूर्ववत् पाप नाशयेत्[7] ॥२१॥

गोमूत्रेण हुनेन्मन्त्री[8] षट्सहस्रं क्रमेण च[9] ।
तालीमद्येन[10] जुहुयात् स्त्रीणामाकर्षणं भवेत् ॥२२॥

खर्जूरजेन द्रव्येण पुंसामाकर्षणं भवेत् ।
तिलतैलेन जुहुयात् सर्वाकर्षणमाप्नुयात् ॥२३॥

एरण्डतैलेन जुहुयाद्[11] वाचाकर्षणमाप्नुयात्[12] ।
कुसुंभतैलहोमेन[13] काकगृध्राननेकशः[14] ॥२४॥

आकर्षण भवेच्छीघ्र खेचराः पक्षिजातयः[15] ।
यवना[16] पानहोमेन अग्निमध्याद्रिपुः[17] स्वयम् ॥२५॥

रोगी च जायते मासाच्छिवस्य वचन यथा ।
जुहुयादारनालेन पित्तरोगी भवेद्रिपुः ॥२६॥

निम्बपत्रद्रवेणैव वातरोगी भवेद्रिपुः ।
मोहिनीपत्रजद्रावैः[18] श्लेष्मरोगी भवेद्रिपुः ॥२७॥

---

१. ग घ. ज्वरपैत्यादि० । २. घ. हुत्वान्नकामी । ३. घ. ०दानपरो० । ४. घ. हुत्वा । ५. नारीणां मन्मथो । ६ घ. तापनिवारणम् । ७. घ. पापशान्तये । ८. घ. हुनेद्धीमान् । ९. घ. पुस्तके विशेषः—

'विदार विषदो भावाद्रिपुर्भ्रान्तो भविष्यति' ।

१०. ख. तालीमद्येन । घ. तालमद्येन । ११. घ. एरण्डतैलहोमेन । १२. घ. गवाकर्षण० ।

१३. ख. ग. घ. पुस्तकेष्वतः परमयमधो दृश्यते विशेषः—

'पूर्ववद्धोममात्रतः । जलजानां च होमेन(घ. जलजाश्चैव यो भेदा)भवेदाकर्षणं सुत ।
करजतैलहोमेन' ।

१४. घ. काकगृध्राण्यनेकशः । १५. घ. पक्षिजा यत' । १६. ख. यवमा । घ. यावतालाप । १७. घ. अग्निमार्धं रिपो. । १८ ख. मोहिपत्रजतद्रावैः ।

अर्कपत्रद्रवेणैव क्षयरोगी भवेद्रिपुः ।[1]
'वज्रीक्षीरेण सयुक्मारनालेन'[2] पुत्रक ॥२८॥
जुहुयात् पट्सहस्रं तु बगलाध्यानपूर्वकम् ।
नाडीव्रणसमायुक्तो[3] (:) षण्मासान्म्रियते रिपुः ॥२६॥
गर[4] च तिलतैलं च आरनालयुतेन च ।
'ग्रामे वा नगरे वाप'[5] बगलाध्यानपूर्वकम् ॥३०॥
'स्फोटव्रणाश्च जायन्ते'[6] रिपोर्योजनमात्रत,[7] ।[8]
तिलतैलेन सयोज्य यावनालान्नमेव[9] च ॥३१॥
जुहुयात् पूर्ववच्छत्रु[10]'मण्डलाच्छिन्नयोपक.[11] ।
कर्पूरमिलित[12]चैव तिलतैलं हुनेत् सुधी.[13] ॥३२॥
मारणं[14] मण्डलाच्छत्रो[15]र्नात्र कार्या विचारणा ॥३४॥

इति बगलाविद्यायाम सांख्यायनतन्त्रे अष्टादश.पटलः ॥१८॥

॥ अथैकोनविंशः पटल. ॥

चतुर्भुजां त्रिनयनां पीतवस्त्रधरां शुभाम्[16] ।
वन्देऽहं बगला देवीं शत्रुस्तम्भनकारिणीम् ॥१॥

---

१. सप्तविंशतिपद्योत्तरार्द्धस्याष्टाविंशतिपद्यपूर्वार्द्धस्य च स्थानेऽयमंशो लभ्यते घ. पुस्तके–
'पत्र' विभीतकोद्भूत तस्य स्वरसहोमतः
जातिभ्रष्टो भवेच्छत्रुर्नान्यथा शिवभाषितम् ॥
तस्कारिपत्रजद्रावैः कर्मभ्रष्टो भवेद्रिपुः ।
निर्गुण्डीपत्रजद्रावैर्ज्वररोगी भवेद्रिपुः ॥
कर्पासपत्रजद्रावैर्होमेन कुमारक ।
बद्धकोष्ठश्च रोगस्य स्वभावेनैवसिद्ध्यति ॥
हरीतकीश्च होमेन क्षयरोगी भवेद्रिपुः ।
२. घ. वज्रक्षीरेण समिश्र० । ३. घ. नाडीव्रणपरो भूत्वा । ४. घ. मगर । ५. घ पुस्तके विशेषः—
नगरे वाप ग्रामे वा अर्कक्षीर चारनाल पूर्ववज्जुहुयात् क्रमात् ।
— भगदरव्रणो भूत्वा षण्मासान् म्रियते रिपुः ॥
६. घ. फोटकव्रहा रोगेन । ७. घ. रिपुर्यो० । ८. अतः परमदः ख. घ. पुस्तके विशेष
'म्रियते नात्र सन्देहः शिवस्य वचनं यथा ।
क. ख. यावनालान्नमेव १०. घ. पूर्ववत्पुत्र । ११. ख. ग. छिन्नसधय । घ. ०शत्रुमारणम् । १२. घ. ०मिश्रितं । १३. घ. सुत । १४. घ. म्रियते । १५. घ. च्छत्रु । १६. घ. शिवाम् ।

स्कन्द[1] उवाच—

नमस्ते योगिससेव्य नमः[2] कारुणिकोत्तम ।
प्रयोगं चोपसहारं वद मे सर्वमङ्गल ॥२॥

ईश्वर उवाच—

प्रेताङ्गारमयी[3] कृत्वा सितवस्त्रेण[4] बुद्धिमान् ।
शल्य[5] तदन्तरे भस्म वैरिनाम[6] च सलिखेत् ॥३॥
'एकार्णा बगला देवी[7] ' वेष्टयेत् सम्यगादरात् ।
'शताक्षरी च सवेष्टय ईशानादिषु[8] ' वेष्टयेत् ॥४॥
तद्वस्त्र[9] गुलिकीकृत्य[10] वेष्टयेत् प्रेतरज्जुना ।
भौमवारे समानीय स्थापयेद् वृक्षकोटरे ॥५॥
वृक्षमूले जपेन्मन्त्रममुत/ध्यानपूर्वकम् ।
पुत्रदारादिसंयुक्तः पक्षाच्छत्रुर्मृतो भवेत् ॥६॥
भूर्जपत्रे[11] लिखेन्नाम[12] बगलाबीजमध्यमम् ।
कोटरे स्थापयेत् पुत्र विभीतकतरोस्तथा ॥७॥
जिह्वास्तम्भ भवेच्छत्रोः पक्षमात्रेण पुत्रक ।
बृहस्पतिसमो वापि वाचस्पतिसमोऽपि वा ॥८॥
तालमध्ये लिखेन्नाम बगलाबीजमध्यमम्[13] ।
प्राणप्रतिष्ठा कृत्वाऽस्य[14] निर्दहेद्[15] दीपवह्निना ॥९॥
जपेत्तत्र सहस्रैक शताक्षरमनुं[16] तथा ।
जिह्वास्तंभं भवेच्छीघ्रं[17] दोषमापापतिः स्वयम् ॥१०॥
प्रेतमाण्डे लिखेन्नाम प्रेताङ्गारेण[18] साधकः ।
प्राणस्थापनक कृत्वा रवौ रात्रौ सुबुद्धिमान् ॥११॥
प्रेताग्नौ प्रेतकाष्ठे तु[19] निर्दहेत् प्रेतकानने ।
नग्नः श्मशानमध्ये तु जपेद् दक्षिणदिङ्मुखः ॥१२॥

---

१. घ. क्रौञ्चभेदन । २. घ. महा । ३. ख. ॰मयीं । घ. मशि । ४. घ. प्रेतवस्त्रे च । ५. ख. ग. घ. शल्यं । ६. घ. अरि॰ । ७. घ. एकाक्षरीं च बगलां । ८. घ. मन्त्रशताक्षरीभिश्च ईशान्ये दिशु । ९. क. घ. तद्वस्त्र । १०. घ. गुटिकीकृत्य । ११. ग. घ. भूर्यपत्रे । १२. घ. रिपुर्नाम । [illegible]. ख. ग. घ. ॰मध्यगम् । १४. घ.॰ तु । १५. ग. निर्दहो । १६. घ. शताक्षरिमनु । १७. ॰च्छत्रोः । १८. प्रेतांगारेणे
१९. घ. पु ।



सहस्र ध्यानपूर्वं तु प्रातयमि समासत[1] ।
एव कृत्वा तु[2] सप्ताह ज्वरस्थो जायते भुवि ॥१३॥

मासान्मृत्युवशो[3] भूत्वा विनश्यति न संशयः ।
श्रीसूक्तमार्जनेनैव तन्मन्त्रेणाभिमन्त्रितम् ॥१४॥

शतमष्टोत्तर चैव[4] सहस्र वा कुमारक ।
मन्त्रितोदकपानेन पुण्य सुखमवाप्नुयात् ॥१५॥

चिताभस्म[5] चिताङ्गार चिताभ्र[6] च कुमारक ।
मोहिनीपत्रजद्रावैर्मर्दयेत् सूक्ष्मतोऽनघ ॥१६॥

सम सम रिपूच्छिष्ट मर्दयेत् कल्पयेत् पुन ।
'चतुरङ्ग ला पुत्तली'[7] कुर्यात् सर्वाङ्गसयुताम् ॥ ७॥

हृदि तन्नाम चालिख्य ललाटे बगला लिखेत्
सर्वाङ्गे चाग्निबीज च लिखेद् बिन्दु च निर्दहेत ॥१८॥

प्रेतवह्नौ प्रेतकाष्ठे प्रेतमास सुपुत्रक[8] ।
जपेत्तावायुत पुत्र रिपुर्गच्छेद्यमालये[9] ॥१९॥

स्नुह्या[10] क्षीरेण सयुक्त 'मर्दयेत् श्वेतसर्षपै'[11] ।
चतुरङ्गलपुत्तल्या लिखेत् पूर्ववदाचरेत ॥२०॥

'स्थापयेच्चुल्लपधोभागे'[12] यमघटकयोगत ।
तत्रोपरि दिवारात्रौ अग्नि सस्थाप्य बुद्धिमान् ॥२१॥[13]

बगलाबीजमध्यस्थ साध्यनाम च सलिखेत् ।
वेष्टयेद्बगलामन्त्र ईशानादिशताक्षरम्[14] ॥२२॥

प्राणप्रतिष्ठा कृत्वा तु सहारक्रमतोऽर्चयेत् ।
शताक्षर्यर्कक्षीरैस्तु स्नुहीक्षीरेण लपयेत् ॥२३॥[15]

---

१ घ समापयेत् । २ घ. नु । ३ क ख ग ०वशे । ४ घ वाथ । ५ घ चितिभस्म । ६ घ प्रेताभ्र । ७ घ चतुर पुत्तलीं चैव । ८ घ च पुत्रक । ९ ख. ग घ ०यमालयम् । १० घ स्नुही । ११ घ. श्वेतसर्षप मर्दयेत् । १२ घ ०चुल्ल्य० ।
१३. ख घ पुस्तकयोऽयमशो विशेष —

अयुत च दिवारात्रौ एकाक्षरमनु जपेत्
मसूरिकाज्वराच्छत्रु पश्चान्मरणमाप्नुयात् ।
अर्कपत्रे लिखेन्नाम अर्कक्षीरेण बुद्धिमान् ।

१४. घ ईशान्यादि० । १५ ख ग. घ पुस्तकेषु निम्नांशो विशेष —
सतपेदीपशिखया पुत्तलो तां विशेषत ।
अष्टोत्तरशतं कृत्वा शताक्षर्यादि कल्पयेत् ॥

एवं कृते सप्तरात्रं स शत्रुश्च मृतो भवेत् ।
मसूरिकाजरासक्तः पश्चाद् गच्छेद् यमालयम् ॥२४॥
मन्त्रयेन्निम्बपत्रेण एकमेकं क्रमं क्रमम् ।
चन्द्रप्रसादमन्त्रेण शीतलाविद्यया तथा ॥२५॥[1] ॥
सपर्णं[2] क्षालयेत् क्षीरैः सदाहः शान्तिमाप्नुयात् ।[3]
तिक्तकोशातकीजातिः[4] तापिच्छी सादरं तथा ॥२६॥
धत्तूरकं च तन्मूर्द्धनि 'कारवेल्या फलाकृतिम्'[5] ।
'षट्मन.शिलाबीजैश्च'[6] ति् पादद्वय तथा ॥२७॥
बदरीमूलतो गत्वा प्राणस्थापनकं चरेत् ।
मन्त्रमुच्चारयेत्पुत्र तदन्तः शत्रुमुच्चरेत् ॥२८॥[7]
श्रोत्रालीगण्डभ्रूमध्ये जिह्वानासास्यशेफसी[8] ।
'दक्षिणाभिमुखो भूत्वा'[9] बगलासम्पुटद्वयम्[10] ॥२९॥
ब्रह्मस्थाने तालुदेशे कण्टकानर्कसंख्यया ।
'दक्षिणाभिमुखो भूत्वा'[11] रोपयेन्नग्नतस्तथा[12] ॥३०॥
पञ्च पञ्च करे रोप्य पार्श्वे कुक्षौ च पृष्ठके ।
कण्टकान् सप्तसंख्याकान् 'मन्त्रयेत् पूर्ववत् क्रमात्'[13] ॥३१॥
रोपयेत् पादयुग्मे तु प्रत्येकं[14] द्वादशं तथा ।
'मन्त्रपूर्वं च सरोप्य'[15] बदरीकण्टकांस्तथा ॥३२॥
पुराली प्रेतवस्त्रेण बद्ध्वा प्रादेशगर्भके[16] ।
श्मशानाग्नौ[17] क्षिपेद्[18] रात्रौ बलिं दद्याच्च कुक्कुटम्[19] ॥३३॥

---

१. अतः परमयमंशोऽवलोक्यते घ. पुस्तके—
"एकाक्षरीविद्यया च दशाक्षर्या च विद्यया" ।
२. सुपर्णान् । ३. घ. पुस्तके निम्नांशो दृश्यते
मंत्रितं जुहुयान्मंत्री क्षीरे वापि तथैव च ।
सप्ताहाच्छान्तिमाप्नोति तमः सूर्योदये तथा ॥
४. घ जाती । ५. ख. कारवेल्य० । घ. कारवल्या० । ६. ख. ग. षट्शिला निम्बबीजैश्च ।
घ. षट्छिता निम्बपत्रैश्च । ७. घ. पुस्तके विशेषः पाठः—
कण्टकान्तो(न्ता)पयेदर्कनेत्राद्यगेषु पुत्रक ।
८. घ ०शेफसौ. । ९. क. ग. घ. पुस्तकेषु नास्ति । १०. घ. पुस्तके नास्ति । ११. घ. दक्षिणाभिमुखं स्थित्वा । १२. घ. ०नग्नतो रवौ । १३. घ. रोपयेन्मन्त्रपूर्वकम् ।
१४. घ. द्वादश । १५. घ. मन्त्रपूर्वान् समारोप्य । १६. घ. ०गर्भके । १७. घ. श्मशाने ।
१८. घ. निक्षिपेद् । १९. घ. कुक्कुटम् ।

अश्मयंद[1] रिपोरङ्गे नाडीशूलं भवेद् ध्रुवम् ।
तेनैव दुःखितः शत्रुः पश्चाद् गच्छेद् यमालयम् ॥३४॥

वक्ष्येऽहं चोपसंहारं जीवस्थोऽपि रिपुं[2](पुर्) यथा[3]।
रवौ रात्रौ बलिं दत्वा[4] चानीत्वा[5] साधकोत्तमः ॥३५॥

उत्पाटय कण्टकान्यादो[6] क्षीरेण क्षालयेत् सुत ।
तच्छलाका[7] च[8] संक्षाल्य निःक्षिपेत् कूपमध्यगे ॥३६॥

निःक्षिपेन् मन्त्रपूर्वं च एकैकं चोत्तरामुखः[9] ।
शल्वकेनैव[10] मन्त्रेण मन्त्रयेत् कलशोदकम् ॥३७॥

सहस्रवारं विधिवन्[11] मन्त्रेण[12] वारिभिः क्रमात् ।
प्रयोग[13] पीडितं[14] तेन मार्जयेच्छाम्भवेन[15] तु ॥३८॥

स्थापयेत्[16] तेन मंत्रेण मन्त्रसिद्धिस्तु पुत्रक ।
ताम्रपात्रे नदीतोये[17] नदीवेगाग्रवेष्टितः[18] ॥३९॥

तस्मिंश्च मन्त्रयेत् साध्यं मन्त्रेणैव शतं तथा[19] ।
त्रिकालं प्राशयेत्तोय मध्याह्ने मार्जनं तथा ॥४०॥

त्रिदिनं चाथवा पञ्च ऋषिसंख्यादिनेषु च[20][21] ।
एवं कृते पीडितस्य[22] 'पीडा सूर्योदये यथा'[23] ॥४१॥

'संहरेच्छान्तिमाप्नोति तमः सूर्योदये यथा'[24] ।
न ज्ञात्वा चोपसंहार यः करोति नराधमः ॥४२॥

स जीवन्नेव चाण्डालो मृतः श्वानो भविष्यति[25] ।
प्रयोगं चोपसंहारमभ्यसेच्च कुमारक ॥४३॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे एकोनविंशः[26] पटलः ॥१९॥

---

१. ख. अश्मर्षद । घ. अर्चयेत्तं । २. घ. रिपु । ३. घ. यदा । ४. घ दद्या । ५. ख. नीत्वा सा । घ. दानीत । ६. घ. कण्टकान् सर्वा । ७-८. घ. तलालट तु । ९. घ. चोत्तर मुखम् । १०. ख. घ. शाभवेनैव । घ. शालुवेशेन । ११. विधिना । १२. घ. मन्त्रित । १३. ख. घ. प्रयोग । १४. घ. भुदितं । १५. घ. शालुवेन । १६. घ. तर्पयेत् । १७. घ. तोय । १८. घ. नदीवेगाग्निवेशितम् । १९. घ. मंत्रयेत् शल्य-मन्त्रेण शतवारं सहस्रकम् । २०. घ. वा । २१. घ. पुस्तके विशेषः पाठः—

देवता शान्तिमाप्नोति तमः सूर्योदये यथा

२२. घ. तस्य पीडा । २३. घ. शान्तिमाप्नोति निश्चितम् । २४. घ. पुस्तके नास्ति । २५. घ. भिजायते । २६. घ. एकोनविंशतिमं ।

॥ अथः विंशः पटलः ॥

सर्वावयवशोभाढ्या[1] समपीनपयोधराम् ।
हृदि संभावये[2] देवी बगला सर्वसिद्धिदाम् ॥१॥

स्कन्द[3] उवाच—

नमस्ते पार्वतीनाथ नमः पन्नगभूषण ।
परविद्याभेदनं च बगलायाश्च मे वद ॥२॥

ईश्वर उवाच

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि मन्त्रसंभेदनाविधिम् ।
प्रयोगं चोपसंहारं शृणु सर्वं कुमारक ॥३॥

उद्धरेत्तारमादौ तु स्तम्भमायां ततः परम् ।
श्रीर्माया शक्तिवाराह् 'वाग्भवं मन्मथं तथा'[4] ॥४॥

विलिखेत्तार्क्ष्यबीजं[5] च बगलामुखी[6] समुच्चरेत् ।[7]
परप्रयोगमुच्चार्य ग्रसयुग्मं 'ततः परम्'[8] ॥५॥

पूर्ववन्नवबीजं च ब्रह्मास्त्रपदमुच्चरेत् ।
रूपिणीपदमुच्चार्य परविद्यापदं[9] वदेत् ॥६॥

ग्रसनीति[10] पदं चोक्त्वा भक्षद्वितयमुच्चरेत्[11] ।
पूर्ववन्नवबीजं च परप्रज्ञापदं वदेत् ॥७॥

हारिणीति पदं चोक्त्वा 'प्रज्ञाख्यातियुगं वदेत्'[12] ।
पूर्ववन्नवबीजं च स्तम्भनास्त्रपदं वदेत् ॥८॥

रूपिणीपदमुच्चार्य बुद्धिं 'वाचायुगं वदेत्'[13] ।
पञ्चेन्द्रियपदं चोक्त्वा ज्ञानं भक्षद्वयं वदेत् ॥९॥

पूर्ववन्नवबीजं च बगलामुखि उच्चरेत् ।
हुं फट् स्वाहा'समायुक्तं बगलामन्त्रमुत्तमम्'[14] ॥१०॥

शतोत्तारं मन्त्रबीजमष्टाविंशतिरेव च ।[15]
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोऽस्य गायत्री समुदाहृता ॥११॥

---

१. घ ०शोभाढ्या । २. क. संभावयवे । ३. घ. क्रौञ्चभेदन । ४. घ. वाराहं वाग्भवं स्मर । ५. घ. सलिखे० । ६ ०मुखि । ७. घ. वोच्चरेत् । ८. घ. ततोच्चरेत् । ९. घ. ०पर । १०. घ. ग्रसतीति । ११. घ. भक्षयद्वय० । १२. घ. प्रज्ञां प्रज्ञायुग्मकम् । १३. घ. विनाशययुग्मकम् । १४. घ. स्वाक्षिचन्द्रवर्णाढ्यं मन्त्रमुत्तमम् । १५. पद्द्वयमिदं नास्ति घ. पुस्तके ।

परविद्याभक्षणी च वमला देवता स्वयम् ।
अत्र प्रयोग वक्ष्यामि मन्त्रस्यास्य कुमारक ॥१२॥ ।
पाशाङ्कुशेनान्तरितः शक्तिबीजेन[1] विन्यसेत् ।
'तत्तद्वागीश्वरीबीजंस्तद्वच्छ्रीबीजतो न्यसेत्'[2] ॥१३॥
लघुषोढा च विन्यस्य क्रमादेव कुलेश्वरो ।
ध्यान यत्नात् प्रवक्ष्यामि क्रौञ्चभेदनकोविद ॥१४॥
सर्वमन्त्रमयी देवी सर्वाकर्षणकारिणीम् ।
सर्वविद्याभक्षणी[3] च भजेऽहं विधिपूर्वकम् ॥१५॥
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षमेक क्षपाशनः ।
तर्पयेदासवेनैव तद्दशांश कुमारक ॥१६॥
छागमांसेन जुहुयात् मध्वाज्येन[4] समन्वितम् ।
खण्डमामलकप्रस्थमयुत[5] च कुमारक ॥१७॥
योगिनी वीरपूजां च ह्याचरेच्च समादरात् ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तत्र नात्र कार्या विचारणा ॥१८॥
परप्रयोगकालेषु[6] मन्त्रमेत[7] कुमारक ।
'सहस्रत्रितय जप्त्वा'[8] स शत्रुरवशिष्यते ॥१९॥
शत्रवश्च पुरश्चर्यां यत्र कुर्वन्ति पुत्रक[9] ।
तत्रायुतं जप कुर्यात् तत्र विघ्न प्रजायते ॥२०॥
यत्र कुत्रापि रिपवस्तपः कुर्वन्ति निश्चलात् ।
तत्रायुत जपेन्मन्त्र ग्रसते[10] परविद्यया[11] ॥२१॥
अयुत तस्य मन्त्रन्तु[12] अभिमन्त्र्य[13] फल भवेत् ।
द्रव्याभिमानिनो ये च ये च विद्याभिमानिनः ॥२२॥
रूपाभिमानिनो ये च 'ये च'[14] यौवनमानिनः ।
यत्र कुत्रापि तिष्ठति मंत्रमेत कुमारक ॥२३॥

---

१. घ शक्तिबीज च । २. घ. तत्तो नागीश्वरी तद्वच्छ्रीबीजं च ततो न्यसेत् ।
३. ०क्ष. घ. भक्षिणीं । ४. घ. माध्वाज्येन । ५. घ. ०प्रस्थमयुत । ६. घ. तु ।
७. घ. ०मेन । ८. घ. सहस्रत्रितयान् पुत्र । ९. क. ग. निपुत्रक । १०. घ ग्रस्ते ।
११. घ. रिपुविद्यया । १२. घ. मन्त्रस्य । १३. घ. अभिमन्त्र्य । १४. घ. नास्ति ।

परविद्याभक्षणाख्य[1] मत्र चैवायुत जपेत् ।
श्वेतवेशान्[2] समायाति दन्तशून्यो भवद्रिपु· ॥२४॥
सद्यो यौवनहीन[3] तु[4] 'तम सूर्योदय यथा'[5] ।
रूपवान व्रणयोगी च भवत्यव न सशय ॥२५॥
जात्याभिमानिनो ये च निन्दको भवति ध्रुवम्[6] ।
'तपोऽभिमानिनो ये च'[7] अङ्गहीनो विजायते[8] ॥२६॥
वैदिक च परित्यज्य विपरीतकृत[9] भवेत् ।
विद्याभिमानिन सर्वेंष्व्ययुत[10] जपमाचरेत्[11] ॥२७॥
भवेद्विद्याविहीनोऽपि मुष्करो[12] भवति ध्रुवम् ।
देहाभिमानी पुरुषो नष्टदेहो भवेद् ध्रुवम ॥२८॥[13]
सौभाग्यन समायुक्त[14] सर्वं सम्मोहन भवेत् ।
एतन्मनस्य माहात्म्य न जानन्ति ह्यपीश्वरा ॥२९॥
'सर्वें स्व'[15] देहज मह्य[16] स्वप्रभावात्[17] प्रकाशिनी ।
योगाभ्यासो[18] योगसिद्धो[19] तपस्वी सत्यवादिन ॥३०॥
मन्त्रण[20] सिद्धोऽसिद्धोऽपि यत्र प्रत्यति[21] पुत्रक ।
परविद्याभदन च मन्त्रोपासनतत्पर ॥३१॥
यत्र गत्वा समासीन एतन्मन्त्रायुत जपेत् ।
योगसिद्धो मन्त्रसिद्धस्तपस्वी शतजीविन '(त.)[22] ॥३२॥
महाकान्तो[23] भवेन्नो चनिन्दकोऽपि भवेद ध्रुवम् ।
ये ये[24] तन्मन्त्रराज च नित्यमष्टोत्तर जपेत ॥३३॥
'एतद्राज्य स मासेन'[25] अम्बासेवापरो[26] भवत् ।
न तत्समधिको[27] भूयात्सव द्वयकरो भवत् ॥३४॥

१ घ ०भक्षणार्थं । २ घ श्वेतकेशा । ३ घ ०हीन । ४ घ च । ५ घ भवत्यव न सशय । ६ घ पुस्तके नास्ति । ७ घ नास्ति । ८ घ विजायते । ९ घ विपरीतक्रमो । १० घ सर्वं व्ययुताज । ११ घ जपमासुत । १२ ख घ सूकरो । १३ ख घ पुस्तकस्य पाठोऽय विशेप —
द्रव्याभिमानी पुरुषो नष्टद्रव्यो भवेद् ध्रुवम् ।
१४ घ समायुक्त । १५ ख सवस्व । १६ घ मोह । १७ घ स्वप्रकाशात । १८ घ योगाभ्यासे । १९ घ योगसिद्धि । २० घ यन्त्रेण । २१ [redacted] तिष्ठति । २२ घ योगसिद्धस्तपस्वी च मन्त्रसिद्धा समीपत । २३ ख ग मदाक्रा तो । घ पापाक्रान्तो । २४ घ ए । २५ घ तद्राज्य च जना सर्वे । २६ घ वश्या सेवा० । २७ घ ०समाधिको ।

नैव निन्दाकरो भूयाद् 'यदीच्छेद्धे च(च्चेत्स्व)जीवितम्'[1] ॥

॥ इति परविद्यागमे साम्प्रायमतन्त्रे विंशतिः[2] पटलः ॥२०॥

॥ अथैकविंशः पटलः ॥

परप्रज्ञोपसहारी[3] परगर्वप्रभेदिनीम्[4]।[5]
परविद्याकर्पणं[6] च प्रयोग वद शङ्कर ॥१॥

ईश्वर उवाच—

विश्वमेतद्भक्तिमय[7] 'सा भक्तिर्वगलामया'[8] ।
'एतच्च भासमाना'[9] तां वगलां च कुमारक ॥२॥

वाङ्मय चैव वैचित्र्य त्रिषु लोकेषु वर्त्तते ।
तद्गर्वहरणार्थं च विद्यामेतां कुमारक ॥३॥

मनसा 'तु जपन्मन्त्र'[10] मुख तस्यावलोकयेत् ।
भय च विस्मृतिर्भ्रान्तिस्तत्क्षणाद् भवति ध्रुवम् ॥४॥

पानपात्र वैरिजिह्वां गदा शूलेन सयुताम् ।
पीतवर्णां मदाघूर्णां चिन्तयेदानन रिपो. ॥५॥

स तु भाषापतिः साक्षाद् बृहस्पतिरिव स्वयम् ।
'स तु जाड्यतरो,'[11] भूत्वा निन्दितो भवति ध्रुवम् ॥६॥

अस्त्रशस्त्रमय मन्त्र यो जानाति कुमारक ।
तत्र गत्वा महामन्त्रं जपेद्देवीमनन्यधीः[12] ॥७॥

त्रिसहस्रं ध्यानयुक्तं तस्य विद्या कुमारक ।
विस्मृतिश्च भवेच्छीघ्र नात्र कार्या विचारणा ॥८॥

अत्यन्तैश्वर्य्यसयुक्तो[13] द्विषता[14] वर्त्तते[15] यदि ।
तस्य गेहे[16] सोमवारे निशि नग्नेन बुद्धिमान् ॥९॥

---

१. घ. यदीच्छेज्जीवनं भुवि । २. घ परविद्याप्रयोगनाम विंशति । ३. घ. प्रज्ञापहरणी । ४. घ. ॰प्रभेदनी । ५. ख. ग. घ. पुस्तकेषु निम्नांशो विशेषः—

परविद्याभक्षिणी तां वगलां हृदि भावयत् ।
स्कन्द (घ. क्रौञ्चभेदन) उवाच ॥
नमस्ते योगिससेव्य योगिराज नमो नमः ।

६. घ. ॰कर्षणी च । ७. घ. ॰च्छक्तिमय । ८. घ तच्छक्तिर्वगलाह्वया । ९. ख. एतत्प्रभासमाना । घ. एकत्र भासमाना । १०. घ. प जपेन्मन्त्रं । ११. घ. सद्यो जाड्यतमो । १२. घ. जपेद्भुवि॰ । १३. घ. ॰सयुक्तं । १४. ख. द्विषितो । घ. द्विषतो । १५ घ. वर्त्तये । १६. घ. गेहे ।

प्रदक्षिणत्रयं कृत्वा दिशि कौबेरदिङ्मुखः ।
सहस्रं सप्तरात्री[1] च नष्टद्रव्यो भवेद् ध्रुवम् ॥१०॥
ग्राम वा नगरं वाथ नित्य कृत्वा प्रदक्षिणम् ।
जपेदयुतसख्या तु[2] तद्ग्राम तु[3] कुमारक ॥११॥
सस्यादिभिर्विनश्यन्ति द्रव्य[4] चोरेण नश्यति ।
पशुभिर्म्रियते पुत्र मासाद्दोर्भाग्यमाप्नुयात् ॥१२॥
फलित पुष्पित चैव[5] शत्रोरारामयाश्रितः ।
रवौ रात्रौ निशाकाले नग्नो भूत्वा सुनिश्चयः[6] ॥१३॥
प्रदक्षिणत्रय कृत्वाप्ययुत जपमाचरेत् ।
वृक्षो निर्मूलमाप्नोति शिवस्य वचन यथा ॥१४॥
एकाक्षरी च बगला साध्यास्य[7] मध्यदेशतः ।
चिन्तयेज्जाप्यकालेपु[8] सहस्र जपमाप्नुयात्[9] ॥१५॥
लक्ष जप्त्वा मनोरेव मृत्तिका च कुमारक ।
प्रवाहोपरि नि.क्षिप्य नद्या उपरि बुद्धिमान् ॥१६॥
स्तम्भयेत्त नदीवेग महदाश्चर्यकारणम् ।
महानद्यामेवमेव कुर्यात्त[10] गुरुलाघवान्[11] ॥१७॥
व्यालव्याघ्रादयश्चैव ये ये क्रूरमृगादयः ।
त्रिसप्तमन्त्रित भस्म मूर्द्धनि क्षेपणमात्रतः ॥१८॥
वाक्पाणिवदनाक्षणा च[12] तत्क्षणात् स्तम्भन भवेत् ।
मन्त्रयेत् सस्कृत भस्म मन्त्रेणानेन पुत्रक ॥१९॥
अष्टोत्तरशत सम्यक् ध्यानमात्रेण[13] बुद्धिमान् ।
सर्वाङ्गाद्धूलन कुर्यात् तद्भस्मना[14] कुमारक ॥२०॥
वनेचरास्तथा जलजन्तवश्च चोरादिदुष्कर्मकृन्नराश्चापि[15] ।
प्रेताश्च[16]भूताश्च[17]पिशाचभूचरा.[18]सिहाश्च सस्तभयति ध्रुव च[19]॥२१॥

---

१. घ. सप्तरात्र । ग सदा रात्रौ । २. ख. घ. क । ३. घ. च । ४. घ. धन । ५. घ. ०चापि । ६ घ सु निश्चितम् । ७. ख. ससाध्यं । घ. साध्यास्य । ८ घ. ०काल तु । ९. ख. घ ०जपमाचरेत् । १०. घ. कुर्यादिद् । ११. घ ०लाघवात् । १२. घ. प्रि । १३ घ. ध्यानपूर्वं सु । १४. ख तद्भस्मेन । १५. घ. चोरादिदुष्कमकरा नराश्च । १६. घ प्रेताश्च । १७. भूतानपि । १८. भूचराश्च । १९. क ख ग च ध्रुवम् ।

एतन्मन्त्रवरं पुत्र मनसा जपमाचरेत् ।
वादार्थं चाथ वाणिज्ये सभायां राजसन्निधौ ॥२२॥
गत्वा तु रिपवः सर्वे जिह्वास्तम्भनमाप्नुयात् ।
'शत्रुमुद्दिश्य मन्त्रं च अयुतं प्रजपेत्ततः'[1] ॥२३॥
पक्षमासाद् भवेच्छत्रोर्जिह्वास्तम्भनमाप्नुयात् ।
तेनैव म्रियते शत्रुर्मण्डलार्धेन[2] मानवः ॥२४॥
दक्षिणामूर्तिमन्त्रेण मन्त्रितं जलमादरात् ।
त्रिकालं चैव पीत्वा तु मण्डलाच्छान्तिमाप्नुयात् ॥२५॥

इति षड्विद्यागमे शाङ्ख्यायनतन्त्रे एकविंशति[3] पटलः ॥२१॥

॥ अथ द्वाविंशः पटलः ॥

नमस्ते देवदेवेशीं जिह्वास्तम्भनकारिणीम् ।
पाशपात्रगदायुक्तां भजेऽहं बगलामुखीम्[4] ॥१॥

स्कन्द[5] उवाच—
त्रिपुरारे त्रिलोकज्ञस्त्रिकालात्म[6]स्त्रिनयनक ।
बगलास्त्रं वदास्माकं 'मयि वात्सल्यगौरवात्'[7] ॥२॥

शिव[8] उवाच—
बगलास्त्रमिदं पुत्र[9] सुरासुरसुपूजितम् ।
अगस्त्यः प्रोक्तवान् पूर्वं रामं दाशरथिं प्रति ॥३॥
तेनोक्तमाञ्जनेयाय तेनोक्तं चार्जुनं प्रति ।
तद्विद्यां च प्रवक्ष्यामि बगलाहृदयं[10] मनुम्[11] ॥४॥
प्रथमं बगलाबीजं वाराहं तदनन्तरम्[12] ।
'मम शत्रू स्ततः शक्ति'[13] बगलाबीजमुद्धरेत् ॥५॥
बगलामुखिपदं चोक्त्वा 'वाम्य मुखं'[14] पदं वदेत् ।
ग्रसद्वय[15] च उच्चार्य खाफीयुग्मं[16] ततः परम् ॥६॥

---

१. घ.—'प्राप्नुयाच्छत्रुमुद्दिश्य तन्मन्त्रं प्रजपेत्ततः' ।
२. क. ०मण्डलार्धेन । ३. घ. परविद्याकर्षण नाम एकविंशतिः । ४. घ. बगलाम्बिकाम् । ५. घ. क्रौञ्चभेदन । ६. घ. ०कालज्ञ । ७. घ. मायवात्सल्यगौरवात् । ८. घ. ईश्वर । ९. घ. मन्त्रं । १०. घ. बगलास्त्रमिदं । ११. घ. मनु । १२. घ. च ततः परम् । १३. घ. ततश्च शक्तिवाराह । १४. घ. मम शत्रु । १५. घ. ग्रहयुग्मं । १६. घ. स्वाहियुग्म ।

भक्षयुग्म ततोच्चार्य शोणित पिब-युग्मकम् ।
बगलामुखि[1] उच्चार्य[2] बगलाबीजमुच्चरेत्[3] ॥७॥
'शक्ति वाराहमुच्चार्य वर्मास्त्र च समुद्धरेत्'[4] ।
'त्रिचत्वारिंशद्वर्णयुक्त'[5] बगलायाः[6] सुपावनम् ॥८॥
दुर्वासा[7] ऋषिरेवात्र[8] छन्दोऽनुष्टुप् भवेच्छुभम्[9] ।
देवता बगलानाम्नी[10] जगद्व्यापकरूपिणी ॥९॥
ग्लौं[11] बीज ह्लीं च शक्तिश्च फट्कार कीलक तथा ।
'मन्त्रराजेन देव्याश्च'[12] न्यासविद्या समाचरेत् ॥१०॥
ध्यानभेद[13] प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदेन पुत्रक ।
चतुर्भुजा त्रिनयना पीतोन्नतपयोधराम् ॥११॥
जिह्वा खड्ग पानपात्र गदा धारयन्ती पराम्[14] ।
पीताम्बरधरा देवी पीतपुष्पैरलङ्कृताम् ॥१२॥
बिम्बोष्ठी चारुवदना मदाघूर्णितलोचनाम् ।
सर्वविद्याकर्षिणी च सर्वप्रज्ञापहारिणीम् ॥१३॥
भजऽह्र चास्त्रबगला सर्वाकर्षणकर्मसु ।
एव ध्यात्वा जपेन्मन्त्र बाणलक्ष कुमारक ॥१४॥
तर्पयेत्तद्दशाश च जपासंमिश्रवारिणा[15] ।
तद्दशाश हुनेत् पुत्र तालक चाज्यसयुतम्[16] ॥१५॥
भगाकारे सुकुण्डेऽस्मिन्[17] मुद्रया हस[18] बुद्धिमान् ।
बदरीफलमात्र च माहुतीश्च कुमारक ॥१६॥
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् सहस्र शतमेव च ।
योगिनीं पूजयेत् पुत्र द्रव्यशुद्धिसमन्विताम् ॥१७॥
मन्त्रसिद्धिर्भवेत् सद्यो[19] देवता च प्रसीदति ।
शिवालये जपेन्मत्रमयुत च सुबुद्धिमान् ॥१८॥

१. घ. बगलामुखी । २. घ. समुच्चार्य । ३. घ. सद्बीज च पुनर्वदेत् । ४. 'ततश्च शक्तिवाराह चाराह च समुच्चरेत्' । ५. घ. त्रयश्चत्वारिंशद्वर्ण । ६ घ बगला-स्त्र । ७. घ. दूर्वासो । ८ घ. ०रेवास्य । ९ घ एव च । १०. घ. चास्त्रबगला ११. घ. ह्लौं । १२ मत्रराजवदेवात्र । १३ घ. ध्यान यत्नात् । १४ घ. शिवाम् । १५ घ. हेतुः समिश्र० । १६ घ चाल्पसयुतम् । १७ घ. सु कुण्डे० । १८. ख. हसीमुद्रेण । घ. हसमुद्रेण । १९. घ. सत्य ।

शत्रुक्षय भवेत् सद्यो नान्यथा शिवभाषितम् ।
षट्सहस्रं जपेन्मन्त्रं निशायां चण्डिकालये ॥१९॥

जिह्वास्तम्भनमाप्नोति बृहस्पतिसमोऽपि वा ।
'जपित्वा च'[1] सहस्रं तु भैरवस्य च सन्निधौ ॥२०॥

बुद्धिभ्रंशो भवेत् सद्यो वाणीपतिसमोऽपि वा ।
वीरभद्रालये पुत्र अयुत जपमाचरेत् ॥२१॥

सिद्धिदो जायते वत्स नान्यथा शिवभाषणम् ।[2]
मातृकासन्निधौ मन्त्री जपेद् दशसहस्रकम्[3] ॥२२॥

सद्यः स्तम्भनमाप्नोति वाल्मीकिसदृशोऽपि वा ।
ध्यानपूर्वं[4] जपेन्मन्त्री[5] अयुत च कुमारके ॥२३॥

रूपयौवनवाञ्छत्रुर्व्याधिमान्[6] भवति ध्रुवम् ।
त्रिसहस्रं[7] जपेन्मन्त्र[8] त्रिसहस्रं दिने दिने ॥२४॥

मण्डलाच्छत्रुसम्मोहं[9] कुबेरसदृशोऽपि च ।
ऐश्वर्यं नाशमाप्नोति कुबेरसदृशोऽपि वा ॥२५॥

त्रिकालमयुतं जप्त्वा ध्यानपूर्वं सुबुद्धिमान् ।
बगलाध्यानतो मन्त्रमयुत जपमाचरेत् ॥२६॥

सर्वाङ्ग[10] वायुना शत्रुः शीघ्रं गच्छेद् यमालयम्[11] ।
पार्वतीसन्निधौ मन्त्री जपेदयुतमादिशन्[12] ॥२७॥

रात्रौ पूजासमायुक्तो नग्नो दक्षिणदिङ्मुखः ।
भग्नो भवति तच्छत्रुरवश्य[13] क्रौञ्चभेदन ॥२८॥

विघ्नराजं समभ्यर्च्य रवौ[14] तु जपमाचरेत् ।
त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्र कुक्षिरोगी भवेद्रिपु ॥२९॥

मण्डलान्नाशमायाति नात्र कार्या विचारणा ।
प्रयोगान्ते च सत्कार पूजाकाले समाचरेत् ॥३०॥

इति श्रीषड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे द्वाविंशतिः पटलः ॥

---

१. ख. जपित्वाष्ट । घ. जपेत्त्वष । २. घ. निर्वीर्यो जायते शत्रुर्नान्यथा शिव-भाषितम् । ३. घ. अष्टसहस्रकम् । ४. घ. ध्यानात् पूर्वं । ५. घ. जपेन्मन्त्र । ६. घ. ०र्व्याधितो । ७. ख. त्रिसन्ध्यं । घ. त्रिसन्ध्य च । ८. ख. जपते मन्त्रं । ९. क. ग. शत्रुसमूह । १०. ख. घ. सर्वाङ्ग । ११. घ. यमालये । १२. घ. ०दयुतसंख्यया । १३. घ. तच्छत्रोर्मण्डला [द्] । १४. घ. रात्रौ ।

॥ अथ त्रयोविंशः पटलः ॥

स्वर्णसिंहासनासीनां सुन्दराङ्गीं शुचिस्मिताम् ।
विम्बोष्ठीं चारुनयनां ध्यायेत् पीनपयोधराम् ॥१॥

स्कन्द[1] उवाच—

नमस्ताण्डवरुद्राय तापत्रयहराय च ।
वगलास्त्रमहामन्त्रैः प्रयोगान् वद शङ्कर ॥२॥

शिव[2] उवाच—

त्रिकालं तु समासीनो ध्यानपूर्वं तु[3] साधकः ।
त्रिसप्त मन्त्रयित्वा तु जपं पश्चात् समाचरेत् ॥३॥
नित्यं च त्रिसहस्रं तु षण्मासं विजितेन्द्रियः ।
वाचासिद्धिर्भवेत्तस्य शापानुग्रहकारका[4] ॥४॥
अश्वत्थमूले प्रजपेदयुतं ध्यानपूर्वकम् ।
भक्षणाद् व्याधिनाशं च भवेदेव न संशयः ॥५॥
विभीतकतरोर्मूले अयुतं जपमाचरेत ।
जिह्वास्तम्भनमाप्नोति साक्षाद्वागीश्वरोऽपिवा ॥६॥
कपित्थवृक्षमूले[5] तु प्रजपेदयुतं तथा ।
श्रोत्रस्तम्भनमाप्नोति सद्यो बधिरतां व्रजेत् ॥७॥
पिचुमर्दतरोर्मूलेऽप्ययुतं जपमाचरेत ।
प्राणस्तम्भनमाप्नोति[7] रोगी पीनसवान् भवेत् ॥८॥
कदलीमूलमाश्रित्य अयुतं जपमाचरेत् ।
पादस्तम्भो भवेत् सद्यो वातरोगी भवेद् रिपुः[8] ॥९॥
करञ्जमूलमाश्रित्याप्ययुतं जपमाचरेत् ।
स्तम्भयेज्जठराग्निस्तु अन्नद्वेषो भवेद् ध्रुवम् ॥१०॥
विषतिन्दुकमूलं च समाश्रित्य मनुं जपेत् ।
अयुताच्च[6] भवेत् पुत्र गात्रस्तम्भनमाप्नुयात् ॥११॥
नद्याः समुद्रगामिन्या नाभिदघ्नजले[10] स्थितः[11] ।
तर्पयेद् वगलास्त्रेण ग्रस्तं कृत्वारिनाम[12] च ॥१२॥

---

१. घ. क्रौञ्चभेदन । २. घ. ईश्वर । ३. घ. सु । ४ घ. त्रिसहस्रे । ५. क. ख. ग. ०कारकम् । ६. घ. कपित्थतरु० । ७. घ. घ्राणस्त० । ८. घ. नरः । ९. घ. नाभिमात्रे जले । १०. घ. नरः । ११. घ. तद्वैरिनाम ।

दिने दिने सहस्रैकं बगलाध्यानपूर्वकम् ।
गर्भस्रावं भवेत्तस्य भार्यायाः[1] शिवभाषितम् ॥१३॥[2]

वल्लोपलाशमूले तु जपेदयुतसंख्यया ।
मन्त्रमध्ये रिपोर्नामो ग्रस्तं कृत्वा कुमारक ॥१४॥

तर्पणं च दिवा कृत्वा रात्रौ रात्रौ[3] जपेन्मनुम् ।
सापि वन्ध्या भवेत् सत्यं नात्र कार्या विचारणा ॥१५॥

श्मशाने प्रजपेन्मन्त्रं ग्रस्तं कृत्वा तु पूर्ववत् ।
सद्यस्तद्भार्यानाशं च भवेदेवं न संशयः ॥१६॥

शून्यागारे जपेदेवमयुतं[4] ध्यानपूर्वकम् ।
लक्ष्मीर्नाशयते नूनं[5] स शत्रुरवशिष्यते ॥१७॥

जंबीरतरुमूले तु मयुतं जपमाचरेत् ।
[6]भ्रमाकुलकुलं सर्वं मण्डलान्नाशमाप्नुयात् ॥१८॥

शतवार मन्त्रितं च शर्करोदकमेव च[7] ।
रिपूणां चैव दातव्यं जिह्वास्तम्भनमाप्नुयात् ॥१९॥

[illegible]तं मन्त्रितं चैव नारिकेलफलोदकैः ।
पाययेद्राद्रि[8]रिपुभिर्जिह्वास्तंभनमाप्नुयात् ॥२०॥

नागवल्लीदल चैव क्रमुकं चूर्णमेव च ।
सहस्रं मन्त्रित पुत्र दातव्यं शत्रु(त्रू)णां निशि ॥२१॥

ताम्बूलचर्वणाच्छत्रुर्जिह्वास्तंभनमाप्नुयात् ।
चन्दन चैव कस्तूरीघर्षितं मन्त्रयेत् सुत ॥२२॥

पुनश्च मन्त्रयेत्ताम्रपात्रे गुणसहस्रकम् ।
तच्चन्दनलेपनेन[9] रिपुर्भ्रान्तो[10] भविष्यति ॥२३॥

दन्तधावनकाष्ठं च मन्त्रयेत् त्रिसहस्रकम् ।
तत्काष्ठेन रिपोः[11] पुत्र दन्तधावनमात्रतः ॥२४॥

---

१. क. ग. घ. नार्यायाः । २. घ पुस्तकेऽयं पाठो विशेषः—

ततो(तः) पलाशमूल तु प्रजपेच्च परे द्वयम् ।

३. घ. रात्रौ तु प्र । ४. घ. जपेन्मन्त्र० । ५. घ. शीघ्रं । ६. ७. घ. पुस्तके नास्ति । ८. घ. प्राशयेद्वारि । ९. घ. ०विलेपेन । १०. घ. परिभ्रान्तो । ११. घ. रिपुः ।

जिह्वां वाणीं च बुद्धिं च 'मनः पादादिकं'[१] तथा ।
स्तम्भनं च भवेच्छीघ्रं शिवस्य वचनं यथा ॥२५॥

प्रेतवस्त्रं रवौ ग्राह्यं चितिकाष्ठं च वेष्टयेत् ।[२]
श्मशाने निखनेद् रात्रौ त्रिसहस्रं जपेत्तदा[३] ॥२६॥

शेषभार्यापतिः साक्षाद् बृहस्पतिरपि स्वयम् ।
जिह्वास्तम्भनमाप्नोति सद्यो मूकत्वमाप्नुयात् ॥२७॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे त्रयोविंशतिः[४] पटलः ॥२३॥

॥ अथ चतुर्विंशः पटलः ॥

अम्बा पीताम्बराढ्यामरुणकुसुमगन्धानुलेपा त्रिनेत्रा,
गम्भीरा कम्बुकण्ठी कठिनकुचयुगा चारुबिम्बाधरोष्ठीम् ।
दोर्भ्योंज्जिह्वासिपत्र[५] शरधनुसहिता व्यक्तगर्वाधिरूढा[६],
देवी सस्तम्भरूपा सुविरलरसनामम्बिकां[७] तां भजामि[८] ॥१॥

स्कन्द[९] उवाच—
नमस्ते वृषभारूढ नमः पन्नगकङ्कण[१०] ।
लक्षणं वद मे देव वगलामन्त्रमालिका[११] ॥२॥

ईश्वर उवाच
भृगुवारे च सगृह्य[१२] 'आरामस्थनिशां तथा'[१३] ।
'तां शुष्कां'[१४] सप्तरात्रं तु 'कृत्वा मेतामनन्तरम्'[१५] ॥३॥

भूतावपरितं[१६] चैव कपिलागोमयं तथा ।
पुनरेकान्तराद्ग्राह्य[१७] भाण्डमध्ये तु निःक्षिपेत ॥४॥

सविषं जलसंयुक्तं कुर्यान्मेलनमेव च ।
हरिद्रां तत्र निःक्षिप्य पूजयेदाशु तत्क्रमात् ॥५॥

चुल्ल्योपरि च तद्भाण्डं रवौ रात्रौ च निःक्षिपेत् ।
द्विगुणं जलसंयुक्तं[१८] कुर्यान्मेलनमेव च ॥६॥

---

१. घ. कुलिपपासामल । २. घ. पुस्तकस्थोऽयं पाठो विशेषो दृश्यते—
प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा तु पूजां चैव तु कारयेत् ।
३. घ. जपेन्मनुम् । ४. घ बगलास्त्रविवरण नाम त्रयोविंशतिः । ५. घ. ०सिपत्रां ।
६ घ. शुक्लगरवादिरूढां । ७. घ. सुविरलवसना० । ८. घ. नमामि । ९. घ.
क्रौञ्चभेदन । १०. ०भूषण । ११. ०जपमालिकाम् । १२. घ. सग्राह्य । १३. घ.
आरामस्वासिशां निधि १४. ख. छायाशुष्कां । घ. छायाभुक । १५. घ. कृत्वा तु
तदनन्तरम् । १६ ख. भूमावपतितं । घ. भूमा(मौ) तु पतित । १७. ख. पुनरेका कराद्
ग्राह्यं । घ. पुनरेकांवराद्ग्राह्यं । १८. घ. जलसंयुतं ।

अश्वत्थैरिन्धनैरेव ज्वाला 'कृत्वा सुबुद्धिमान्'[1] ।
तस्या[2] मृदु भवेत्तावत्पचन सम्यगाचरेत् ॥७॥
गोमयस्था[3] हरिद्रा च क्षालयेद्वारिणा[4] ततः ।
छायाशुष्क च कर्त्तव्यं हरिद्रामणिमादरात् ॥८॥
तेन कुर्यान्मालिका च अष्टोत्तरशत तथा ।
पुण्यस्त्रीनिर्मित[5] सूत्र[6] 'मन्त्रैः सच्छेदयेत्'[7] पुनः ॥९॥
तन्मालिकां रवौ 'वारेऽप्यमृतेनैव'[8] मार्जयेत् ।
अर्चयेन्मूलमन्त्रेण षोडशैरुपचारकै. ॥१०॥
निवेदयेत् पायस च शर्कराज्यसमन्वितम् ।
सहस्रं प्रजपेदादौ[10] पञ्चाशद्वर्णमादरात् ॥११॥
'एकाक्षरीमहामन्त्रैर्वगलानाम्नि'[11] पावनैः ।
अयुत प्रजपेत् पुन मालिकासिद्धिमाप्नुयात् ॥१२॥
एव च मालिका कुर्यान् मन्त्रसिद्धिमपेक्षता[12] ।
हरिद्रावस्त्रमाच्छाद्य सिद्धयर्थं जपमाचरेत् ॥१३॥
हरिद्रामयपुष्प[13] च हरिद्रामयचन्दनम्[14] ।
समर्पयेदलङ्कृत्य[15] जप रात्रौ समाचरेत् ॥१४॥
देवी भूत्वा जपेद्देवीमर्चयेद्विधिवद्यया[16] ।
प्रमादात् मालिका भूमौ पतिता चेत् कुमारक ॥१५॥
पुनः पूजा प्रकर्त्तव्या पूर्ववज्जपमाचरेत् ।
अथ वक्ष्ये प्रयोगाश्च मालिकालक्षण तथा ॥१६॥
पञ्चविंशतिभिर्मोक्ष.[17] 'सर्गं त्रिंशतिरेव च'[18]।
वशीकरणसमोहे[19] 'कला'सख्या सुमालिका'[20] ॥१७॥[21]

---

१. घ. कुर्यात् प्रयत्नत. । २. घ. यावत् । ३. घ. गोमवय । ४. घ लक्षोयेद्वा० । ५. घ. पुनः । ६. ख. पण्यस्त्री० । घ. स्त्रीनिर्मिते । ७ घ. सूत्रे । ८. घ. एकैकं ग्रथयेत् । ९. घ. रात्रौ मूलेनैव तु । १०. घ. च जपेच्चादौ । ११. घ. एकाक्षरैर्महामन्त्रैर्वगलायाश्च । १२. घ. ०मपेक्षिता । १३. घ. हरिद्रावर्णपुष्प । १४. घ हरिद्रावर्णचन्दनम् । १५. घ. समर्प्य पूजनं कृत्वा । १६. घ. ०श्या । १७. घ. मोक्षार्थी । १८. घ. धनार्थी त्रिंशदेव च । १९. घ. समोह । २० क. पुस्तके ऽयमशो नास्ति । २१. अतः पर निम्नांशो विशेषः ख. घ. पुस्तकद्वये—
'विद्वेषिणा स्तम्भनं विद्याद् विनाशे पञ्चमालिका'।

द्विपञ्चसप्तविंशद्भि[1] रुच्चाटे चार्कसख्यया ।
ज्वरे[2] रोगादिपीडार्थं पच चैव चतुर्दश ॥१८॥
पञ्चाशच्छान्तिकर्माख्ये[3] वृद्धि च चतुरुत्तरे ।
पञ्चदशाभिचारे[4] च मालिकाक्रममी(ई)दृश:[5] ॥१९॥
भृगुवारे च सगृह्य[6] द्रव्याण्येतानि पुत्रक ।
'हरिद्रापङ्कज वस्तु कर्पूर मृगनाभि च'[7] ॥२०॥
श्रीखण्डरोचनागरु-केसर[8] च समं समम् ।
मर्दयेन्मु(दु)पसि प्रज्ञ[9] जल्वेनैव कुमारक ॥२१॥
तेन कुर्यात् पुत्तली च चतुरङ्गुलमानतः ।
सर्वाङ्गसुन्दरी[10] देवी द्विभुजा बगलामुखीम् ॥२२॥
चित्रपीताम्बरधरा[11] पीनोन्नतपयोधराम् ।
पीतवर्णां मदाघूर्णामर्द्धचन्द्रा च पुत्तलीम् ॥२३॥
प्राणप्रतिष्ठा कृत्वा तु सस्नाप्य[12] विधिनाऽर्भकम् ।
प्रखण्डतण्डुलेनैव हरिद्राक्षतमेव च ॥२४॥
कृत्वा एकाक्षरोमन्त्रैरक्षतान्[13] मूर्द्धनि निःक्षिपेत् ।
नित्य चायुतपूजा च कुर्याच्चैव च पुत्रक ॥२५॥
देवी सम्पूजयेत्सम्यक् जपं कुर्यात् सुबुद्धिमान् ।[14]
एव कृत्वा तत्त्वलक्ष देवी प्रत्यक्षतामियात्[15] ॥२६॥
यत् परस्मै[16] न वक्तव्य न वक्तव्य कदाचन ।
एव पूजाविधि कृत्वा पुरा 'दुर्वाससेन च'[17] ॥२७॥
तत्त्वलक्षप्रमाणेन प्राप्त 'ग्रन्थोदित फलम्'[18] ।

इति षडविद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे चतुर्विंशतिः[19] पटलः ॥२४॥

---

१. क. पुस्तके 'द्विपञ्च' हीनः 'सप्तविंशद्भिः' पाठ एव दृश्यते । प. विद्वेषे सप्तविंशद्भिः । २. प. ज्वर । ३. प. ०कर्मसु । ४. प पञ्चदशयानि० । ५. प. ०मीदृशम् । ६. प. सग्राह्य । ७. ख. प. पुस्तके निम्नोऽय पाठो विशेष—
हरिद्रापङ्कज वस्तु[1] चन्दन कुमुमानि च ।
कस्तूरी चैव कर्पूर 'कर्पूरः मृगनाभि च'[2] ॥
८. प. गोरोचनमुशीर च केशर । ९ ख. ०तुपसि प्रज्ञ । प. मर्दयेन्मदिरायुक्त । १०. प. सुधा च सुन्दरी । ११. प. बगला वज्रधरा चैव । १२. प. सस्थाप्य । १३. प. एकाक्षरैर्मत्रै० । १४. प. पादद्वय नास्ति । १५. प प्रत्यक्षमाप्नुयात् । १६. प. यस्मै कस्मै । १७. प. दुर्वासमोनिराट् । १८. प. यथोक्त फलमाप्नुयात् । १९. प. मालाप्रकरणं नाम चतुर्विंशति ।

---

1. प. रक्त । 2. प. श्रीखण्ड चागरु तथा ।

॥ अथ पञ्चविंशः पटलः ॥

नमामि बगलां देवीं शत्रुवाक्स्तम्भरूपिणीम् ।
भजेऽहं विधिपूर्वं च जयं देहि रिपून् दह ॥१॥

स्कन्द[1] उवाच—

नमः कैलाशनाथाय[2] नमस्ते मुनिसेवित[3] ।
चतुरक्षरीमहामन्त्रं बगलायाश्च मे वद ॥२॥

ईश्वर उवाच—

सप्तकोटिमहामन्त्रे[4] मन्त्रराजमिमं[5] शृणु ।
षट्प्रयोगैः स्तंभनं च सर्वकर्मोत्तमोत्तमम् ॥३॥

यदा शत्रुभयोत्पन्नं[6] तदानीमेव पुत्रक ।
प्रमुखं च जपेन्मन्त्रं बगलाचतुरक्षरम्[7] ॥४॥

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि न्यासध्यानादिकं तथा ।
प्रयोगं चोपसंहारं वक्ष्येऽहं तव पुत्रक ॥५॥

वेदादिं विलिखेत् पूर्वं पाशबीजं ततः परम् ।
स्तम्भमाया ततोच्चार्यं अंकुशं बीजमेव च ॥६॥

चतुरक्षरी च बगला सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमाम् ।
न्यासविद्यां प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदेन पुत्रक ॥७॥

पाशाङ्कुशान्तरितशक्तिरमा च तद्व-
तद्वन्न्यसेन्मदनबीजमथो वराहम् ।
वागीश्वरीं च बगलास्यसुबीजराजं,
वन्यस्यता करयुगे हृदयादिकेषु ॥८॥

चतुर्वर्णात्मिके[8] मन्त्रे[9] मातृकाबीजपूर्वकम् ।
प्रत्येकं च न्यसेत् पुत्र मन्त्रसिद्धिमवाप्नुयात् ॥९॥

अथवा बगलामन्त्रं सर्वरङ्गुलिभिर्न्यसेत्[10] ।
ततो जपेन्मन्त्रराजं बगलाचतुरक्षरम्[11] ॥१०॥

ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दो त्र गायत्री समुदाहृतम् ।
देवता बगलानाम्नी ध्यानं वक्ष्ये कुमारक ॥११॥

---

१. घ. क्रौञ्चभेदन । २. घ. कैलासवासाय । ३. घ. मौनिसेवित । ४. घ. चतुरक्षरीमहामन्त्र । ५. घ. ०मिदं । ६. घ. ०भयं प्राप्त । ७. घ. बगलां चतुरक्षरीं । ८. ख. घ. चतुर्वर्णात्मक । ९. ख. घ. मन्त्रं । १०. घ. षडङ्गुलीषु न्यसेत्तथा । ११. घ. ०चतुरक्षरीम् ।

कुटिलालकसंयुक्ता[1] मदाघूर्णितलोचनाम् ।
मदिरामोदवदना प्रवालसदृशाधराम्[2] ॥१२॥

सुवर्णशैलसुप्रख्यकठिनस्तनमण्डलाम्[3] ।
दक्षिणावर्त्तसन्नाभिसूक्ष्ममध्यमसंयुताम् ॥१३॥

रम्भोरुपादपद्मा तां पीतवस्त्रसमावृताम् ।
एवं ध्यात्वा महादेवीं कुर्याज्जपमतन्द्रितः ॥१४॥

वेदलक्षं जपं कुर्यात् पर्वताग्रे कुमारक ।
'भिक्षाशिनः फलाशोनो'[4] मौनी भूत्वा समाहितः ॥१५॥

तर्पणं च दिवा कुर्याद् रात्रौ वा प्रजपेन्मनुम् ।
एवं कुर्यात् पुरश्चर्यां देवी प्रत्यक्षमाप्नुयात् ॥१६॥

रात्रौ होमं च कर्त्तव्यं दिवा ब्राह्मणभोजनम् ।
हरिद्रावस्त्रसंयुक्तं हरिद्रावर्णचन्दनम् ॥१७॥

'हरिद्रा चाक्षमाला च'[5] द्र (?) वर्णदेवताम् ।
स्मरेच्च जपकाले तु सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥१८॥

मधूकपुष्पसंमिश्रमर्चितेन जलेन वा ।
तर्पणं तद्दशांशं च देवतामूर्द्ध्नि निःक्षिपेत् ॥१९॥

आज्येन मिश्रितं चैव शर्करापायसं हुनेत् ।
पूर्णाहुत्यन्तमनघ[6] ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः॥ २०॥

योगिनीं पूजयेत् पश्चाद् द्रव्यशुद्धिसमन्विताः ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥२१॥

आदौ भास्वररूपिणी[7] कुरु तदा सद्वराजा[8] योगिनी,
नानालक्षणसंयुता कुचभरा प्रौढा नवोढा तथा[9] ।
स्ता (स्ना) ताभ्यञ्जनभूषणैश्च सहिता सच्चन्दनै[9] र्लेपिता,
पूजागारमुपानयेद्रहसि सा[10] द्रव्यैश्च शुद्धया रहः[11] ॥२॥

---

१. घ. कटिलोलकसंयुक्ता । २. घ. ०पराम् । ३. घ. सुवर्णकलश० । ४. घ. भिक्षाशी च फलाशी च । ५. घ. हरिद्रायां क्षमा माला । ६. ख. मनघ । घ. मनना । ७. ख. भास्कर० । घ. भापर० । ८. घ. सज्जातिजां । ९. सवचन्दनैं । १०. ख. तां । घ. सद् । ११. ख. घ. सह ।

लौकिके[1] चैव गुप्ताच सौभाग्यार्चा कुमारक ।[2]
'मन्त्रसिद्धिकरं वक्ष्ये गोपनं कुरु सर्वदा'[3] ॥२३॥
अङ्गत्रयेण संयुक्तं लौकिकार्चनमेव च ।
चतुरंगुलसंयुक्ता[4] गुप्तपूजा कुमारक ॥२४॥[5]
सौभाग्यार्चाविधिश्चैव[6] पञ्चाङ्गोपासनं भुवि ।
योषिद्भुक्तिद्रव्ययुक्तं[7] लौकिकार्चनमेव च ॥२५॥[8]
योषिच्छुद्धिद्रव्यपूजा पञ्चमोयुतमादरात् ।
एतत्सौभाग्यपूजा च मुनिगुह्यमुपासनम्[9] ॥२६॥
बिन्दुपात्रयुता पूजा निर्गुणा योगिनां मतम्[10] ।
एतच्चतुर्विधा चर्या[11] देशनामार्चनाविधिः[12] ॥२७॥
वक्ष्येऽहं[13] विधिवस्तुञ्च न देयं यस्य कस्यचित् ।
सृष्टिः स्थितिश्च संहारं जीवन्मुक्तिपदं[14] तथा ॥२८॥
एतदर्चाविधिर्नामसकेत मुनिभिः[15] सह ।
सृष्टिश्च गौडदेशेषु[16] स्थितिः केरलदेशके ॥२९॥
संहारार्चा कामरूपे 'कुरुपाञ्चालयोः परम्'[17] ।
पीठोपरि समावेश्य गर्भकोलागमक्रमात्[18] ॥३०॥
अर्चन[19] गौडदेशीयं[20] सृष्टिपूजाक्रमस्त्वयम् ।
पूर्वोक्तलक्षणोपेतां मृदुपर्य्यङ्कके[21] तथा ॥३१॥
शयनीकृत्य कन्या[22] च स्थित्यर्चाक्रममादरात्[23] ।
केरले तु स्थितिश्चैव सिद्धसिद्धिकरो[24] तथा ॥३२॥
कौलसारं च तन्नाम सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमम् ।
पूर्वोक्तलक्षणोपेतास्तिष्ठन्ति कन्यका भुवि ॥३३॥

---

१. घ· लौकिकी । २. अत. परं निम्नांशोऽयं घ. पुस्तक एव दृश्यते—

एवं त्रिविधपूजा च मुनिगुह्यं सुपावनं ।
एकैकस्य च पूजाया लक्षण कथ्यते सुत ॥

३. पादयुग ग. पुस्तके नास्ति । ४. घ. चतुरङ्गसमायुक्ता । ५. श्लोकोऽयं ग. पुस्तके नास्ति । ६. ख. घ. विधि चैव । ७. घ. योषितशुद्धि । ८. अतः पर निम्नांशो घ. पुस्तक एवाऽवलोक्यते—

योषिच्छुद्धिद्रव्यपूजा सुगुप्तार्चनमादरात् ।

९. घ. मुनिगुप्त सुपावनम् । १०. घ. मता । ११. घ. चार्च्चा । १२. घ. ०नामार्चनं । १३. ग. हे । १४. घ. ०मुक्तं पद । १५. घ. योगिभिः । १६. घ. देशे तु । १७. घ. कौलिकारवो (र्चा, चार) तत्परम् । १८. घ. अर्गकोलागम० । १९. क. मोर्चनं । घ. अर्चना । २०. घ. गौडदेशीय । २१. क. मृत्यु० । २२. ग. घ. शयनीकृतकन्या । २३. घ. स्थित्यर्चामर्च्य० २४. ख. घ. सद्यः सिद्धिकरी ।

कामरूपाख्यदेशे तु संहाराह्वयपूजनम् ।
पूर्वोक्तलक्षणोपेता कृत्वाभ्यञ्जनमादरात् ॥३४॥
बिन्दुमात्रं[1] गृहीत्वा तु कृत्वा मुक्त्यर्चनं[2] भुवि ।
कुरुपाञ्चालदेशीयमनिशं[3] पूजनं तथा ॥३५॥
कौलसारपरं[4] नाम चागमं भुवि[5] दुर्लभम् ।
सम्यक् पूजाविधिश्चैव उपसहृतमानसः[6] ॥३६॥
पञ्चमी चैव कर्त्तव्या सौख्यार्थं तस्य पुत्रक ।
'पानं चैव समासेन'[7] जपध्यानसमन्वितः ॥३७॥
देवो भूत्वा स्वयं पुत्र पञ्चमी च समाचरेत् ।
सहारार्चनयोरेवमुपसंहृत्य[8] पूजनम् ॥३८॥
सम्पूजयेत्[9] पञ्चमी चैव सौख्यार्थं तस्य साधकः ।
आदौ मध्ये तथा चान्ते बिन्दुपात्रार्थमेव[10] च ॥३९॥
अर्चयेत् पञ्चमी कुर्याद् ग्रहणे चन्द्रसूर्य्ययोः ।
कुरुपाञ्चालदेशेऽस्य[11] निर्गुणार्च्चाविधिस्तथा ॥४०॥
एतदर्च्चाविधिश्चैव दुर्लभो[12] विधिशङ्करैः[13] ।
गौडदेशार्चनं पुंसां शान्तिपुष्टिकरं[14] सदा ॥४१॥
एवमेव विधिः पुत्र सर्वैस्वर्यप्रदायकः ।
कामरूपार्चनं पुंसा मारणविप्रयोगदा[15] ॥४२॥
कुरुपाञ्चालदेशार्च्चा सर्वसिद्धिप्रदा सदा ।[16]
एतदर्च्चाविधिं चैव यः करोति सुबुद्धिमान् ॥४३॥
जीवन्मुक्तः स एवात्र स सिद्धो नात्र संशयः ।
नारीनिन्दा न कर्त्तव्या स्वपादैस्तां न[17] सस्पृशेत्[18] ॥४४॥
नारी दृष्ट्वा मानसेन वन्दन च समाचरेत् ।
स्वप्रियामर्च्चयेत् पुन प्रिया पञ्चमिका चरेत् ॥४५॥[19]

१. घ. बिन्दुपात्र । २. गुप्ताचन । ३. ध. ०देशे तु मनिश । ४. घ. ०सारतर । ५. घ. शुचि । ६. स. जपसहृत० । घ. उपसपेद्धत्यसाधकः । ७. घ. न्यासं न्यस्त्वोभयोर्देशे । ८. घ. सहारार्चनयोय च उप० । ९. पूजयत् । १०. घ. बिन्दुमात्यर्थ० । ११. घ. तु । १२. घ. दुर्लभम् । १३. घ. भुवि पन्मुख । १४. घ. पुष्टिकरि तथा । १५. ख. मारणादिप्रयोगदम् । घ. मारणादिप्रयागकृत् । १६. पदयुग्म घ. पुस्तके नास्ति । १७. घ. स्वपादो तां च । १८. घ. स्पृशेत् । १९. श्लोकोय नास्ति घ. पुस्तके ।

स्वप्रियाबिन्दुपात्र[1] च गृहीत्वा साधकोत्तम[2] ।
प्रसह्यनार्चनं कृत्वा बिन्दुपात्र तथैव च ॥४६॥
उन्मादो च भवेत् पुत्र मृत श्वानो भविष्यति ।

॥ इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रे पञ्चविंशति[3] पटल ॥ २५॥

॥ अथ षड्विंश पटल. ॥

जातवेदमये[4] देवि[5] जगज्जननकारिणि[6] ।
जय पीताम्बरधरे[7] 'बगलायै नमो नम.'[8] ॥१॥

स्कन्द[9] उवाच—
नमस्ते सिद्धससेव्य सिद्धविद्याधरार्चित ।
बगलाचतुरक्षर्या प्रयोग वद शङ्कर ॥२॥

शिव[10] उवाच—
'प्रयोग तर्पण चैव'[11] वक्ष्येऽह तव पुत्रक ।
तर्पण देवतावास तर्पण यन्त्रसिद्धिदम्[12] ॥३॥
तर्पण मन्त्रसस्कार सर्वं तत्तर्पणाद भवेत्
तर्पण द्रव्ययोग च तत[13] सिद्धिर्न सशय ॥४॥
अव्रण कलशे चैव कालमण्डलवर्जितम्[14] ।
गृहीत्वा क्षालयेत् सम्यक् पूजयन्मूलमन्त्रत[15] ॥५॥
तज्जल च समानीय पूजयेत सुसमाहित ।
आपो वा इति मन्त्रेण मन्त्रयेत्तज्जल पुन ॥६॥
उपचारै षोडशभि पूजयेत् कुम्भमादरात ।
तत्पवित्रेण सयुक्त तर्पणस्यामृतेन च ॥७॥
तेनोक्तविधिना सम्यक पूजन तदुदाहृतम् ।
काकोलूकच्छदेनैव[16] पवित्र ग्रन्थिमादरात् ॥८॥
तत्पवित्रेण सयुक्त तर्पणस्यामृतेन[17] च ।
नेत्ररोगी भवेच्छत्रुर्दिवान्धो जायते ध्रुवम् ॥९॥

---

१. घ स्वप्रियया० । २. ख साधकोत्तमं । ३. घ. पूजाप्रकरण नाम० । ४ ५. ६ ७ घ पुस्तके द्वितीया त पाठ । ८ घ. बगलाम्बां नमाम्यहम् । ९ श्रीभैरव १० घ ईश्वर । ११ घ तर्पणाख्य प्रयोग च । १२ घ. मत्रसिद्धिद । १३ घ तच्च । १४ घ कालमण्डल० । १५ घ मूलविद्यया । १६ घ. काकोलूकच्छदाभ्यां च । १७ घ तर्पणनामृतेन च ।

काकपत्रेण सयुक्तं[1] पवित्रग्रन्थिमादरात् ।
तेनैव सह सन्तर्प्य ह्ययुत साधकोत्तमः ॥१०॥
काकवद् भ्रमते शत्रुर्महीमामरणान्तिकम्[2] ।
काकोलूकस्य पक्षाभ्यामेकीकृत्वा[3] सुबुद्धिमान् ॥११॥
कृत्वा पवित्रग्रन्थि च तेन सन्तर्प्य चादरात्[4] ।
अयुत बगलामन्त्रैः शत्रुविद्वेषणं भवेत् ॥१२॥
विड्वराहमजारोमैः[5] पवित्रग्रन्थिमादरात् ।
तर्पयेदयुत तेन[6] बगलाचतुरक्षरैः ॥१३॥
अन्तर्द्वेषो[7] जायते च स शत्रुरवशिष्यते ।
केश च कलशस्य च पवित्रग्रन्थिमादरात्[8] ॥१४॥
अयुत तर्पणेनैव 'स शत्रोर्नाशन'[9] भवेत् ।
उष्ट्ररोमेण कृत्वा तु पवित्रग्रन्थिरेव च ॥१५॥
तेनायुत तर्पणेन मूको भवति पण्डितः ।
पूर्ववद्वाजिरोमेण तर्पण च कुमारक ॥१६॥
हिक्वारोगो भवेत्तस्य[10] शीघ्र[11] भ्रान्तो भविष्यति ।
खररक्तेन समिश्रमर्चित जलतर्पणात्[12] ॥१७॥
जिह्वास्तभो भवत्येव वाणीपतिसमोऽपि वा ।
श्वानरक्तेन समिश्रमर्चित शुभवारिणा ॥१८॥[13]
अयुत[14] तर्पणात्पुत्र[15] उन्मादी जायते रिपुः ।
काकरक्तेन सम्मिश्रमर्चित शुद्धवारिणा ॥१९॥
अयुत तर्पणात्पुत्र काकवद् भ्रमते महीम् ।
उलूकरक्तसमिश्रमर्चित शुभवारिणा ॥२०॥
रिपुरन्धो भवेत् पुत्र अयुताच्च न संशयः ।
मार्जारबालरक्तेन मिश्रिताज्जलतर्पणात्[16] ॥२१॥

---

१. घ. कृत्वा तु । २. घ. ॰मातर्पणान्तिकम् । ३. घ. एकीकृत्य तु । ४. घ. बुद्धिमान् । ५. घ. गृध्रवाराहजैर्लोमैः । ६. घ. चैव । ७. ख. अन्यद्वेषो । घ. अन्तर्द्वेषो । ८. घ. ॰माचरेत् । ९. घ. स्वशत्रुत्वा॰ । १०. घ. भवेच्छीघ्र । ११. घ. रिपुर् । १२. घ. शुद्धवारिणा । १३. घ. पुस्तकेऽयं श्लोको नास्ति । १४. घ. अयुतात् । १५. घ. तर्पयेत् पुत्र । १६. घ. मिश्रित जलतर्पणम् ।

भ्रान्तचित्तो भवेच्छत्रुरयुताच्च न संशयः ।
विड्वराहस्य[1] रक्तेन मिश्रित जलतर्पणम् ॥२२॥
उन्मादो च भवेच्छत्रुरयुतादेव[2] पुत्रक ।
लुलायरक्तसम्मिश्रजलेनैव तु तर्पणम् ॥२३॥
'प्रयुतादरिगर्वं तु'[3] मूकत्वं कुरुते नृणाम् ।
भुजङ्गरक्तसमिश्रजलेनैव तु तर्पणम्[4] ॥२४॥
शत्रूणां मारणं पुत्र अयुताच्च न संशयः ।
छागरक्तेन समिश्रमर्चितेन जलेन च ॥२५॥
तर्पणेनायुतेनैव व्रणरोगी भवेद्रिपुः ।
शशकस्य तु रक्तेन 'मिश्रितेन जलेन च'[5] ॥२६॥
क्षयरोगो 'भवेन्मर्त्योऽप्ययुताच्च'[6] न संशयः ।
मत्कुणस्य च 'रक्तेन मिश्रितेन जलेन च'[7] ॥२७॥
प्रयुतात्तस्य शत्रोश्च भवेन्मरणमुत्तमम् ।
मेषस्य पुच्छरक्तेन 'मिश्रितेन जलेन च'[8] ॥२८॥
प्रयुताज्ज्वररोगी[9] च जायते तत्क्षणाद्रिपुः ।
द्रव्येणैव च समिश्रमर्चितं जलतर्पणम्[10] ॥२९॥
प्रयुताच्चिन्तितं कार्यं भवत्येव न संशयः ।
एतत्तर्पणयोगं च सिद्धात् सिद्धतरं सुत ॥३०॥
न वक्तव्यं न वक्तव्यं न वक्तव्यं कदाचन ॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे षड्विंशः[11] पटलः ॥२६॥

॥ अथ सप्तविंशः पटलः ॥

नानालङ्कारशोभाढ्या नरनारायणप्रियाम् ।
वन्देऽहं बगला देवीं परब्रह्माधिदेवताम् ॥१॥

स्कन्द[12] उवाच—
वन्दे पाशुपताध्यक्ष परमानन्दविग्रह ।
वद होमप्रयोगं च बगलाचतुरक्षरैः ॥२॥

---

१. घ. विड्वराहेण । २. घ. ०प्रयुताच्चैव । ३. घ. प्रयुदक्षिणा पञ्च । ४. घ. तर्पणात् । ५. घ. मिश्रित जलतर्पणम् । ६. घ. भवेन्मत्रुरयुतात् । ७. घ. मिश्रितं जलतर्पणम् । ८. घ. मिश्रित जलतर्पणम् । ९. घ प्रयुताच्चर्मरोगी । १०. घ. पुस्तके पाठोऽयं विशेषः— नररक्तेन समिश्रमर्चितं जलतर्पणम् ।
११. घ. चतुरक्षरीतर्पण प्रयोगं नाम षड्विंशति । १२. घ. क्रोञ्चभेदन ।

शिव उवाच[1]—

वक्ष्ये होमविधिं सम्यक् सावधानेन श्रूयताम् ।
प्रयुतं पुत्र होमं[2] च पिचुमर्दफलैर्हुनेत् ॥३॥

प्रयुताच्छत्रुसंहारो भ्रान्तभीतो[3] भवेद् ध्रुवम् ।
'करवीराणि रक्तानि'[4] प्रयुतं चाज्यसंयुतम् ॥४॥

हुनेत् त्रिकोणकुण्डे तु प्रयुताद्[5] रिपुमारणम् ।
विषतिन्दुकबीजं च सौवीरद्रवसंयुतम् ॥५॥[6]

ग्राममध्ये हुनेन् मन्त्री भगाकारे च कुण्डके ।
तद्ग्रामे वेदशास्त्राणि सर्वं विस्मृतिमाप्नुयात् ॥६॥

दीपभाषापतिप्रख्यः[7] 'स एव जडतामियात्'[8] ।
वटमूलं समाश्रित्य कृत्वा कुण्डं त्रिकोणकम् ॥७॥

तत्फलेन हुनेद् रात्रौ प्रयुतं चाज्यमिश्रितं ।
भाषापतिसमो विद्वांस्तत्क्षणाद् भ्रान्तिमाप्नुयात् ॥८॥

अश्वत्थमूलमाश्रित्य षट्कोणाकृतिकुण्डके ।
तत्फलं च हुनेद् रात्रौ[9] प्रयुतं चाज्यमिश्रितम् ॥९॥

स्फोटकव्रणसंयुक्तो 'म्रियते यमशासनात्'[10] ।
उदुम्बरस्य[11] मूले तु षट्कोणाकृतिकुण्डके ॥१०॥

कोमलं तत्फलं सम्यगयुतं चाज्यमिश्रितम् ।
जुहुयाद्रजकस्याग्नौ जुहुयाद्दक्षिणामुख[12] ॥११॥

ग्रामं वा नगरं वाथ रणे राजकुलं 'तु वा'[13] ।
नाडीव्रणसमायुक्तो नानादुःखेन पुत्रक ॥१२॥

म्रियते 'न च'[14] सन्देहो नात्र कार्या विचारणा ।
राजवृक्षं समाश्रित्य तन्मूले च कुमारक ॥१३॥

---

१. घ. ईश्वर । २. घ होमाच् । ३. घ. भ्रान्तचित्तो । ४. घ. हयारिरक्तकुसुमैः । ५ घ. तत्क्षणाद् । ६ ख घ. पुस्तकद्वये विशेषोऽयं पाठ —

प्रयुतं जुहुयान्मन्त्री तत्क्षणाद्रिपुमारणम् ।
पलाशबीजमयुतं तिलतैलेन संयुतम् ॥

७ घ ०प्रख्या । ८. घ सर्वं विस्मृतिमाप्नुयात् । ९ घ. पुत्र । १० घ. मारकं भवति ध्रुवम् । ११. घ औदुम्बरस्य । १२ घ. नग्नो दक्षिणदिङ्मुख । १३ घ. तथा । १४ घ. नात्र ।

हस्तमात्रं भगाकारं कुण्डं कुर्याद् विचक्षणः ।
तत्फलं निम्बतैलेन मिश्रितं निशि बुद्धिमान् ॥१४॥

नेत्रायुतं हुनेद् धीमान् ग्रामं वा नगरं तथा ।
स्फोटकव्रणसंयुक्तो हस्तपादादिसन्ततः ॥१५॥

पर्यायान् म्रियते चैव[1] नात्र कार्या विचारणा ।
सर्षपं लवणं चैव तिलतैलेन मिश्रितम् ॥ १६॥

प्रयुतं जुहुयान्मन्त्री ज्वररोगी भवेद्रिपुः ।
पिचुमदस्य[2] तैलेन मिश्रितं लवणं तथा ॥१७॥

हुनेच्च[3] पूर्ववत् कुण्डे प्रयुतं प्रेतपावके ।
कुष्ठरोगी भवेच्छत्रुर्म्रियते तेन निश्चितम् ॥१८॥

शमीमूले हुनेत्पुत्र 'शृणु वक्ष्यामि तत्फलम्'[4] ।
तिलतैलेन सम्मिश्र[5] तत्फलं निशि पुत्रक ॥१९॥

जुहुयात्तत्क्षणात् पुत्र 'शृणु वक्ष्यामि'[6] तत्फलम् ।
वातरोगी भवेच्छत्रुर्म्रियते नात्र संशयः ॥२०॥

अपामार्गस्य बीजं तु तिलतैलेन मिश्रितम् ।
शमीमूले हुनेत्पुत्र प्रयुतं ध्यानपूर्वकम् ॥२१॥

तत्रस्थाः शत्रुभार्याश्च तद्गृहे तत्र योषितः ।
वन्ध्याः स्त्रियो भवेयुश्च सत्यमेव[7] शिवोदितम् ॥२२॥

शमीमूलं समाश्रित्य 'शलाटुं च समासतः'[8] ।
तिलतैलेन संमिश्रं जुहुयादयुतं तथा ॥२३॥

प्रेताग्नौ रजकाग्नौ वा पूर्वोक्ते चैव कुण्डके ।
वैरिस्त्रीणां भवेत् सद्यः[9] स्रवद्रक्तं[10] निरन्तरम्[11] ॥२४॥

तिलतैलेन संमिश्रं शलाटुं[12] शाल्मलीभवम्[13] ।
पूर्ववच्च हुनेत् पुत्र मेहरोगी[14] भवेद्रिपुः ॥२५॥

---

१. घ. शत्रुः । २. घ. पिचुमर्देन । ३. घ. हुनेत्तु । ४. ख. ग. घ. भगाकारे तु कुण्डके । ५. घ. संयुक्तं । ६. घ. वक्ष्यामि शृणु । ७. घ. सत्यमेतच्च । ८. घ. शाद्वलस्य च मासतः । ९. घ. सद्यो । १०. घ. वा यद्रक्तं । ११. घ. सुनिश्चितम् । १२. घ. शंलूप । १३. घ. ०भवेत् । १४. घ. महद्रोगी ।

एव होमप्रयोग च रात्रौ कुर्यात् कुमारक ।
'प्रयोग चोपसहार सत्पुत्रायापि नो वदेत्'[1] ॥२६॥[2]

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतत्रे सप्तविंशति[3] पटल ॥२७॥

॥ अथाष्टाविंशतिः पटल ॥

बालभानुप्रतीकाशा[4] नीलकोमलकुन्तलाम्[5] ।
व-देऽहृ बगला देवी स्तम्भनास्त्रस्वरूपिणीम् ॥१॥

स्कन्द उवाच—[6]

विश्वनाथ नमस्तेऽस्तु विरूपाक्ष नमो नमः ।
सुगम[7] स्तम्भविद्याया प्रयोग वद शङ्कर ॥२॥

शिव[8] उवाच—

बगलाहृदय मत्र गुप्तगुप्ततर[9] तया ।
एतच्छ्रवणमात्रेण मत्रसिद्धिमवाप्नुयात् ॥३॥

न ध्यान न च होम च न जप न चतर्पणम् ।
सकृदुच्चारणान् मत्राच्चिन्तित[10] भवति ध्रुवम् ॥४॥

न चाभिषेक न च मत्रदीक्षा,
न चात्र[11] दिक्काल ऋतुश्च[12] देवता[13] ।
न चापि पञ्चेन्द्रियनिग्रह च,
सकृत् स्मरन्वै बगलास्यहृन्मनुम्[14] ॥५॥

बगलाहृदय मत्र ब्रह्मादीना च दुर्लभम् ।
सकृत् स्मरणमात्रेण वाञ्छित फलमाप्नुयात ॥६॥[15]

---

१. घ पुस्तकेऽयमशो विशेष—प्रयोगादौ प्रयोगान्ते पूजा कुर्याद् प्रयत्नत ।
२ घ पुस्तके श्लोकोऽय विशषो लभ्यते—

एव य कुरुते पुत्र प्रयोग सिद्धिमाप्नुयात ।
पूजा विना कृत कर्म प्रयोग निष्फल भवेत् ॥२७॥

३ घ चतुरक्षरीहोमकथन नाम सप्तविंशति । ४ घ. बालभाव० । ५. घ ०कुण्डलाम । ६ घ क्रोञ्चभदन । ७ घ सुभग । ८ घ ईश्वर । ९ घ गुप्तात० । १० घ तस्य चिन्तित । ११ घ न चापि । १२ ख दिक्कालक्रमश्च । घ. दिक्पालक । १३ घ देवताश्च । १४ घ ०हृन्मनु । १५ पद्यार्द्धमिद ख ग. पुस्तकद्वयाधिक दृश्यते—

सचारवान् भवेद् पङ्गु_र्वादी मूकत्वमाप्नुयात् ।

दरिद्रोऽपि भवेच्छ्रीमान् स्तब्धीभवति[1] पण्डितः ।
चतुरो मुष्करश्चैव[2] कीर्त्तिमान् निन्दको भवेत् ॥७॥

कवीश्वरोऽपि चोन्मादो[3] भोगासक्तोऽपि रोगवान् ।
रोगवान्[4] क्षयरोगी स्यात्[5] कुलजो[6] निन्दको भवेत् ॥८॥

मानी लघुतरश्चैव[7] नैष्ठिको भ्रष्टतां व्रजेत् ।
एतद्विना कलौ पुत्र सुकृतकीर्तिकारणम्[8] ॥९॥

गुणश्च वसंते पुंसां तस्योत्पन्नकारणम्[9] ।
वगलाहृदय मन्त्रं सकृदावर्त्तयेत्तु यः ॥१०॥

तस्योल्लंघनमात्रेण नष्टः स्यात्पद्मजोऽपि वा ।
वगलाहृदय मन्त्रमुपासनपरस्य च ॥११॥

करोति यस्य[10] सन्तोष तस्य सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
येन केनाप्युपायेन हृन्मन्त्र येन[11] जायते ॥१२॥

सन्तोष जनयेत् तस्य[12] चिन्तित फलमाप्नुयात् ।
तन्मन्त्रोद्धारमतुल 'तत्त्वतः स्वविधानत'[13] ॥१३॥

वक्ष्येहं तव सर्वञ्च[14] क्रौञ्चभेदन तच्छृणु ।
पाशबीज ततोच्चार्य[15] स्तम्भमाया ततोच्चरेत्[16] ॥१४॥

अंकुश बीजमुच्चार्य भूव(वा)राह तथोच्चरेत् ।
वाराहं वाग्भव चैव कामराज तत परम् ॥१५॥

श्रीबीज भुवनेशी च 'वगलामुखिपद वदेत्'[17] ।
मावेशयद्वय चोक्त्वा पाशबीजमतोच्चरेत् ॥१६॥

स्तम्भमाया ततोच्चार्य[18] मङ्कुश बीजमुच्चरेत् ।
ब्रह्मास्त्ररूपिणी चोक्त्वा एहियुग्मं ततोच्चरेत् ॥१७॥

पाशबीजमतोच्चार्य[19] स्तम्भमाया ततोच्चरेत् ।
अङ्कुश बीजमुच्चार्य मम शब्द ततोच्चरेत् ॥१८॥

---

१. क. स्तल्ली० । ख घ. स्तब्धो भवति । २. घ. पुष्कर० । ३. घ. उन्मादी । ४. ग. रगवान् । घ. सत्ववान् । ५. घ. च । ६. घ. कुलवान् । ७. घ. लज्जा-विहीनस्तु । ८. ख घ. सुकृत कीर्ति० । ९. ख. ग. तस्योपासन० । घ. द्रव्य नाशन० १०. घ. तस्य । ११. घ. यस्य । १२ घ. भवः । १३. घ. तदाराधनलक्षणम् । १४. घ. सर्वत्र । १५. घ. समुच्चार्य । १६. घ. समुच्चरेत् । १७. घ. बगलामुखि उच्चरेत् । १८. घ. समुच्चार्य । १९. घ. पाशबीज समुच्चार्य ।

हृदये 'तु समुच्चार्य'[1] आवाहययुग वदेत् ।
सान्निध्य कुरुयुग्म च पुनर्वीजत्रय वदेत् ॥१६॥

ममैव हृदयेत्युक्त्वा चिर तिष्ठद्वय वदेत् ।[2]
'पुनर्वीजत्रय चोक्त्वा'[3] हु फट् स्वाहासमन्वित.[4] ॥२०॥

अशीतिवर्णसयुक्तो[5] 'वगलाहृदय मनुः'[6] ।[7]
वन्ध्यामुन्मार्जयेदङ्ग[8] वगलाहृदयेन च ॥२१॥

वन्ध्या पुत्रवती चैव षण्मासाद् भवति ध्रुवम् ।
वगलाहृदयेनैव त्रिसप्तमभिमन्त्रितम् ॥२२॥

'पय. पिबति वा सा स्त्री'[9] वन्ध्या[10] पुत्रवती भवेत् ।
कृत्रिमेषु च रोगेषु नानाभयसमुद्भवे[11] ॥२३॥

त्रिसप्तमन्त्रित तोय सद्यो नैर्मल्यमातनोत् ।
नित्यमष्टोत्तरशत[12] वगलाहृदय मनुम् ॥२४॥

चिन्तित च भवेत् पुत्र नात्र कार्या विचारणा ।

इति षड्विद्यागमे साख्यायनतन्त्रेऽष्टाविंशति[13] पटल ॥२८॥

॥ अथोनत्रिंशः पटलः ॥

नमस्ते देवदेवेशि नम. स्वर्णविभूषणे ।
पानपात्रयुते देवि वगले त्वा नतोऽस्म्यहम् ॥१॥

स्कन्द[14] उवाच—

अष्टमूर्ते नमस्तुभ्य आनन्दगणसागर[15] ।
वगलाहृदय यन्त्र[16] प्रयोग वद शङ्कर ॥२॥

ईश्वर उवाच—

विन्दुत्रिकोणषट्कोणवृत्तत्रयविभूषितम् ।
षट्कोण चैव वृत्त च भूपुरद्वयसयुतम् ॥३॥

---

१. पदमुच्चार्य । २. निम्नाशोऽय घ पुस्तक एव दृश्यते विशेष —
पाशबीज ततोच्चार्य स्तम्भमाया ततोच्चरेत् ।

३. घ अङ्कुशबीजमुच्चार्य । ४. घ. स्वाहेति उच्चरेत् । ५. घ ०मन्त्रोऽय । ६. घ मुनिगुह्य सुपावनम् । ७ घ पुस्तक एवायमशो विशेष —
पुत्र देय शिरो देय न देय हृदय मनु ।

८. घ वन्ध्याया मार्जयेदेव । ९ घ. पिबेदुदयकाल तु । १०. घ. सापि । ११ घ ०समुच्चय । १२. घ. ०मष्टोत्तर जप्त्वा । १३ घ. हृदयप्रयोग नाम अष्टाविंशति. । १४. घ. क्रौञ्चभेदन । १५. आनन्दगुणसागर । १६ घ मन्त्र ।

मध्ये लिखेन्महामन्त्र बगलाहृदय तथा ।
त्रिकोणेषु लिखेद् बीज बगलाख्य सुपावनम् ॥४॥
षट्कोणे वा लिखेन्मन्त्र षट्त्रिंशद्वर्णकारकम् ।
शताक्षरीमहामन्त्रमाद्यवृत्त लिखेत् क्रमात ॥५॥
'तस्योपरि च सवेष्ट्य बगलाबीजमादरात्'[1] ।
तस्योपरि[2] विलिखेद्यन्त्र 'स्वर्णे वा रौप्यपत्रके'[3] ॥६॥[4]
लिखित्वा शुभलग्ने तु स्पष्टरेखाश्च[5] सलिखेत् ।
स्पष्टबीजानि सलिख्य पूजयेदर्कवासरे ॥७॥
'सहस्र प्रजपेन्मन्त्र दुर्गाहृदयमादरात्'[6] ।
योगिनी पूजयेत्तत्र धूपदीपार्चनादिभि ॥८॥
कौलार्चनविधानेन मन्त्रसिद्धिर्भवेद्[7] ध्रुवम् ।
सुरक्तं पूजयेद्यन्त्र 'हयारिकुसुमं शुभं'[8] ॥९॥
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य प्रयुत जपमादरात् ।
मल्लिकाकुसुमेनैव[9] ह्यष्टोत्तरशत जपेत् ॥१०॥
बगलाहृदयनैव ह्यर्चयेज्ज्वरशान्तये ।
'मल्लिकाकुसुमेनैव ह्यष्टोत्तरशत जपेत्'[10] ॥११॥
बगलाहृदयनैव ह्यष्टादशशत तथा ।
प्रभ न्त[11] वेदशास्त्राणां व्याख्याता भवति ध्रुवम् ॥१२॥

---

१ ख घ पुस्तकद्वय पादद्वयस्थाने निम्नाशो लभ्यते —

तदुपरि च सवेष्ट्य पञ्चाशद्वर्णमादरात् ।
तस्योपरि च सवेष्ट्य बगलाबीजमादरात् ॥
तस्योपरि च षटकोणे बगला चतुरक्षरी ।
कोणे कोणे लिखेन्मन्त्र प्रत्यक च कुमारक ॥

२ ख घ एव च । ३ घ स्वर्णरौप्यादिताम्रके । ४ अस्याग्रे निम्नांशो दृश्यतेऽधिक ख घ पुस्तकयुग्मे—

'अष्टम्यां च'[1] चतुर्दश्यां नवम्यां भौमवासरे'[2]
उत्तराभिमुखो भूत्वा लेखिन्या स्वर्णजातया[3] ॥

५ घ स्पष्टरेखासु । ६ घ —

प्रजपेद् बगलायाश्च सहस्र हृदय मनु ।

७ घ सिद्धमन्त्रो भवेद । ८ घ हयारेश्च सुबुद्धिमान् । ९ ख •कुसुमैश्चव । घ •कुसुमैर्दिव्यैः । १० ख घ — स्यम तकुसुमेनव ह्यर्चयच्छ्रलमादरात् । ११ घ मश्रुतान् ।

---

1. घ कृष्णाष्टम्यां । 2 घ अथवा पौर्णिमादिने । 3 हेमतारयो ।

बकुलैः पूजयेद्यन्त्रं पुत्रवान् जायते नरः ।
'पलाशकुसुमैरर्चेद्यन्त्रराज'[1] कुमारक ॥१३॥
विद्यासिद्धिर्भवेत् पुत्र पूर्वसख्याक्रमात्सुत[2] ।
पद्मपत्रेण सम्पूज्य पूर्ववद्यन्त्रमादरात्[3] ॥१४॥
कुबेरसदृशो भूत्वा 'लभते भुवि सपद.'[4] ।
नन्द्यावर्त्तैर्यन्त्रराज पूजयेत् पूर्ववत् सुत ॥१५॥
त्रैलोक्य 'वशमाप्नोति पूजायाश्च प्रभावतः'[5] ।
चम्पकेनैव सम्पूज्य पूर्ववद्विजितेन्द्रियः ॥१६॥
तस्य दर्शनमात्रेण वादिना स्तम्भन भवेत् ।
बिल्वपत्रेण सम्पूज्य पूर्वसख्यासु बुद्धिमान् ॥१७॥
द्रव्यलाभ[6] भवेत्तस्य तत्क्षणादेव पुत्रक ।[7]
अशोकपुष्पै. सम्पूज्य पूर्ववद्विजितेन्द्रियः ॥१८॥
श्रेष्ठराज्य भवेत्पुत्र अनायासेन साधकः ।
केतकीकुसुमेनैव पूर्ववत्पूजयेत्सुत ॥१९॥
निधान[8] लभते तस्य शिवस्य वचन यथा ।
पीतवर्णेन पुष्पेण 'निर्गन्धेन सुगन्धिना'[9] ॥२०॥
अर्चयेदयुत मन्त्री षोडशैरुपचारकैः ।
वाचा[10] सिद्धिर्भवेत्तस्य देवीरूपो न संशयः ॥२१॥
तस्य दर्शनमात्रेण सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ।
यजेत्तद्बगलायन्त्र[11] मुनिगुह्य सुपावनम् ॥२२॥
प्रकाशयेन्न[12] कस्यापि देवताशापमाप्नुयात् ।
इति षड्विद्यागमे साङ्ख्यायनतन्त्रे एकोनत्रिंशः[13] पटलः ॥२९॥

---

१. घ. पालाशपुष्पसपूज्य. मन्त्रराज । २. पूर्वसख्या पुत्रक । ३ घ. पूर्ववत् क्रौंचभेदन । ४. घ. मोदितो भुवि सपदः । ५. घ वशमायाति यावज्जीव न सशयः । ६. घ. द्रव्यलाभो । ७ घ. पुस्तक एव निम्नः श्लोको दृश्यते विशेष.—
तुलसीमजरीभिस्तु पूर्ववत्पूजयेन्नरः ।
राजलाभो भवेत् सद्य अयत्नादेव पुत्रक ॥
८. ख. विधान । ९- घ. निर्गन्धैर्वा सुगन्धिभिः । १०. घ. वाञ्छा । ११. घ. यएतद्बगलामन्त्रं । १२. घ. न देय यस्य । १३. घ. बगलायन्त्रप्रकाशन नाम एकोनत्रिंशः ।

अथ त्रिंशः पटलः ॥

नमस्ते देवदेवेशि पुत्रपौत्रप्रवर्द्धिनी(नि) ।
स्तम्भनार्थं भजेऽहं त्वां पीतमाल्यानुलेपनाम्[1] ॥१॥

स्कन्द[2] उवाच—

नमस्ते सर्वसर्वेश पुराणपुरुषोत्तम ।
बगलाष्टाक्षरमन्त्र[3] वद मे करुणाकर ॥२॥

शिव[4] उवाच—

वेदादि 'विलिखेत् पूर्वं'[5] पाशबीजमनन्तरम् ।
स्तम्भमाया[6] ततोऽच्चार्य अङ्कुश बीजमेव च[7] ॥३॥
'हुं फट् स्वाहा'[8]-समायुक्त मन्त्रमष्टाक्षर[9] तथा ।
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोऽस्य[10] गायत्री समुदाहृता ॥४॥
'देवता बगलानाम्नी चिन्मयी विश्वरूपिणी'[11] ।
ॐ बीज ह्लीं शक्तिश्च क्रों कीलकमुदाहृतम् ॥५॥
न्यासविद्या च बगलामन्त्रराजवदाचरेत्[12] ।
ध्यान चैव प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदेन पुत्रक ॥६॥
युवती च मदोद्रिक्ता[13] पीताम्बरधरा शिवाम् ।
पीतभूषणभूषाङ्गी समपीनपयोधराम् ॥७॥
मदिरामोदवदना प्रवालसदृशाधराम् ।
'पानपात्र च शुद्धिं च'[14] बिभ्रती बगला स्मरेत् ॥८।
एव ध्यात्वा जपेत् पुत्र[15] बगलाष्टाक्षरीमनुम् ।
ध्यानेनैव[16] जप कुर्याद् ध्यायेदाद्यन्तयोस्तथा[17] ॥९॥
'अशोकमूले निवसन् मधुरारससयुतम्'[18] ।
हरिद्रामालिकाभिश्च वर्णलक्ष जपेन्मनुम् ॥१०॥

---

१ ग पीतमाल्यांबुलपनाम् । २ घ रा क्रौञ्चभदन । ३ ख घ रा बगलाष्टाक्षरी-मन्त्र । ४. ख. घ रा. ईश्वर । ५ ख अवितरादौ तु । ६. ख. घ रा. स्तम्भमाया । ७. रा बीजमुच्चरेत । ८ ख. बगला च । [illegible] घ मन्त्रमष्टाक्षरी । १०. रा छन्दोऽत्र । ११. '-' प्रथमश ख. पुस्तके नास्ति । रा. ०बीजरूपिणी । १२ ख घ बगला० । १३. ख. घ. ०मदोन्मत्ता । रा यौवना च मदोन्मत्ता । १४ घ. रा वैरिजिह्वा पानपात्र । १५. घ रा. मन्त्र । १६ रा ध्यायक्षेत्र । १७. ख ०पराम् । १८. घ रा अशोकमूलमाश्रित्य हरिद्राम्बरसयुताम् ।

अष्टायुत तर्पण च हेतुसम्मिश्रवारिणा ।
तद्दशाश हुनेत् पुत्र अन्नेन[1] 'च सम मधु'[2] ॥११॥

योगिनी पूजयेत् पश्चाद् गर्भकौलागमक्रमात् (मैः)।
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाच्छत[3] 'वाष्टशत तु वा'[4] ॥१२॥५

एतन्मत्रस्य माहात्म्य शिवो जानाति नान्यथा ।
बिल्वमूले जपेन्मत्रमयुत ध्यानपूर्वकम् ॥१३॥

लक्ष्मीवान् जायते पुत्र दरिद्रस्तु[6] न सशयः ।
अश्वत्थमूले प्रजपेदयुत पूर्ववन्नरः[7] ॥१४॥

अश्रुतानां[8] च शास्त्राणां[9] व्याख्याता भवति ध्रुवम् ।
शमीमूले जपेन्मत्रमयुत पूर्ववन्नरः[10] ॥१५॥

अष्टराज्य लभेत्पुत्र[11] अनायासेन निश्चितम्[12] ।
बदरीमूलमाश्रित्य अयुत पूर्ववज्जपेत्[13] ॥१६॥[14]

वशीकरणसम्मोहौ 'जाय(ये)ते नात्र सशय.'[15] ।
उदम्बरतरोर्मूले[16] पूर्ववज्जपमाचरेत् ॥१७॥[17]

कुवेरसदृश श्रीमान् जायते नात्र सशयः ।
कदलीमूलमाश्रित्य पूर्ववज्जपमाचरेत्[18] ॥१८॥[19]

---

१. ख आज्येन । रा. तत्फल । २ रा. कुसुम मधु । ३. प. रा. पुत्र शतं । ४. रा. वा तु तदर्द्धकम् । ५. ख घ. रा पुस्तकेषु विशेषः पाठो दृश्यते—

घ रा. ध्यानोक्ता बगला देवी धर्मदुःदर्शनोभवेत् ।
ख. ईमदर्शने भवे देवि नान्यथा शिवभाषितम् ।

६. ख. घ. दरिद्रोऽपि । ७. घ. ध्यानपूर्वकम् । ८. ख घ. अश्रुतानि । रा. अश्रुतं । ९. ख घ. शास्त्राणि । रा वेदशास्त्राणां । १०. ख. प्रजपेन्नर. । ११. ख. भवेत् सद्यो । १२. ख. रा. पुत्रक । १३. रा. ०न्नर । १४. श्लोकोऽयं नास्ति घ. पुस्तके । १५ रा स्वभावेनैव जायते । १६ घ. औदुम्बर० । १७ घ पुस्तके श्लोकोऽयं नास्ति १८. घ रा. अयुत पूर्ववत् जपेत् । १९. घ. पुस्तके पद्यमदो नास्ति ।

'प्रयोगादीनि सर्वाणि सर्वसिद्धिर्भवेत्सुत'[1] ॥१९॥

॥ इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे त्रिंशत्पटलः[2] ॥३०॥

॥ अथ एकत्रिंशः पटलः ॥

विराट्स्वरूपिणी देवीं विविधानन्ददायिनीम् ।
भजेऽहं बगला देवी भक्तचिन्तामणि शुभाम्[3] ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

चन्द्रोपेन्द्रमहेन्द्रादिसनुतः[4] सर्वमङ्गला(ल) ।
बगलाष्टाक्षरीमन्त्र(न्त्र) प्रयोगान्[5] वद शङ्कर ॥२॥

---

१. ख. पुस्तके एतदग्रस्थानेऽयमंशः समुपलभ्यते—

'प्रयोगादीनि सर्वाणि पूर्ववत्कारयेत् सुधीः ।
एतत्क्रमेणैव पुत्र बगलाष्टाक्षरीविधि. ।
संक्षेपेन मया प्रोक्तं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥

अस्याग्रे निम्नांशो ध पुस्तक एव दृश्यते—

अयुताल्लभते भोग वाञ्छित शिववत् इव ।
पूगीवन समाश्रित्य अयुत पूर्ववज्जपेत् ॥१९॥

निक्षेप लभते पुत्र अयुताम्मासमात्रतः ।
जंबीरतरुमाश्रित्य अयुतं पूर्ववज्जपेत् ॥२०॥

राजा चैव यथो भूत्वा सर्वस्व दीयते ध्रुवम् ।
उद्यानवनमाश्रित्य अयुत पूर्ववज्जपेत ॥२१॥
य य वापि स्मरेत् पुत्र त तं प्राप्नोति निश्चितम् ।
पुष्पवाटघां जपेन्मन्त्रमयुत पूर्ववत् सुत ॥२२॥

राजलाभो भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ।
नदीतीरे जपेन्मंत्रमयुतं पूर्ववत्सुतः ॥२३॥
पुत्रवान् जायते लोके धनधान्यादिसंयुतः ।
एतन्मन्त्री जपेन्मन्त्र तत्तत्फलमवाप्नुयात् ॥२४॥

एतदष्टाक्षरीमन्त्र सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमम् ।
प्रयोगादीनि सर्वाणि सर्वसिद्धिर्भवेत्सुत ॥२५॥

२. अष्टाक्षरीप्रयोगं नाम त्रिंशत्पटलः ।

३: रा॰ नमस्ते लोकजननी(नि) व्यासवाल्मीकिवन्दिते ।
स्तम्ब(म्भ)नाख्यस्वरूपिण्यं बगले त्वां नमाम्यहम् ॥

४. रा॰ इन्द्रोपेन्द्रमहेन्द्रादिसन्तुष्ट । ५. रा. प्रयोष ।

ईश्वर उवाच—

सर्षपं लवणं चैव चिताभस्म समं समम् ।
अर्कक्षीरेण खल्वेन मर्दयेत्[1] सूक्ष्मतोऽनघ[2] ॥३॥

अङ्गुष्ठमात्रा[3] कृत्वा तु पुत्तली पूर्ववत् सुत ।
बदरीकण्टक[4] चैव सर्वाङ्गे तस्य लेपयेत्[5] ॥४॥

आरनालस्य भाण्डे तु अधोमुखी[6] विनिक्षिपेत् ।
'मङ्गारवासरे पूज्या'[7] पुनस्तत्रैव निक्षिपेत् ॥५॥

एवं मासत्रयं कृत्वा 'जिह्वास्तंभं भवेद् रिपोः'[8] ।
रवौ रात्रौ च सगृह्य[9] चिताभस्म समादरात् ॥६॥

बगलाष्टाक्षरीमन्त्र 'अयुतं मन्त्रयेत्'[10] सुत ।
खाने पाने च तद्भस्म दातव्यं वैरिणस्तथा[11] ॥७॥

जिह्वा मुख[12] च कर्णाक्षिपादादिस्तंभनं[13] भवेत् ।
तेनैव म्रियते शत्रुर्मासान्मण्डलमात्रतः[14] ॥८॥

आरनालेन[15] तद्भस्म रहस्येन विनिक्षिपेत्[16] ।
तदन्नभक्षणेनैव बुद्धिभ्रंशोऽपि[17] जायते ॥९॥

तद्भस्म तिलतैलेन शिरोभ्यङ्गं समाचरेत् ।
तेनैव तत्क्षणात् पुन[18] चित्तचाञ्चल्यवान्[19] भवेत् ॥१०॥

तद्भस्म चूर्णमिश्र[20] 'कृत्वा चूलं च वर्णकम्'[21] ।
'तेन शत्रुस्तत्क्षणाच्च'[22] बुद्धिजाड्यो भवेद् ध्रुवम् ॥११॥

विप्रचाण्डालयोः शस्य[23] (सत्य) प्रेतवस्त्रेण वेष्टयेत् ।
बगलाष्टाक्षरीमन्त्र[24] मन्त्रयित्वा सहस्रकम्[25] ॥१२॥

---

१. रा. मर्दय । २ रा. सूक्ष्मतो मुखम् । ३. घ. मात्र । ४. रा. ०कण्टकान् । ५. रा. निक्षिपेत् । ६. रा अधोभागे । ७. '–' रा. मङ्गारवारे सम्पूज्य । ८. रा शत्रुस्तम्भो भवेद् ध्रुवम् । ९ रा सग्राह्य । १०. रा. मन्त्रयेत्सुत । ११ वैरिणा तथा । १२. रा मति. । १३. रा. कर्णादि० । १४ रा. शत्रुमण्डल नात्र संशयः । १५ रा. मारनाले च । १६. रा च निक्षिपेत् । १७. रा. बुद्धिभ्रष्टोऽपि । १८. रा. शत्रु । १९ रा. चित्त चाञ्चल्यवान् । २०. रा. मिश्र तु । २१. रा. कृत्वा ताम्बूलचर्वणम् । २२. रा. कृत्वा तत्क्षणाच्छत्रु । २३. रा. शल्य । २४. रा बगलाष्टाक्षरैर्मन्त्रैः । २५. रा मवस्त्रकम् ।

रवौ रात्रौ शत्रुगेहे[1] ईशान्ये नंव(चंव) निक्षिपेत् ।
मण्डलातद्गृ(तगृ)हस्थोऽपि[2] म्रियते नात्र संशयः ॥१३॥
कटक[3] पुरपक्षस्य[4] त्रिसहस्र तु मन्त्रयेत् ।
निक्षिपेच्छत्रुसदने नित्य क[ल]हमाप्नुयात् ॥१४॥
काकोलूकदल चंव 'भौमे वा रविवासरे'[5] ।
संग्रहेत् प्रेतवस्त्रेण वेष्टयेद् रविवासरे ॥१५॥
निक्षिपेद् रविवारे तु रिपु(पो)र्गेहे तु[6] बुद्धिमान् ।
ग्र(गृ)हविद्वेषण[7] सद्यो जायते नात्र सशय. ॥१६॥
सर्प(र्पं) मण्डूकयोः शल्यं प्रेतरज्वा तु वेष्टयेत् ।
निक्षिपेच्छत्रुसदने स श(त्रु)रवशिष्यति ॥१७॥
मार्जारबालरोमाञ्च(णि)[8] रवौ रात्रौ च संग्रहेत् ।
प्रेतवस्त्र रवौ ग्राह्य शिवनिर्माल्यमेव च ॥१८॥
रवौ रात्रौ च संग्राह्य नरास्थि च सम समम् ।
चूर्ण(र्णी) कृत[9] तु तत्सर्वं मन्त्रयेदयुत तथा ॥१९॥
धूपयेच्छत्रुसदने तस्य सचारयो(ण)-स्थले ।
'तद्धूपवासने शत्रुर्मूको'[10] भवति तत्क्षणात् ॥२०॥
तच्चूर्णं देवतागारे भृगुवारे च धूपयेत् ।
'पलायते च तन्मन्त्री'[11] शिवस्य वचन यथा ॥२१॥
गजाश्ववृषभोलूकमहिषोरगकुक्कुटम्[12] ।
तच्चूर्णं धूपयोगेन सर्वं तृणजलादिकम् ॥२२॥
म्रियते सप्तरात्रेण स्वेदजाण्डजपिज(ड)जा.[13] ।
एतच्चूर्णं वृक्षमूले धूपयेच्च[14] कुमारक ॥२३॥
फलित पुष्पित वाथ स्थूलवृक्षमथापि वा ।
'सप्ताहात् शुष्कता'[15] याति सिद्धियोगः कुमारकः ॥२४॥

---

१. रा. गुहे । २. रा. मण्डल तु ग्रहस्तोपि । ३. रा कठक । ४. रा. पर-पुष्टिश्च । ५. रा. भौमवारस्य वासरे । ६ रा. सु । ७ रा. ०गृह० । ८ रा मार्जारी-रोमबालं च । ९. रा. चूर्णं कृत्वा । १०. रा. धूपवासने शत्रुश्च मूको । ११. रा. पलायती वनं मुक्ति । १२. रा ०कुकुंटाः । १३. रा स्वेतजाण्डजोद्भजापि च । १४. रा. ०सु । १५. रा. समाहाच्छुष्कति ।

मृगाणा[१] चैव शत्रूणा खाने पाने प्रयत्नत ।
वुद्धिनाशो भवेच्छत्रु(त्रो)स्त्रिदिन भक्षणात्[२] सुत ॥२५॥
प्रजा[३] वुद्धि श्रिय चैव ऐश्वर्यं हरते[४] नृणाम् ।
एतच्चूर्णप्रयोग[५] च ऋषीणामपि दुर्लभम्[६] ॥२६॥
चिताभस्म रवौ रात्रौ सग्रहेच्च[७] तदर्भक ।
श्रयुत मन्त्रयित्वा तु रिपुमूर्ध्नि विनिक्षिपेत् ॥२७॥
काकवद् भ्रमते शत्रुर्महि(ही)मामरणान्तिकम् ।
'शिलामामलक प्रस्थ'[८] सहस्र सग्रहेद् वुध. ॥२८॥
'अर्कवारे तु सध्याया'[९] मन्त्रेणैकेन मन्त्रय[त्][१०] ।
मन्त्रित 'निक्षिपेद् दूरे(द्वारे)'[११] दक्षिणाभिमुखेन च ॥२९॥
नित्य चैव सहस्र तु निक्षिपेद् दशवासरे[१२] ।
उच्चाटन भवेच्छत्रोर्नान्यथा शिवभाषणम् ॥३०॥
धत्तूरपत्रमादाय सहस्र मन्त्रयन्त्रिदि ।
प्रेतवस्त्रेण सवेष्ट्य भौमे शत्रुनिकेतने ॥३१॥
निक्षिपेद् द्वारदेशे तु मूको भवति तद्रिपु ।
तन्मार्गे सचरेद् यस्तु तत्सर्वेऽप्यरिमन्दिरे[१३] ॥३२॥
'खरबाल च रोम च'[१४] प्रतरज्जुस्तथैव च ।
मन्त्रयदयुत[१५] मन्त्र[१६] निक्षिपेच्छत्रुमन्दिरे ॥३३॥
पक्षाद वा मासयोगेन 'स शत्रुर्बान्धवै सदा'[१७] ।
म्रियते नात्र[१८] सन्देहो नात्र कार्या विचारणा ॥३४॥
एतच्च वगलामन्त्रप्रयोग[१९] भुवि दुर्लभम[२०] ।
गुरुपुत्राय दातव्य[२१] न दद्याद्[२२] यस्य कस्यचित् ॥३५॥

इति श्रो[२३] साख्यायनतन्त्रे षष्टाक्षरीप्रयोग नाम[२४] एकत्रिंशत्पटल ।

---

१ रा पितृणा । २ रा भक्षयत् । ३ रा प्रज्ञा । ४ रा हनते । ५. रा. प्रयोग । ६ दुलभ. । ७ रा सग्रहेत । ८ रा शटाङ्मूलकेप्रस्थ । ९. रा सव-कादाविसस्थायां । १० रा ह्रां वदेत् । ११ रा. विनिक्षिपे । १२ रा. •वासरम् । १३ रा •प्यतिम दघो । १४ रा. खरबालकरोमाणि । १५ १६ रा •दयुतंमंत्रं । १७ रा वुद्धिनाशनपूर्वकम् । १८ रा, न च । १९. रा •प्रयोगो । २० रा. दुर्लभ । २१ [illegible] दातव्यो । २२ रा देयो । २३ रा श्रीवदविद्यापमे । २४ रा नास्ति ।

॥ अथ द्वात्रिंशत्पटलः ॥

मन्त्रादौ तव बीजपूर्वकमथ क्लीं ब्लूं म्लू[1] सौं[2] ग्लौं जप[न्][3],
तताव[द्]ध्यानपराय[णः][4] प्रतिदिन पीत्ता(त्वा)क्षमालाधरः।
साध्याकर्षणवश्यमाशु बगले साध्यस्य शीघ्र भवेत्,
प्रेताढ्यासनपूर्विके[5] विवसने तत्प्रेमभूमौ निशि ॥१॥

क्रौञ्चभेदन उवाच—

नम. पापविदूराय नमस्ते चन्द्रशेखर।
बगला[6] चोपसहारविद्या वद सुपावनी[म्] ॥२॥

ईश्वर उवाच—

ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनी कालो विद्या चास्त्रसुपावनी[7]।
तस्यास्तत्स्मरणादेव[8] बगला शान्तिमाप्नुयात् ॥३॥

तद्विद्या च प्रवक्ष्यामि शान्त्यै[9] तच्छृणु[10] षण्मुख।
उच्चरेच्छक्तिवाराह वाराह[11] तदनन्तरम् ॥४॥

वाग्बीज च ततो(चो)च्चार्य भुवनेशी[12] ततः परम्।
महामाया[13] ततो(चो)च्चार्य श्रीबीज तदनन्तरम् ॥५॥

कालीशब्दद्वय[14] चोक्त्वा(क्त्वा) महाकालीपद[15] वदेत्।
एहि शब्दद्वय चोक्त्वा कालरात्री(त्रि)पद वदेत् ॥६॥

स्फुरद्वय समुच्चार्य प्रस्फुरद्वितय[16] लिखेत्[17] ॥७॥

स्तभनास्त्रपद चोक्त्वा शमनीपदमुच्चरेत्।
हुं फट् स्वाहा-समायुक्त मन्त्रमेव समुद्धरेत्[18] ॥८॥
पचाशदूर्द्ध्व मन्त्रस्य[19] वर्णत्रयविभूषितम्[20]।
ब्रह्मास्त्रस्तंभिनीकालीमन्त्रमेतन्न सशय. ॥९॥
पलाशमूलमाश्रित्य लक्षमेक जपे[त्]स्मयः[21]।
तर्पयेत्तद्दशांशेन[22] कर्पूरमिश्रित जलै.[23] ॥१०॥

---

१. रा. नास्ति। २ रा. सौ। ३ रा. जपे। ४. रा ०परायण। ५ रा. प्रेताढ्यासन०। ६. रा. बगला। ७ रा. चास्त्रे सु। ८. तस्य स्मरणमात्रेण। ९. क. शान्त्ये। १०. रा. च शृणु। ११. रा हुङ्कार। १२. रा. भुवनेश। १३. रा. मम माया। १४. रा. कालि०। १५ रा. महाकालि०। १६ रा महामोहद्वय। १७. रा. वदेत्। १८. रा. समुच्चरेत्। १९. रा मन्त्रस्तु। २०. रा. नवकेन विभूषित.। २१. रा. जपेन्नरः। २२. ०तद्दशांश च। २३. रा. जलम्।

पलाशपुष्पैर्जुहुयाच्चतुरस्रे च कुण्डले(के) ।
ब्राह्मणान् भोजयेत् पुत्र[1] सहस्र शतमेव वा ।।११।।
मन्त्रसिद्धिमवाप्नोति देवता च प्रसीदति ।
ब्रह्मा ऋषिश्च छन्दोऽस्य(स्य) गायत्री समुदाहृतम्[2] ।।१२।।
देवता कालिका नाम[3] स्तंभनास्त्रविभेदिनी[4] ।
ध्यानं यत्नात् प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदेन पुत्रक ।।१३।।
काली करालवदनां कलाधरधरां[5] शिवाम् ।
स्तम्भनास्त्रैकसहारी ज्ञानमुद्रासमन्विताम्[6] ।।१४।।
वीणापुस्तकसयुक्ता कालरात्रि नमाम्यहम् ।
बगलास्त्रोपसहारीदेवता[7] विश्वतोमुखीम्[8] ।।१५।।
भजेऽहं कालिका देवी जगद्वशकरा[9] शिवाम् ।
एव ध्यात्वा तु मन्त्रज्ञः प्रजपेच्छुद्धि(द्ध)[10] मानसः ।।१६।।
वक्ष्येऽह चोपसहारकर्म लोकोपकारकम्[11] ।
जम्बीरफलमादाय मन्त्रयेच्छतमादरात् ।।१७।।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय निद्रान्ते च कुमारक ।
एव चार्कदिन कृत्वा जिह्वास्तम्भादिकृत्रिमम् ।।१७।।
सद्यो नर्मा(र्म)त्वमाप्नोति तमः सूर्योदये यथा ।
रवौ श्वेतवचा[12] ग्राह्य मन्त्रयेच्छतमादरात् ।।१८।।
प्रात.काले भक्षयित्वा त्रिसहस्र मनुं जपेत् ।
वाच[13] मुख पद चैव 'जिह्वा बुद्धीन्द्रियाणि च'[14] ।२०।।
स्तम्भित मन्त्रयोगेन तत्सर्वं शान्तिमाप्नुयात् ।
ताम्रपात्रे समादाय नदीजलमकल्मषम्[15] ।।२१।।
शतवार मन्त्रयित्वा प्राशयेच्छान्तिमाप्नुयात्[16] ।
गोमूत्र चैव सगृह्य मन्त्रयेच्छतमादरात् ।।२२।।

---

१. रा. पश्चात् । २ रा. समुदाहृतः । ३. रा. नाम्नी । ४. रा. स्तम्भनास्त्रकर्मभेदिनी । ५ रा. कलाधारधरां ।
६. रा. स्तम्भनास्त्रैकसहारि वंदेह भद्रकालिकाम् ।।१४।।
स्तम्भनास्त्रोपसंहारि ज्ञानमुद्रासमन्वितम्(ताम्) ।
७. रा. बगलास्त्रोपसहारि विश्वतो । ८. रा. देवतामुखी । ९. रा. जाड्यवश्यकरी । १०. रा. ०रिसिद्धि । ११. रा. लोकोपकारकम् । १२. रा. श्वेतवसा । १३. रा वाचा । १४. रा. जिह्वाबद्धपादिकान्यपि । १५. रा. श्लोकार्द्धमिद नास्ति । १६. रा. तु षण्मास ।

एवं कृत्वा जपेन्मन्त्रं[1] उन्माद[2] शान्तिमाप्नुयात् ।
मन्त्रयेदारनालं च प्रातः प्रातः पिबेन्नरः ॥२३॥

मण्डलज्वररोगं च नाशमाप्नोति निश्चितम् ।
'अष्टोत्तरं मन्त्रयित्वा धारोलंब'[3] पिबेन्नरः ॥२४॥

गर्भस्तम्भनदोषं च मण्डलाच्छान्तिमाप्नुयात्[4] ।
भस्म च मन्त्रयेत्[5] प्रातः त्रिसप्त त्रिशतेन[6] वा ॥२५॥

तक्रेण[7] सहितं पीत्वा त्रिसहस्रं दिने दिने ।
बगलामन्त्रयोगेन एवत्प्राणसमुद्भवः[8] ॥२६॥

नाशयेदाशु तत्सर्वं तुलराशिमिवानलः ।
यक्षधूप[9] समानीता[10] मन्त्रयेच्छतमादरात् ॥२७॥

धूपयेत्तेन सर्वाङ्गं दशराश कुमारक ।
यक्षधूपोद्भव[11] चैव प्रयोग चैव[12] कृत्रिमम् ॥२८॥

तत्क्षणान्नाशमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
रवौ ब्राह्मी समादाय छायाशुष्क समाचरेत्[13] ॥२९॥

मन्त्रयेत् त्रिसहस्रं तु भक्षयेत् प्रातरेव च ।
एतद्विद्या जपेन्नित्य त्रिसहस्र कुमारक ॥३०॥

बगलास्त्रकृत[14] यद्यत् प्रयोग दुर्लभम् भुवि ।
तत्सर्वं नाशमाप्नोति मास मण्डलमात्रतः ॥३१॥

ब्राह्मीरस समादाय मन्त्रयेच्छतधा पुनः ।
शर्करासहित पीत्वा सहस्र जपमाचरेत् ॥३२॥

नानाकृत्रिमदोष च बगलामन्त्रतः[15] कृतम् ।
भमङ्गल्यो [द्] भव नाथ[16] भूतले यदि[17] दुर्लभम् ॥३३॥

---

१. रा. तु पण्मासं । २. रा. उन्मादः । ३. [illegible] अष्टोत्तरशत मन्त्र धारोष्ण च । ४. रा. मण्डलान्नाशमा० । ५. रा. मन्त्रयन् । ६. रा. सप्तमेव । ७. रा. मन्त्रेण । ८. रा. यद्यद्गुणसमुद्भवम् । ९. रा वृक्षधूपं । १०. रा. समानीय । ११. रा. वृक्षधूपोद्भव । १२. रा. नाथ । १३. रा. समाहरेत् । १४. रा. बगलाविकृत । १५. रा. गर्भे वा मन्त्रित । १६ रा. बाध । १७. रा. यत्तु ।

मण्डलान्नाशमाप्नोति तम सूर्योदये यथा ।
एतद्विद्या साम्प्रदाय[1] गुरूक्तान्[2] लब्धमन्त्रवान् ॥३४॥
लक्षमेक जपेन्मन्त्री[3] प्रयोग नाशमाप्नुयात् ।
अशक्तश्च स्वय पुत्र 'कुर्वते ब्राह्मणामपि'[4] ॥३५॥
द्विगुणा जपमाप्नोति तमः सूर्योदये यथा ।
एतद्विद्या सम्प्रदाय वद्वये ब्राह्मणानपि ॥३६॥[5]
द्विगुण जपमानेन सर्वशान्तिमवाप्नुयात् ।
एतद्विद्या विना पुत्र कर्तो च बगलामुखि(खी) ॥३७॥
प्रयोगशान्तिन[6] भवे[न्] मन्त्रयन्त्रोपधादिभि ।
सप्तकोटिमहामन्त्रप्रयोगेषु च पुत्रक ॥३८॥
एतद्विद्यापुरश्चर्या नाशयेदाशु[7] निश्चयम्[8] ॥
नम श्रीकालिकादेव्यै कालरा यै नमो नम ॥३९॥[9]
उपसहाररूपिण्यै देव्यै नित्य नमो नम[10] ॥४०॥

इति श्रीवडविद्यागमे साख्यायनतन्त्रे 'प्रयोगसहार नाम'[11] द्वात्रिंशत्पटल ॥

॥ अथ त्रयस्त्रिंशत्पटल ॥

पीनोत्तुङ्गजटाकलापविलसद्बालेन्दुसच्छेखराम्,[12]
बिभ्राणा शितशाम्तकुम्भमुकुटा[13](ट)नेत्रत्रयालङ्कृताम ।
शब्दब्रह्ममयी त्रिलोकजननीं शक्ति परा शाम्भवीम,
देवीश्रीबगला सुरासुरवरैरभ्यर्चिता भावयेत्[14] ॥१॥

क्रोधभैरव उवाच—

नम शिवाय साम्बाय ब्रह्मणेऽनन्तमूर्तये ।
वद मे चोपसहार यन्त्र लोकोपकारकम् ॥२॥

---

१. रा समादाय । २ रा गुरूक्तो । ३ रा ०मन्त्र । ४ रा प्रापयेदब्राह्मणानपि । ५ रा पद्यमिद नास्ति । ६ घ०शान्ति न । ७ घ नाशयेद्दण । ८ घ निश्चय । ९ रा पद्यार्द्धमिदं नास्ति । १० रा पद्यार्द्धमिद नास्ति । ११ रा नास्त्ययमशः । १२ रा ०दृबालेन्दु० । १३ रा सित० । १४ [illegible] श्रीबगला ब्रह्मास्त्रवीसुरनरैरभ्यर्चितामाश्रये ।

ईश्वर उवाच—

कपिलानवनीतं च कदलीपत्रमध्यतः[1] ।
लिप्त्वा[2] मंत्रं[3] लिखेत्तत्र 'कृत्वा पूजां'[4] च साधकः ॥३॥
Aषट्कोणं चाष्टकोणं च वृत्तं भूपुरमेव च ।
षट्कोणकर्णिकायां च(ष)षट् बीजानि मनोर्लि[खे]त् ॥४॥
शिष्टाक्षराणि कोणेषु ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनीमनुः ।
अष्टपत्रे लिखेन्मंत्रं तार्क्ष्यमालामनुस्तथा ॥५॥A
कोऽयंस्तार्क्ष्यमनुश्चेति वक्ष्येऽहं मन्त्रनायकम् ।
B आद्यवर्णं समुच्चार्य्य तार्क्ष्यबीजं ततः परम् ॥६॥
ॐ नमो पदमुच्चार्य्य पश्चाद् भगवते पदम् ।
तार्क्ष्यबीजं पक्षिराजायोक्त्वा तार्क्ष्यं ततः परम् ॥७॥
सर्वशब्दं ततो (थो) च्चार्य अभिचारपदं वदेत् ।
ध्वंसकाय पदं क्षोभों हुं फट् स्वाहा-समन्वितम् ॥८॥ B
तार्क्ष्यस्य मालामन्त्रश्च द्वात्रिंशद्वर्णसंयुतम् ।
अष्टपत्रे वेदवेदवर्णान् पूर्वादितो लिखेत् ॥९॥[5]

---

१. रा. कदलीपत्रके तथा । २-३. ध. लिप्य मंत्र । ४. रा. वस्त्रमध्ये ।

A-A चिह्नान्तर्गतांशस्थाने रा० पुस्तके निम्नांश एवोपलभ्यते—

षट्कोणमध्ये विलिखेद्ब्रह्मास्त्रस्तम्भिनीमनुः ।
अष्टपत्रे लिखेन्मन्त्रं तार्क्ष्यमालामनुस्तथा ॥

B-B चिह्नान्तर्गतांशस्थाने रा० पुस्तके निम्नाङ्कितः पाठभेदो दृश्यते—

प्रथमवर्णं समुच्चार्यं चतुर्थस्वरपूर्वकम् ॥४॥
बिन्दुना भूषितं पुनः तार्क्ष्यं एकाक्षरी तथा ॥
ॐकारबीजमुच्चार्यं तार्क्ष्यबीजं ततः परम ॥
ॐ नमो पदमुच्चार्यं ततो भगवते पदम् ।
पक्षिराजा उच्चार्यं अभिचारपदं वदेत् ॥
ध्वंसकाय पदं चोक्त्वा हुं फट् स्वाहासमन्वितम् ॥६॥

मंत्र:—ॐ क्षीं नमो भगवते पक्षिराजाय अभिचारादिसकलकृत्रिमध्वंसकाय हुं फट् स्वाहा ॥

५. श्लोकस्यास्य रा० पुस्तके निम्नोऽयं पाठभेदः—

मालामन्त्र तार्क्ष्यविद्या षड्विंशद्वर्णसंयुता ॥
अष्टपत्रे लिखेत्तत्र प्रादक्षिण्यक्रमेण तु ॥७॥

प्राणप्रतिष्ठा यन्त्रस्य[१] ग्राद्यवृत्ते लिखेत् सुत ।
तदुपरि लिखेद् वर्णान्[२] पञ्चाशल्लिपिसयुतान्[३] ॥१०॥
पाशाङ्कुशं च विलिखेद् भूपुरेषु यथाक्रमम् ।
ग्रष्टकोणे लिखेद् वर्णान्[४] वज्रान्ते वर्म फट् तथा ॥११॥
एवं लिखित्वा यन्त्रं च पूजयेन्मानसेन तु ।
एव कृत्वा तु तत्सर्वं नवनीत कुमारक ॥१२॥[५]
भक्षयेद् बदरीमात्र साय प्रातस्तु बुद्धिमान् ।
देवतावेशमतुल मन्त्रयन्त्रादिकृत्रिमैः[६] ॥१३॥
शल्यदारुमय 'तत्र प्रयोगं बगलाश्च यत्'[७] ।
नाशयेन्मण्डलादेव शि [व] स्य वचन यथा ॥१४॥
एतद्यन्त्र हृदि ध्यायेद् दुःखकाले सुबुद्धिमान् ।
दशरात्राद् व्यपोहतु(ति) दारुणैरपि[८] कृत्रिमैः[९] ॥१५॥
रौप्ये वा स्वर्णपट्टे वा लिखेद् यन्त्रमिम बुधः[१०] ।
पूजयेद् रक्तपुष्पेण[११] षोडशैरुपचारकैः ॥१६॥
कण्ठे वा बाहुमूले वा शिखाया वा कुमारक ।
बधयित्वा वाभिचार नाशमाप्नोति निश्चतम्[१२] ॥१७॥
नागवल्लीदलेनैव[१३] एतद्यन्त्र कुमारक ।
चूर्णेन विलिखेत् सम्यक् पूर्वं ताम्बूलचर्वणम् ॥१८॥
एव कुर्यात् प्रातरेव तद्वत् साय समाचरेत् ।
मासत्रय[१४] चरेदेव कृत्रिम हरते नृणाम् ॥१९॥[१५]
कुर्यात् कृत्रिमरोगेण पीडिताय कुमारक ।
तत्कार्यगौरव चैव लाघव चावलोकयेत ॥२०॥[१६]
पक्ष वाथ त्रिसप्ताह[१७] मास वा मण्डल तथा ।
यथा व्याधित्रियुक्त[१८] च तावत्काल कुमारक ॥२१॥

---

१. रा. मन्त्र तु । २. रा. ०वर्ण । ३ रा. ०द्वर्णंश्चयुतम् । ४. रा. वज्र । ५. श्लोकोय रा. पुस्तके नास्ति । ६. रा. कत्रिम० । ७. '—' रा. यत्र च बगलापोत-मात्रतः । ८. रा. दारुणानपि । ९. रा. कृत्रिमान् । १०. रा. बुधैः । ११. रा. रक्तपुष्पैस्तु । १२. रा. निश्चयात् । १३. रा. ०चैव । १४. रा. मासमात्रं । १५. रा. पुस्तकेऽतः परं विशेषोऽय श्लोको दृश्यते—

स्तम्भनास्त्रोपसहार मन्त्रेण च कुमारक ।
मार्जनं बिल्वपत्रेण मारोहादवरोहकम् ॥१७॥

१६ रा.० लोकयन् । १७. रा. त्रिसप्ताय । १८. रा. व्याधिविमुक्त ।

अनेन(नया)विद्यया पुत्र मार्जनं मुनिसम्मतम्[1] ।
अथवा मन्त्रितं तोयं[2] सद्यः कृत्रिमनाशनम् ॥२२॥

भूपुरं वृत्तयुग्मं च तन्मध्ये च कुमारक ।
पञ्चकोणं लिखेत् सम्यक् तन्मध्ये चन्द्रमण्डलम् ॥२३॥

इन्द्रमध्ये[3] लिखेद् विद्यां कृत्रिमघ्नीं[4] च कालिकाम् ।
मनुरेवं लिखेत् सम्यक् स्पष्टवर्णेन[5] संयुतम् ॥२४॥

पञ्चकोणे[6] लिखेन्मन्त्रं[7] पञ्च ब्रह्मास्यमेव च ।
आद्यपत्रे लिखेन्मन्त्रं[8] प्राणस्थापनकं तथा ॥२५॥

द्वितीये विलिखेत् सम्यक् पञ्चाशद्वर्णमादरात् । \
पाशाङ्कुशाविं लिखेद् भूपुरेषु चयथाक्रमम् ॥२६॥

एतद्यन्त्रं लिखेद् भूर्ये कसूर्यो(स्तूर्या) कोङ्कभेदने ।
यन्त्रे[9] प्राणान्[10] प्रतिष्ठाप्य पञ्च ब्रह्ममनुं जपेत् ॥२७॥

त्रिसहस्रं सहस्रं वा त्रिशतं शतमेव च ।
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद् वित्तशाठ्यं न कारयेत् ॥२८॥

तद्यन्त्रधारणादेव कृत्रिमादिरनेकधः[11] ।
तत्क्षणान्नाशमाप्नोति जीवेद्[12] वर्षशतं तथा ॥२९॥

एतद्यन्त्रं[13] हृदि ध्यात्वा मानसेनैव पूजयेत् ।
त्रिसप्तदिनमात्रेण नानाकृत्रिमनाशनम् ॥३०॥

ताम्रपात्रे जलं ग्राह्य श्रीसूक्तेनैव मन्त्रयेत् ।
शतं वार्द्धशतं वाथ त्रिसप्तमथ पुत्रक ॥३१॥

तुलसीमञ्जरीभिश्च मार्जयेद् रोगपीडितः[14] ।
आरोहादवरोहेण ऋचान्ते मार्जनं तथा ॥३२॥

त्रिकालमेककालं वा मार्जयेद् ध्यानपूर्वकम् ।
त्रिमोघं[15] च यद्रोगं नाशमाप्नोति निश्चितम् ॥३३॥

श्रीसूक्तेनैव जिह्वायां मार्जयेत् तुलसीदलैः ।
त्रिसप्त[16] प्रातरुत्थाय जिह्वास्त[भ]नशान्तिकृत् ॥३४॥

---

१. रा. मुनिसत्तम् । २. रा तोयं- । ३. रा चन्द्रमध्ये । ४. रा. कृत्रिमघ्ने । ५. रा. स्पष्टवर्णेण । ६. रा. पञ्चवर्णेण । ७-८. रा. ०मन्त्रैः । ९. रा यंत्रेण । १०. प्राणं । ११. ०रनेकधः । १२. प. जपेद् । १३. रा. एवं यत्रं । १४ रा. रोग-पीडिते । १६. कृत्रिमोघ (प) । १७. रा. त्रिसहस्रं ।

गोक्षीर प्रातरुत्थाय श्रीसूक्तनैव मन्त्रयत् ।
दशवार[1] ध्यानपूर्वं तत्क्षीर प्राशयन्नर.[1] ॥३५॥
कौटिल्यस्थापन चैव माजयन्मूलविद्यया ।
पुत्तल्यादिप्रयोग च नाशमाप्नोति निश्चितम् ॥३६॥
ताम्रपात्र जल शुद्ध मन्त्रयदकसख्यया ।
तज्जलप्राशनादेव बुद्धिभ्र शो[2] विनश्यति ॥३७॥
उष्णोदक ताम्रपात्र त्रिसप्तमभिमन्त्रयत ।
नानामूल च हृद्रोग नाशमाप्नोति पुत्रक ॥३८॥

इति श्रीषड्विद्यागमे[3] स्तम्भनास्त्रोपसहार[4] नाम त्रयस्त्रिंशत्पटल ।

॥ अथ चतुस्त्रिंश पटल ॥

विश्वेश्वरी विश्ववन्द्या विश्वानन्द स्वरूपिणी ।
पीतवस्त्रादिसन्तुष्टा[5] पीतद्रुमनिवासिनी ॥१॥[6]

क्रौञ्चभेदन उवाच

विश्वाराध्य भवानीश विश्वोत्पत्तिविधायक[7] ।
ब्रूहि मे कृपया तात सकलागमकोविद[8] ॥२॥

ईश्वर उवाच—

समस्तकर्मणा[9] ध्वसे सर्वोपद्रवनाशने ।
जातिस्तम्भे मन स्तम्भे क्रूरकर्मनिवारणे[10] ॥३॥
भ्रष्टवेतालशमने सवभरवनाशने[11] ।
मातृणा शान्तिजनक स्तम्भन जलरक्षसाम् ॥४॥
'देवदानवदैत्यारीन्(रि)शमने भ्रमनाशने'[12] ।
समस्तोपद्रवध्वसे पूतनादिविनाशने[13] ॥५॥

---

१ रा पूववत्पीर प्राशयन्नर तत्पर । २ रा बुद्धिभ्रा तो । ३ रा पुस्तके 'सारुयायनत न्त्र' इत्यधिक पाठ । ४ रा उपसहारप्रयोग । ५ रा पीतवस्त्राय० ।
६ ख पुस्तके—

ईश्वरी विश्ववद्या च विश्वान तरूपिणी ।
पीतवस्तुदय तुष्टा पीत हृदयनिवासिनीम ॥

७ ख ०गुणाकर । रा ०कुमारक । ८ ख रा पद्यार्धमिद नास्ति । ९ ख समस्ते० ।
१० ख परकृत्यानिवारणे । ११ रा सवभयविनाशिनी । १२ ख देवदानवदत्यादिशमनोऽद्र विनाशने । १३ ख पूतनादिविदारणे ।

कपटादिविनाशार्थे[1] प्राप्ते प्राणस्य सङ्कटे ।
विशन्मनुविनाशार्थे[2] षट्त्रिंशद्रोगनाशने[3] ॥६॥

सूचिप्रयोगविध्वंसे महाशस्त्रास्त्रपातने ।
गतिस्तम्भे[4] मतिस्तम्भे[5] सूर्य्याग्निस्तम्भनेषु[6] च ॥७॥

नानारोगविनाशार्थं नानाक्लेशनिवारणे ।
रणे राजकुले शान्तौ[7] प्रयोगनाशनेऽपि च ॥८॥

परप्रयोगविध्वंसे परकृत्यानिवारणे ।
कृत्यावेशस्तम्भनोऽथ[8] प्रयोग षण्मुखाचर[9] ॥९॥

अनेन योगवर्य्येण सर्वदोषनिवारणम् ।
शृणु षण्मुख तद्योग सर्वयोगोत्तमोत्तमम् ॥१०॥

'पीताभरणभूषो च पीतवस्त्रद्वयान्वित.'[10] ।
पीतयज्ञोपवीतस्तु महापीतास(स)ने[11] स्थित.[12] ॥११॥

'ज्वालामुख्यभिध बाण त्रिशतं प्रजपेत् सुत'[13] ।
'हरिद्राक्षमणि पीत'[14] सर्वकार्यं जपादिकम् ॥१२॥

वडवानलनामानं बाणमादौ जपेच्छतम् ।
उल्कामुख्यभिध[15] बाण द्विशतं प्रजपेत् सुत ॥१३॥

ज्वालामुख्यभिधं बाण त्रिशत प्रजपेत् नर.[16] ।
जातवेदमुखीबाण 'वेदसख्याशत'[17] सुत ॥१४॥

बृहद्भानुमुखीबाणं जपेत् पञ्चशत सुत ।
'घ एकादि'[18] महाविद्या कुल्लुकादिसमन्विताम्[19] ॥१५॥

नेत्रलक्ष जपेन्मन्त्र क्रूरकर्मादिनाशने[20] ।
हरिद्रायां[21] चरेद्धो(द्दो)म काम्य गौरवमिच्छति ॥१६॥

---

१ ख क्रूरग्रहविनाशाये । २. ख. विद्यनष्टि विनाशार्थं । ३ ख. षट्त्रिंशद्बाण० ।
४. ख. मणिस्तम्भे । ५. ख. रतिस्तम्भे । ६. ख ०स्तम्भनेऽपि । ७. ध. शत्रौ ।
८ ख. कृत्याविष० । ९. ध. षण्मुखाचरः । रा. षण्मुखाचरेत् ।
१०. '—' ग पीताभरणभूष तथा पीतवस्त्रद्वयान्वितः ।
११. ख. महापीतासुनि । १२. ध. सुत । १३. '—' प्रथमयो ध. रा. पुस्तकयो नास्ति ।
१४. ख. हरिद्राक्षेण मणिना । १५. ध. उल्कामुखाभिधं । १६. ख. सुत । रा. ततः ।
१७. ख. शदन्ते सस्मरेत् । १८. ख एकाक्षरी । १९. ध. कुमारिकादि० । २०. ध.
क्रूरकर्मण० । रा. क्रूकर्मादि० । २१. ध. हरिद्रया ।

उल्कामुखीद्वितीयास्त्रं 'स्तम्भनं भुवनत्रये'[1] ।
ज्वालामुखीतृतीयास्त्रं स्तम्भनं ऋषिदैवतैः ॥२८॥

जातवेदमुखीबाणो ब्रह्मविष्ण्वादिरक्षणे[2] ।
'सर्वकर्मस्तम्भने च'[3] चतुर्थं प्रजपेत् सुत ॥२९॥

बृहद्भानुमुखीबाणं[4] पञ्चमं[5] परिकीर्तितम्[6] ।
षट्पञ्चकोटिचामुण्डा कालीकोटिशतं सुत ॥३०॥

सपादकोटित्रिपुरा पञ्चाशत्कोटिभैरवाः ।
नारसिंहा यातुधानाः पूतनाः कोटिचेटकाः[7] ॥३१॥

समस्तस्तम्भनं पुत्र पञ्चमेन प्रजायते ।
हस्ते सम्पाद्य[8] 'पञ्चास्त्रं शासनास्त्र'[9] स्मरेन्मुखे ॥३२॥

स कल्पमुखभागी[10] स्यान्नात्र कार्या विचारणा ।
त्रैलोक्यविजयाख्यं च स्मरेदस्त्रेन्द्रमुत्तमम् ॥३३॥

यथोक्तकुण्डेषु हुनेद् वेदिकायां विशेषतः ।
चुल्ल्यां शकटया प्रेताग्नौ पञ्चस्थाने हुनेदपि ॥३४॥

चत्वरे सर्वकार्यार्थं होमयेदुक्तमार्गतः ।
'सकूर्चं स्रुक्स्रुवौ चैव तद्वद्वि(वि)ध्म इति क्रमात्'[11] ॥३५॥

प्रणि(णी)ता प्रोक्षणीपात्रमाज्यस्थाली च षण्मुख[12] ।
सकलं[13] पूर्णपात्रं च 'ब्रह्माचार्येण योगतः'[14] ॥३६॥

क्रमात् सर्वं तु सम्पाद्य होमं कुर्यात् प्रयत्नतः[15] ।
'क्रूरकर्माणि नश्यन्ति'[16] तालकेन हुनेत् सुत ॥३७॥

पीतपुष्पैश्च जुहुयात् क्रूरकर्मविनाशने[17] ।
'क्रूरतर्पणयोगेन क्रूरविघ्ननिवारणम्'[18] ॥३८॥

---

१. '—' ख. त्रिलेकीस्तम्भने जपेत् । २. ब्रह्मविद्या॰ । ३. ख. सर्वकर्मणसंस्तम्भे । रा. सर्वकर्माणि स्तम्भे च । ४. ख. ॰बाणः । ५ ख. पञ्चमः । ६. ख. परिकीर्तितः । ७. ख. षट्पूतनाः । रा. ॰पूतनाः । ८. ख. सधार्य । ९. '—' ख. चापास्त्रं प्रसितास्त्रं । १०. ख. फलसुखभागी । रा. संकल्पमुखिभोगः । ११. '—' ख. —समित्कुशा स्रुक्स्रुचौ च स्विध्मावर्हीति च क्रमात् । १२. ख. सम्मुखाः । १३. ख. कलशं । १४. ख. ब्रह्मचर्यो तु जापकः । रा. ब्रह्माचार्येण योगकः । १५. ख. प्रयोगवित् । १६. ख. रा. क्रूरकर्माणिनिर्दिशे । १७. ख. क्रूरकृत्यिनमनाशने । १८. '—' ख. —पीठेन तर्पयेदेव क्रूरग्रहनिवारणम् । रा. क्रूरे तर्पणया देवी॰ ।

इति सक्षेपतः पूर्वं[1] किमन्य[2] श्रोतुमिच्छसि ।

इति श्रीषड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे चतुस्त्रिंशत्पटल[3] ॥३४॥

॥ अथ पञ्चत्रिंशः पटल ॥

योषिदाकर्षणासक्ता[4] फुल्लचम्पकसन्निभाम्[5] ।
दुष्टस्तम्भनमासक्ता[6] बगला स्तम्भिनी भजे ॥१॥

क्रोञ्चभेदन उवाच—

नमस्ते सर्वसर्वेश कर्पूरद्युतिसन्निभ[7] ।
योगिन्[8] सर्वादिसर्वज्ञ बीजभेद वद प्रभो ॥२॥

ईश्वर उवाच—

अथात सम्प्रवक्ष्यामि बगलामन्त्रनिर्णयम् ।
षट्त्रिंशदक्षरो विद्या त्रिपुरे चैव तिष्ठति[9] ॥३॥

सांख्यायनमते देव्या[10] नारायण[11] ऋषि स्मृत[12] ।
'गायत्रीछन्द उद्दिष्ट देवता बगलाह्वया'[13] ॥४॥

सांख्यायनमते देवि वामाचारविधिर्मत ।
ब्रह्मयामलसम्मत्या ब्रह्मा चास्य ऋषि स्मृत ॥५॥[14]

'गायत्री छन्द आदिष्ट देवता सैव कीर्तिता'[15] ।
'जयद्रथारव्ययामले तु'[16] ऋषिर्नारद एव हि ॥६॥

छन्दादिक पूर्ववत् स्यादिति सक्षपतो मतम् ।
हारिद्रसंहितायां तु ऋषिर्नारायणो मत ॥७॥

अनुष्टुपछन्द आख्यात[17] देवता बगलामुखी ।
सांख्यायनमत देवी(वि)कलौ जागर्ति[18] केवलम् ॥८॥

मृत्युञ्जयजप कृत्वा ततो विद्या जपेत् सुत[19] ।
मृत्युञ्जय विना देवी 'बगला नहि सिद्ध्यति'[20] ॥९॥

---

१ ख. प्रोक्त । २ ख किमपच्च् । ३ ख द्वात्रिंशति(एकत्रिंशत)पटल ॥३२। ४ घ ०सक्तपां । ५ ख लमच्चम्पक० । ६ ख ०स्तम्भनासक्ता । ७ रा कर्पूर-धवल ०। ८ ख योगी । ९ '—' ख त्रिधा च परिविष्ठिता । रा ०चैव निष्ठि । १० ख देवी । ११ ख नारदोऽस्य । १२ ख मत । १३ '—' ख —अनुष्टुपछन्द आख्यात देवता बगलाह्वया । रा ०देवता सैव कीर्तिता । १४ पद्यमिद घ पुस्तके नास्ति । १५ घ पुस्तके नास्ति पद्यार्द्धमिदम् । १६ ख जयद्रथाख्ययामले । रा जयद्रथयामने तु । १७ ख त्रिष्टुप छन्द समाख्यात । १८ ख जागर्ति । १९ [illegible] सुधी । २० '—' घ पुस्तके नास्ति ।

'ऋषिच्छन्दस्त्रितयक मतभेदात् प्रदर्शितम् ।
बीजसज्ञा प्रवक्ष्यामि'[1] साख्यायनमुखोद्भवाम्[2] ॥१०॥
शिवबीज[3] वह्नियुक्तं रतिबिन्दुसमन्वितम् ।
'वह्निशिवान्तराले तु'[4] भूबीज योजयेत्(पेत्) सुत[5] ॥११॥
स्थिरमाया इति[6] प्रोक्ता विद्या स्वेकाक्षरी शुभा ।
अनया विद्यया देवि किन्न सिद्धयति भूतले ॥१२॥
पीतवासामते पुत्र[7] स्थिरमाया शृणु प्रिये ।
'स्थिरमायासमायुक्तं स्थिर बीजमितीरितम्'[8] ॥१३॥
तदुद्धार शृणु प्राज्ञ[9] गगनार्द्ध[10] समुद्धरेत् ।
स्थिरबीज समुद्धृत्य रतिबिन्दुसमन्वितम्[11] ॥१४॥
स्थिरमाया 'द्वितीया तु इन्द्रस्त चन्द्रभूषितम्'[12] ।
'इयं सप्ता'[13] महाविद्या कीलिता[14] स्तम्भिता शिवे[15] ॥१५॥
रेफयोगान्महेशानि[16] नित्यसप्ता[17] फलदायिनी ।
रेफयुक्ता जपेद्विद्या 'फलसिद्धिर्न संशयः'[18] ॥१६॥
रेफहीना जपेद्विद्या कोटिजाप्य[19] न सिद्धयति ।
'तस्माद्रेफेण सयुक्त'[20] स्थिरदा[21] परमेश्वरि ॥१७॥
सजपेच्च 'च ततः पुत्र'[22] तस्य सिद्धिर्भविष्यति ।
लघुषोढा महाषोढा पञ्जर न्यासमेव हि ॥१८॥
बगलामातृकान्यास[23] 'कुल्लुका च विचिन्त्य वै'[24] ।
हेत्वादिकामराजान्त[25] न्यासमृत्युञ्जय[26] जपेत् ॥१९॥

१. '–' चिन्हद्वयोऽशो घ. पुस्तके नास्ति । २. घ. रा समुन्द्भवात् । ३. ख. जीव॰ बीजं । ४. ख. वह्नि्नर्गवा॰ । रा. वह्नि्नः शि॰ । ५. ख शिवे । ६. ख. त्रिप । ७. ख. देवि । ८. ख.—स्थिररूपा तु या माया स्थिरमाया तु सा मता ।
रा. स्थिररूपा तु मामाया स्थिरमाया समायतु ।

९. ख. प्राज्ञे । १०. ख. रा. गगनार्णं । ११. ख. ॰विभूषितम् । १२. ख. स्थिर्य देवि बिन्द्वर्द्ध चन्द्रभूषिता । १३. घ. रा. इम सप्ता । १४. घ. रा. कलिता । १५ घ. रा. सुत । १६. घ. रा. महा सेव । १७. घ. रा. नित्यभाक् । १८. ख. रेफहीना न सजपेत् । १९. ख. ॰जाप्ये । २०. ख. तस्माद्रेफ तु संयोज्य । रा. तस्माद्रेफस्तु सयुक्तं । २१. ख. स्थिराद्यः । २२. ख. प्रयतो देवि । रा. स जपे सततः पुत्र । २३. ख. ॰मातृकां न्यस्य । २४. घ. रा. सद्गुदाचरितं सदा । २५. घ. सत्वादि॰ । २६. घ. रा. न्यस्य ।

ततो वै प्रजपेद्विद्या सदा जाग्रत्स्वरूपिणीम् ।
पीतवासामते देवि[2] पञ्चप्रेतगता[1] स्मरेत् ॥२०॥
चतुर्भुजा वा द्विभुजा पीतार्णवनिवासिनीम् ।
सुधार्णवसमासीना मणिमण्डपमध्यगाम् ॥२१॥
साख्यायनमते देवि[4] संस्मरेद् यत्नतः शिवे[5] ।
सुन्दर्याः पश्चिमाम्नाये बगला परितिष्ठति[6] ॥२२॥
श्रीकाल्यामु(उ)त्तराम्नाये बगला पूज्यता सुत ।

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे पञ्चत्रिंशत्पटलः[7] ॥३५॥

॥ अथ षट् त्रिंशः पटलः ॥

योगिनीकोटिसहिता पीताहारोपचञ्चलाम्[8] ।
बगला परमा वन्दे[9] परब्रह्मस्वरूपिणीम् ॥१॥

क्रौंचभेदन उवाच–

चिदानन्दघनावास[10] 'वरमन्य च मा वद'[11] ।
सर्व्वातीत परेशान 'सर्वभूतहिते रत'[12] ॥२॥

ईश्वर उवाच–

अथ 'स्कन्द प्रवक्ष्यामि'[13] 'सर्वकर्माणि नाशनम्'[14] ।
किं केन 'तामस प्राप्त'[15] किं केन शान्तिकारणम्[16] ॥३॥
कारण तत्र केन स्यात् तत्सर्वं कथ्यते शृणु ।
प्रादौ मन्त्र जपेत् पुत्र त्रिसहस्रमतन्द्रितः ॥४॥
ततः कवचमालम्ब्य[17] पुनर्म्मन्त्र जपेत् तथा[18] ।
षट्त्रिंशद्वारमावर्त्य[19] पुरश्चरणमुच्यते ॥५॥
सर्वकर्माणि निर्नाशे[20] योगोऽयं परिकीर्त्तितः ।
अनुलोमविलोमेन द्वितीयो योग ईरितः ॥६॥

---

१. घ. रा. पुत्र । २. घ. मता । ३. घ. रा. चरेत् । ४. घ. रा. पुत्र । ५ घ. रा. सुत । ६. ख. परिनिष्ठिता । रा. परितिष्ठताम् । ७. ख. त्रिंशि (द्वात्रिंश) पटलः । ८. घ. पीताहारोपि० । रा. पीतहारो० । ९. घ. रा. देवीं । १०. ख. ०घनस्वामिन् । ११. ख. सारमन्य-महेश्वर । रा. सारमन्य च मा वद । १२. ख. सर्व-भूतहिताध्वर । १३. ख षण्मुख मक्ष्यामि । १४. ख. सर्वकर्मणिनाशनम् । १५ ख. रा. नाम सम्प्राप्तं । १६. ख. ०कारकम् । १७. घ. रा. ०मारभ्य । १८. घ. रा. तत । १९. घ. रा. षड्विंशद्वारमावृत्या । २०. ख. सर्वकर्मणनिर्नाशे ।

त्रिशतं च शतं चापि अष्टोत्तरसहस्रकम् ।
अष्टोत्तरशतं वापि कवचं पूर्ववद् भजेत्[1] ॥७॥
क्षुद्रकर्मणि[2] निर्दिष्टे योगोऽयं परिकीर्त्तितः ।
अनुलोमविलोमेन योगो वसुविधः स्मृतः ॥८॥
षट्त्रिंशद्वारमावर्त्य 'भवेदेवं विधिः सुत'[3] ।
कवचं प्रपठेदादौ मध्ये स्तोत्रं 'तु उच्चरेत्'[4] ॥९॥
शतावर्त्तनमात्रेण 'क्रूरकर्मणनाशनम्'[5] ।
अनुलोमविलोमेन द्वितीयो योग ईरितः ॥१०॥
गायत्रीं कवचं पुत्र मन्त्रं स्तोत्रं पुनश्च सा ।
षड्विंशद्वारमावर्त्य षट्त्रिंशावर्त्तनं चरेत् ॥११॥
अनेन क्रमयोगेन सर्वकर्मविनाशनम्[6] ।
तारायां कालिकायां च 'छिन्नायामेवमेव तु'[7] ॥१२॥
अनुक्रमेण[8] सर्वत्र कुर्यादावर्त्तनं बुधः ।
मन्त्रमात्रकार्यमेतत्[9] सर्वदोषनिवारणम्[10] ॥१३॥
कवचं प्रथमं[11] बाणः कवचं च द्वितीयकम्[12] ।
कवचं च तृतीयं[13] स्यात् कवचं च चतुर्थकम्[14] ॥१४॥
कवचं पञ्चमं[15] बाणः कवचं प्रपठेत् कृती[16] ।
अनुलोमविलोमेन द्वितीयो योग ईरितः ॥१५॥
रणस्तम्भे 'सर्वकर्मानिनाशने मृत्युस्तम्भने'[17] ।
'प्राणरक्षादिम्परक्षादेभ्यो रक्षणकर्मणि'[18] ॥१६॥
योगोऽयं कथितः पुत्र बगलामन्त्र ईरितः[19] ।
शताक्षरीं जपेदादौ कवचं हृदयं तथा ॥१७॥

---

१. घ. रा. भवेत् । २. घ. रा. क्षुद्रकर्माणि । ३. ख. भवेदेकं पुनस्तथा । रा. भवेदेकं०
४. ख. पुनश्च तत् । ५. घ. रा. क्रूरकर्माणि० । ६. ख. सर्वकर्मणनाशनम् । ७. घ. रा. छिन्नयामेव एव च । ८. ख. मनुक्रमेण । ९. ख. मन्त्रयाद्य० । १०. ख. ०विनाशनम् । ११. ख. पञ्चमो । १२. ख. द्वितीयकः । १३. ख. तृतीय. । १४. ख. चतुर्थकः । १५. ख. रा. पञ्चमो । १६. घ. रा. व्रतः । १७. ख. मन.स्तम्भे सर्वकर्मणनाशने । १८. '—'ख.—

मृत्युस्तम्भे प्राणरक्षादिम्परक्षणकर्मणि ।

१९. ख. कात्यादौ मन्त्रयोगतः । रा. कल्पादौ० ।

कवच वेदवर्णं च कवच चन्द्रवर्णकम्[१] ।
अनेन क्रमयोगेन योग कमणनाशन[२] ॥१८॥
'एकाक्षरी जपदादौ'[३] कवच प्रपठेद् यत.[४] ।
वेदाक्षरी जपदादौ कवच प्रपठेत्तथा ॥१६॥
वेदाक्षरी[५] ततो जाप्य कवच तदनन्तरम् ।
षट्त्रिंशदक्षरी जाप्य कवच तदनन्तरम् ॥२०॥
वेदाक्षरीमनुपुर[६] कवच प्रथम तथा ।
'कवच च द्वितीय स्यात् कवच च तृतीयक'[७] ॥२१॥
'कवच च चतुर्थं स्यात् कवच पञ्चमस्तथा'[८] ।
कवच हृदय[९] वाच कवच शतवर्णकम् ॥२२॥
'कवचात् कीलन योग त्रलोक्यरक्षणाकर'[१०] ।
अनेन क्रमयोगेन त्रैलोक्यस्तम्भन भवेत्[११] ॥२३॥
इन्द्रादिपदसस्तम्भ समुद्रस्तम्भनेऽपि[१२] च ।
'महाविद्यास्तम्भन च सत्य ब्रह्मास्त्रस्तम्भनम'[१३] ।२४॥
'महापाशुपतादीना स्तम्भने'[१४] मृत्युपातने ।
महाब्रह्मास्त्रयोगो हि[१५] गोपनीय प्रयत्नत ॥२५॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे ईश्वरषण्मुखसंवादे महाविद्याप्रयोग कथन नाम[१६] षट्त्रिंशत्पटल[१७] ।

॥ अथ पञ्चत्रिंश पटलः ॥

पीतवर्णसमासीना पीतगन्धानुलेपनाम् ।
पीतोपहाररसिका भजे पीताम्बरा पराम् ॥१॥

श्रीक्रौञ्चभेदन उवाच–

स्वामिन् सिद्धगु(ग)णाध्यक्ष समस्तगणपारग ।
रहस्य सूचित पूर्वं किन्न मह्य प्रदर्शितम् ॥२॥

---

१ ख षट्वर्णक । २ घ रा योपकर्माणि नाशन । ३ घ जपेदादौ कवच ४ ख तथा । ५ घ वदाक्षरी । ६ ख पञ्चचत्वारिंशन्मनु । रा चत्वारिंश मनुपुर ■ ८ '—' चिह्नन्तर्गतद्वयी घ. पुस्तके नास्ति । ६ ख हृदया । १० ख —
कवचात्कीलयन मनु प्राणत्रैलोक्यरक्षण ।
११ ख क्षणात १२ घ ०स्तम्भनेति । १३ प्रथमशो नास्ति ख पुस्तके । १४ ख महापाशुपतास्त्रादिपातने । १५ घ रा पि । १६ घ रा नास्त्ययमशः । १७ ख चतुस्त्रिंशत (त्रित्रिंशत) पटल

ईश्वर उवाच–

तत्त्व वद महादेव यदि पुत्रोऽस्मि ते वद ।
रहस्यातिरहस्यं च कथ्यते शृणु पुत्रक ॥३॥

अमात्यानां च दुष्टानां दूषकानां दुरात्मनाम् ।
क्षुद्रग्रहादिजातीनां सैन्यानामपि पुत्रक ॥४॥

क्रूरग्रहविनाशाय सर्वशान्त्यर्थमेव च ।
पराभिचारशान्त्यर्थं रक्षार्थं च विशेषतः ॥५॥

अपमृत्युविनाशार्थं रोगशान्त्यर्थमेव च ।
परसेनाविनाशाय स्वसेनारक्षणाय च ॥६॥

आत्मार्थं च परार्थं च विजयार्थं च षण्मुख ।
वेतालाश्च विनाशार्थं भैरवादिप्रशान्तये ॥७॥

समस्तविषनिर्नाशे मुष्टिकुक्षिविषावपि ।
शस्त्रास्त्रबाणसंधाने महारास्त्रादिनाशने ॥८॥

शस्त्रास्त्रस्तम्भने पुत्र तद्वच्छवि(व)विषावपि ।
स्तब्धीकरणनिर्नाशे(र्णाशे) मृतकोत्थापनेऽपि च ॥९॥

देशोपद्रवनाशार्थे राष्ट्रभङ्गे समागते ।
कोटिकृत्याविनाशार्थे स्वेष्टरक्षणकर्मणि ॥१०॥

हृतनष्टप्रणष्टादिस्थावराग्नेयजातिषु ।
पत्रपुष्पफलं शाखाजटात्वक्क्षीरनीरके ॥११॥

महाविषे तैजसे तु विण्मूत्रविषरक्तके ।
उद्भ्रान्तधूलिनाशार्थे घटकृत्याविनाशने ॥१२॥

जलकृत्याविनाशार्थे स्थलकृत्याविनाशने ।
वृक्षकृत्यानाशनार्थे गन्धकृत्याविषावपी(पि) ॥१३॥

महेन्द्रपदनिर्नाशे विरुण्डानाशनेऽपि च
भेरूडनाशनार्थे च रिक्षावेशभैरवे ॥१४॥

सस्यस्तने दारुनाशे मन्त्रमण्डलरोगहृत् ।
सप्तब्रह्मास्त्रयोगोऽयं सर्वथा चलति ध्रुवम् ॥१५॥

अमोघमृत्युनाशाय समश्चयंकमाय(प)दि ।
त प्रयोगमहायोग शृणु सावहितो भव ॥१६॥

कुण्डे वा स्थण्डिले वेद्या चत्वरे पितृकानने ।
चुल्या सकटया(शकटया)वा देवि होतव्य सर्वकर्मणि ॥१७॥
शुभऋक्षादियोगे तु प्रयोगमादरे(त्)सुत ।
स्वस्तिवाचनमासाद्य द्विजाना वरण चरेत् ॥१८॥
वगलास्त्र मध्यमागे करे निष्ठुरवधनम् ।
पञ्चास्त्र दक्ष(क्षि)णाशे च मूलास्त्रं होमकर्मणि ॥१९॥
त्रैलोक्यविजयास्त्रं च स्मरेदस्त्रेन्द्रमुत्तमम् ।
निष्ठुराश्चालयेदेव दीपकास्त्रं प्रयोजयेत्॥२०॥
पूर्वभागे तु पञ्चास्त्रमुत्तरे मुण्डमुत्तमम् ।
महोग्रविजय दक्षे विजयास्त्र प्रयोजितम् ॥२१॥
हेलावर्का चदला तूर्या तथा पञ्चाङ्गुली प्रिया ।
पश्चिमे कीर्त्तिता विद्या वधद्वयपुरस्सरम् ॥२२॥
आदौ गणपति पूज्य द्वारपूजादिसयुतम् ।
विप्राणा वरण कृत्वा वगलादीपमाचरेत् ॥२३॥
मण्डले वगलादीपो(प)कवचे मूलदीपकः ।
पीताशा(शी) पीतवस्त्राढ्या(ढ्यः) पीतयज्ञोपवीतवान् ॥२४॥
पीतासनो पीतभक्षो पीतशय्यापरायण. ।
हरिद्राक्षेण मणिना सर्वं कार्यं जपादिकम् ॥२५॥
हरिद्राभि. सुरक्ताभि. रोचनाघृतमिश्रितैः ।
बिल्वप्रसूनैर्जुहुयात् सर्वोत्पातनिवारणम् ॥२६॥
अथवा पीतपुष्पैस्तु हरिद्रामधुयोजनम् ।
हरिद्रया दरिद्राणि नश्यन्त्येव न सशयः ॥२७॥
अनेन योगच(व)र्येण सर्वोत्पातनिवारणम् ।
पीताभरणभूषाढ्य (ढ्य) पीतशालानिवासकृत् ॥२८॥
शतमष्टोत्तरशत त्रिशत च सहस्रकम् ।
त्रिसहस्र पञ्च तथा दिग्विशत्यादिरेव च ॥२९॥
पञ्चविंशच्च पञ्चाशत् सहस्र लक्षमानकम् ।
लक्षोपरि महेशानि न होमोऽस्ति महीतले ॥३०॥
सुन्दर्यां कालिकाया च वैदिके कोटिमात्रकम् ।
होमस्य तु दशाशेन तर्पण मार्ज्जन तथा ॥३१॥

सुरया तर्प्पणं पुन तेन मार्ज्जनमाचरेत् ।
अभिषेको विप्रभोज्य साङ्गयोग प्रसिद्धयति ॥३२॥

नात. परतरो योगो विद्यते भुवि मण्डले ।
सर्वकर्म्मविनाशार्थं विपनाशार्थमद्भुतम् ॥३३॥

गोपनीय गोपनीय गोपनीय प्रयत्नत. ।
रहस्यातिरहस्य च रहस्यातिरहस्यकम् ॥३४॥

इति सक्षेपत· प्रोक्त तोषयेद्दक्षिणादिना ।
प्रयोगस्योपसहार (र) कर्त्तव्य सिद्धिमिच्छता ॥३५॥

इति षड्विद्यागमे सांख्यायनतन्त्रे
पञ्चत्रिंशत् (चतुस्त्रिंशत्) पटल ॥३५॥

परिशिष्टम्–(क)

ऋष्यादि-न्यासध्यानादियुताः

॥ सांख्यायनतन्त्रगता मन्त्राः ॥

१. एकाक्षरीबगलामन्त्रः—ह्लीं ।

ॐ अस्य श्रीबगलामुख्येकाक्षरीमहामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दः श्रीबगलामुखी देवता लं बीजं, ह्लीं शक्तिः, ईं[1] कीलकं श्रीबगलामुखीदेवताम्बा-प्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—ब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीबगलामुखीदेवतायै नमो हृदि लं बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, रें कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ ह्लां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्लूं मध्यमाभ्यां वषट् ॐ ह्लैं अनामिकाभ्यां हुम्, ॐ ह्लौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ ह्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

हृदयादिन्यासः—ॐ ह्लां हृदयाय नमः, ॐ ह्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्लूं शिखायै वषट्, ॐ ह्लैं कवचाय हुम्, ॐ ह्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्लः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—वादी मूकति रङ्कति क्षितिपतिर्वैश्वानरः शीतति,
क्रोधी शाम्यति दुर्जनः सुजनति क्षिप्रानुगः खञ्जति ।
गर्वी खर्वति सर्वविच्च जडति त्वद्यन्त्रिणा यन्त्रितः,
श्रीनित्ये बगलामुखि प्रतिदिनं कल्याणि तुभ्यं नमः ॥

[पञ्चमः पटल — पृष्ठ—१२, १३]

२. श्रीबगलाषट्त्रिंशदक्षरीविद्यामन्त्रः—ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा ।

ॐ अस्य श्रीबगलामुखीषट्त्रिंशदक्षरीविद्यामहामन्त्रस्य श्रीनारदऋषिः, बृहतीछन्दः,[2] श्रीबगलामुखीदेवता, लं बीजं, हूं शक्तिः, ईं[3] कीलकं, श्रीबगला-मुखीदेवताप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

---

१. 'रं' इत्यन्यत्र । २. 'अनुष्टुप्छन्दः' इत्यन्यत्र दृश्यते । ३. 'रें' इत्यन्यत्र ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीनारदर्षये नमः शिरसि, बृहतीछन्दसे नमो मुखे, श्रीबगलामुखीदेवतायै नमो हृदये, लँ बीजाय नमो गुह्ये, ह्रँ शक्त्यै नमः पादयोः, ईँ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ ह्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्लीं बगलामुखि तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्लीं सर्वदुष्टना मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्लीं वाच मुख पद स्तम्भय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्लीं जिह्वा कीलय कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ ह्लीं बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

हृदयादिन्यासः—ॐ ह्लीं हृदयाय नम, ॐ ह्लीं बगलामुखि शिरसे स्वाहा, ॐ ह्लीं सर्वदुष्टना शिखायै वषट्, ॐ ह्लीं वाच मुख पदं स्तम्भय कवचाय हुं, ॐ ह्लीं जिह्वा कीलय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्लीं बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—चतुर्भुजा त्रिनयना कमलासनसंस्थिताम् ।
त्रिशूल पानपात्र च गदा जिह्वा च बिभ्रतीम् ॥
बिम्बोष्ठी कम्बुकण्ठी च समपीनपयोधराम् ।
पीताम्बरा मदाघूर्णा ध्यायेद् ब्रह्मास्त्रदेवताम् ॥

[सप्तम. पटलः—पृष्ठ-१६-१७]

३. श्रीबगलामुखीगायत्रीमन्त्रः—ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे स्तम्भनबाणाय धीमहि तन्नो बगला प्रचोदयात् ।

ॐ अस्य श्रीबगलागायत्रीमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्रीछन्द, ब्रह्मास्त्रबगलादेवता, ॐ बीज, ह्रीं[१] शक्तिः, विद्महे कीलक, श्रीबगलामुखीदेवताप्रसादसिद्धये जपे विनियोग ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीब्रह्मास्त्रबगलामुखीदेवतायै नमो हृदये, ॐ बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, विद्महे कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, स्तम्भनबाणाय धीमहि तर्जनीभ्यां स्वाहा, तन्नो बगला प्रचोदयात् मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे अनामिकाभ्यां हुम्, स्तम्भनबाणाय धीमहि कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, तन्नो बगला प्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

---

१. 'ह्लीं' इत्यपि पाठः ।

हृदयादिन्यासः—ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे हृदयाय नमः, स्तम्भनबाणाय धीमहि शिरसे स्वाहा, तन्नो बगला प्रचोदयात् शिखायै वषट्, ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे कवचाय हुम्, स्तम्भनबाणाय धीमहि नेत्रत्रयाय वौषट्, तन्नो बगला प्रचोदयात् अस्त्राय फट् ।

ध्यान पूर्ववत् ।

[द्वादश. पटल.—पृष्ठ-२६]

४ पञ्चपञ्चाशदक्षरो बगलामुखीपञ्चास्त्रमन्त्र.—ॐ ह्लीं हूं ग्लौं बगलामुखि ह्लां ह्लीं ह्लूं सर्वदुष्टाना ह्लैं ह्लौं ह्लः वाच मुख पद स्तम्भय स्तम्भय ह्लः ह्लौं ह्लैं जिह्वा कीलय ह्लूं ह्लीं ह्लां बुद्धि विनाशय ग्लौं हूं ह्लीं ॐ स्वाहा ।[१]

ॐ अस्य श्रीबगलामुखीपञ्चास्त्रमहामन्त्रस्य वसिष्ठऋषिः, पङ्क्तिश्छन्द, रणस्तम्भनकारिणी बगलामुखी देवता, लं बीज, ह्लीं शक्ति, र कीलक श्रीबगलामुखीदेवताम्बाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोग ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीनारदऋषये नम. शिरसि श्रीबगलामुखीदेवतायै नमो हृदये, लं बीजाय नमो गुह्ये, हृं शक्तये नम पादयो इं कीलकाय नम सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ ह्लीं अङ्गुष्ठाभ्या नम, ॐ ह्लीं बगलामुखि तर्जनीभ्या स्वाहा, ॐ ह्लीं सर्वदुष्टाना मध्यमाभ्या वषट्, ॐ ह्लीं वाच मुख पद स्तम्भय अनामिकाभ्या हुम्, ॐ ह्लीं जिह्वा कीलय कनिष्ठिकाभ्या वौषट्, ॐ ह्लीं बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्या फट् । एव हृदयादिन्यास ।

ध्यानम्—पीताम्बरधरा देवी द्विसहस्रभुजान्विताम् ।
सान्द्रजिह्वा गदा चास्त्र धारयन्ती शिवा भजेत् ॥

[पञ्चदश पटल—पृष्ठ ३८-३९]

५. अष्टपञ्चाशदक्षर उल्कामुख्यस्त्रमन्त्र —ॐ ह्लीं ग्लौं बगलामुखि ॐ ह्लीं ग्लौं सर्वदुष्टाना ॐ ह्लीं ग्लौं वाच मुख पद ॐ ह्लीं ग्लौं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं ग्लौं जिह्वा कीलय ॐ ह्लीं ग्लौं बुद्धि विनाशय ॐ ह्लीं ग्लौं ह्लीं ॐ स्वाहा ।[२]

---

१. "ॐ ह्लीं हूं ग्लौं बगलामुखि ह्लां ह्लीं ह्लूं सर्वदुष्टानां ह्लैं ह्लौं ह्लः वाच मुख पदं स्तम्भय ह्लः ह्लौं ह्लैं जिह्वां कीलय ह्लूं ह्लीं ह्लां बुद्धि विनाशय ह्लां ह्लीं ह्लूं ग्लौं हूं ह्लीं ॐ स्वाहा" इत्येवंविधो मन्त्रोऽप्यन्यत्र दृश्यते ।

२ "ॐ ह्लीं ग्लौं बगलामुखि सर्वदुष्टानां ॐ ह्लीं ग्लौं वाच मुख पद ॐ ह्लीं ग्लौं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं ग्लौं जिह्वां कीलय कीलय ॐ ह्लीं ग्लौं बुद्धि नाशय नाशय ॐ ह्लीं ग्लौं स्वाहा" इत्यपि मन्त्रभेदो दृश्यतेऽन्यत्र ।

ॐ अस्य श्रीउल्कामुख्यक्षमन्त्रस्य श्रीअग्निवराह[1] ऋषि॰, ककुप्[2] छन्दः, श्रीउल्कामुखी देवता, ह्लीं बीज, स्वाहा शक्तिः, ग्लौं कीलक, जगत्स्तम्भनकारिणी श्रीउल्कामुखीदेवताम्वाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीवराहर्षये नमः शिरसि, अनुष्टुप्छन्दसे नमो मुखे, श्रीउल्कामुखीदेवतायै नमो हृदि, ह्लीं बीजाय नमो गुह्ये, स्वाहाशक्तये नमः पादयोः, ग्लौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

मूलमन्त्रवत्करषडङ्गन्यासाः ।

ध्यानम्—विलयानलसकाशा वीरा वेदसमन्विताम् ।

विराण्मयी महादेवी स्तम्भनार्थं भजाम्यहम् ॥

[पञ्चदश. पटलः—पृष्ठ-३१]

६. षट्त्रिंवर्णात्मक. श्रीजातवेदमुख्यक्षमन्त्र.—ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ बगला-मुखि सर्वदुष्टाना ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ वाच मुख पद स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ जिह्वा कीलय ॐ ह्लीं हसौ ह्लीं ॐ बुद्धि नाशय नाशय ॐ ह्लीं हसौं ॐ स्वाहा ।[3]

ॐ अस्य श्रीजातवेदमुख्यक्षमन्त्रस्य श्रीकालाग्निरुद्र ऋषिः, पङ्क्तिश्छन्दः, श्रीजातवेदमुखी देवता, ॐ बीज, ह्लीं[4] शक्ति, हूं कीलकम्, मम श्रीजातवेद-मुखीदेवताम्वाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीकालाग्निरुद्रर्षये नमः शिरसि, पङ्क्तिच्छन्दसे नमो मुखे, श्रीजातवेदमुखीदेवतायै नमो हृदये, ॐ बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, हूं कीलकाय नम. सर्वाङ्गे ।

मूलमन्त्रवत्करषडङ्गन्यासाः—

ध्यानम्—जातवेदमुखी देवी देवता प्राणरूपिणीम् ।

भजेऽहं स्तम्भनार्थं च स्तभिनी[5] विश्वरूपिणीम् ॥

[षोडशः पटलः-पृष्ठ-४०-४१]

---

१. 'यज्ञवाराह' इत्यपि पाठ' ।   २. 'अनुष्टुप्' इत्यन्यत्र ।

३. मन्त्रोऽयं सूत्रानुसारेण तु द्वात्रिंवर्णात्मको जायते किन्त्वन्यत्र निम्नोद्धृतरीत्या दृश्यते षट्त्रिंवर्णः—

"ॐ ह्लीं हौं ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां ॐ ह्लीं हौं ह्लीं ॐ वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं हौं ह्लीं ॐ जिह्वां कीलय ॐ ह्लीं हौं ॐ बुद्धिं नाशय नाशय ॐ ह्लीं हौं ह्लीं ॐ स्वाहा ॥

४. 'ह्रीं' इत्यपि पाठः ।   ५. चिन्मयीमिति पाठः क्वचित् ।

७ विंशोत्तरशतवर्णात्मको ज्वालामुख्यस्त्रमन्त्र —ॐ ह्लीं रां री रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर बगलामुखि[1] ॐ ह्लीं रां रीं रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर सर्वदुष्टानां ॐ ह्लीं रां रीं रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं रां रीं रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर जिह्वां कीलय कीलय ॐ ह्लीं रां रीं रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर बुद्धिं विनाशय विनाशय ॐ ह्लीं रां रीं रूं रें रौं प्रस्फुर प्रस्फुर स्वाहा ।[2]

ॐ अस्य श्रीज्वालामुख्यस्त्रमन्त्रस्य श्रीअग्नि ऋषिर्गायत्री छन्दः, श्रीज्वालामुखी देवता, ॐ बीजं ह्लीं शक्तिः, हूं कीलकं श्रीज्वालामुखीदेवताम्बाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः —श्री अग्निऋषये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीज्वालामुखीदेवतायै नमो हृदि, ॐ बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, हूं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

मूलमन्त्रवत्करषडङ्गन्यासः

ध्यानम्—ज्वलत्पद्मासनायुक्तां कालानलसमप्रभाम् ।

चिन्मयीं स्तम्भिनीं देवीं भजेऽहं विधिपूर्वकम् ।।

[षोडश पटल —पृष्ठ-४१]

८. षडुत्तरशताधिकवर्णात्मकः श्रीबृहद्भानुमुख्यस्त्रमन्त्र —ॐ ह्लां ह्लीं ह्लं ह्लें ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ॐ बगलामुखि ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ॐ सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ॐ जिह्वां कीलय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ॐ बुद्धिं नाशय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लां ह्लः ॐ ह्लीं ॐ स्वाहा ।[3]

१ एतत्पदस्थाने 'ज्वालामुखि' पदं सूत्रे वर्त्तते किन्त्वस्य पदस्यात्र मन्त्रे एकाक्षरन्यूनता स्यात् तस्तत्पदमेवात्र सङ्गृहीतम् ।

२ सूत्रे तु 'वह्निबीजं च पञ्चकं' इति दर्शनात्स्वत्र 'रं रं रं रं रं' इति बीजानि ग्राह्याणि किन्तूपर्युक्तबीजानामन्यत्रापि व्यवहारात्स्त्रापि स्वीकृतानीत्यूह्यानि ।

३ अन्यत्रैव मन्त्रश्चतुरुत्तरशतवर्णात्मकोऽपि दृश्यते यथा—ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः बगलामुखि ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः जिह्वां कीलय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः बुद्धिं नाशय ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः स्वाहा ।।

ॐ अस्य श्रीवृहद्भानुमुख्यस्त्रमन्त्रस्य श्रीसविता ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीवृहद्भानुमुखी देवता, ह्लीं बीज, ह्लीं शक्तिः, ॐ कीलक, श्रीवृहद्भानुमुखी-देवताम्बाप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्री सवितृऋषये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीवृहद्भानुमुखीदेवतायै नमो हृदये, ह्लीं बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नम. पादयोः, ॐ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

मूलमन्त्रवत्करषडङ्गन्यासाः ।

ध्यानम्—कालानलनिभा देवी ज्वलत्पुञ्जशिरोरुहाम् ।
कोटिबाहुसमायुक्ता वैरिजिह्वासमन्विताम् ॥१॥
स्तम्भनास्त्रमयी देवी दृढपीनपयोधराम् ।
मदिरामदसंयुक्ता वृहद्भानुमुखी भजे ॥२॥

[सप्तदशः पटलः- पृष्ठ-४२–४३]

६ श्रीबगलामुखीशताक्षरीमहामन्त्रः—ह्लीं ऐं ह्लीं क्लीं श्रीं ग्लौं ह्लीं बगलामुखि स्फुर स्फुर सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय प्रस्फुर प्रस्फुर विकटाङ्गि घोररूपि जिह्वां कीलय महाभ्रमकरि बुद्धिं नाशय विराणमयि[1] सर्वप्रज्ञामयि प्रज्ञां नाशय उन्मादीकुरु[2] कुरु मनोपहारिणि ह्लीं ग्लौं श्रीं क्लीं ह्लीं ऐं ह्लीं स्वाहा ॥

ॐ अस्य श्रीबगलामुखीशताक्षरीमहामन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्रीछन्दः, जगत्स्तम्भनकारिणी श्रीबगलामुखी देवता, ह्लीं बीज, ह्लीं शक्तिः, ऐं कीलकं, जगत्स्तम्भनकारिणी श्रीबगलामुखीदेवताम्बाप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

मूलमन्त्रवत्करषडङ्गन्यासाः ।

ध्यानम्—पीताम्बरधरा सौम्या पीतभूषणभूषिताम् ।
स्वर्णसिंहासनस्था च मूले कल्पतरोरधः ॥१॥
वैरिजिह्वाभेदनार्थं छुरिकां[3] बिभ्रती शिवाम् ।
पानपात्रं गदां पाशं धारयन्तीं भजाम्यहम् ॥२॥

(सप्तदशः पटलः— पृष्ठ-४४–४५)

१. 'विरामय' इत्यपि पाठः . 'उन्मादं कुरु' इति पाठोऽपि दृश्यते । ३. 'छुरिकां' इति पाठोऽन्यत्र ।

१० अष्टाविंशत्युत्तरैकशताक्षर श्रीवगलामुखीपरविद्याभेदनमन्त्रः[1]—ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं 'ग्लौं ऐं क्लीं हुँ क्षीं'[2] वगलामुखि परप्रयोग ग्रस ग्रस ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं ग्लौं ऐं क्लीं हुं क्षीं ब्रह्मास्त्ररूपिणि परविद्याग्रसिनि भक्षय भक्षय ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं ग्लौं ऐं क्लीं हुं क्षीं परप्रज्ञापहारिणि प्रज्ञा भ्रंशय भ्रंशय ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं ग्लौं ए क्लीं हुं क्षीं स्तम्भनास्त्ररूपिणि बुद्धि नाशय नाशय पञ्चेन्द्रियज्ञान भक्ष भक्ष ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं ग्लौं ए क्लीं हुँ क्षीं वगलामुखि हुँ फट् स्वाहा ।[2]

ॐ अस्य श्रीपरविद्याभेदिनीवगलामन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषि गायत्रीछन्द, परविद्याभक्षिणी श्रीवगलामुखी देवता ग्लौं बीज, ह्लीं शक्ति ग्लौं कीलक, श्रीजगलादेवीप्रसादसिद्धिद्वारा परविद्याभेदनार्थे जपे विनियोग ।

ऋष्यादिन्यास—श्रीवह्मर्षय नम शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, परविद्याभक्षिणीश्रीवगलामुखीदेवतायै नमा हृदये, ग्ला बीजाय नमा गुह्ये, ह्लीं शक्तये नम पादयो, क्रों कीलकाय नम सर्वाङ्गे ।

करन्यास—ग्लौं ह्लीं क्रो अङ्गुष्ठाभ्या नम, वद वद तर्जनीभ्या स्वाहा, वाग्वादिनि मध्यमाभ्या वषट्, स्वाहा अनामिकाभ्या हुं, ए क्लीं सौं कनिष्ठिकाभ्या वौषट्, ह्लीं करतलकरपृष्ठाभ्या फट् ।

हृदयादिन्यास—ग्लौं ह्लीं क्रो हृदयाय नम, वद वद शिरसे स्वाहा, वाग्वादिनि शिखायै वषट् स्वाहा कवचाय हुँ, ए क्लीं सौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्लीं अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—सर्वमन्त्रमयी देवी सर्वाकर्षणकारिणीम् ।
सर्वविद्याभक्षिणी च भजेऽहं विधिपूर्वकम् ॥
[विद्या पटल—पृष्ठ-५४-५५]

११. त्रिचत्वारिंशदक्षरो वगलास्त्रमन्त्र—ॐ[3] ह्लीं हु ग्लौं ह्लीं वगलामुखि मम शत्रून् ग्रस ग्रस खाहि खाहि भक्ष भक्ष शोणित पिव पिव वगलामुखि ह्लीं ग्लौं हु 'फट् स्वाहा'[4] ।

---

१ सूत्रानुसारेण वर्णोद्धारादय मत्र सप्तविंशोत्तरशताक्षर एव भवति । २ 'ग्लौं हुँ ए क्लीं क्षीं' तथा 'ग्लु ए क्लीं हुँ क्ष्मौं' इति पाठभेदो क्वचिद्दृश्येते ।

३ यद्यपि पुस्तके तु '…' शब्दस्योपयोगो नावलोक्यते, न चैतादृश एव स्वाहा शब्दव्यवहारस्तथापि शब्दद्वयी प्रत्यावश्यकी सम्भाव्या वर्णसंख्यानुपूरकत्वात् ४ एक पुस्तके 'फट्-स्वाहा' स्थाने 'ह्लीं स्वाहा' इति दृश्यते । अत्र पुस्तकेऽप्ययम् मन्त्रो द्विचत्वारिंशदक्षरात्मक एव गृहीतः किन्त्वसौ ऋष्यादिन्यासे 'फट् कीलक' मिति ग्रहणवशाधुरेव प्रतीयते ।

ॐ अस्य श्रीबगलास्त्रमन्त्रस्य श्रीदुर्वासा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, अस्त्ररूपिणीश्रीबगलामुखी देवता, ग्लौं बीज, ह्लीं शक्ति, फट् कीलक श्रीअस्त्ररूपिणीबगलाम्बाप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोग ।

ऋष्यादिन्यास.—श्रीदुर्वाससे ऋषये नम शिरसि, अनुष्टुप्छन्दसे नमो मुखे, अस्त्ररूपिण्यै श्रीबगलादेवतायै नमो हृदये, ग्लौं बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नम पादयो, फट् कीलकाय नम सर्वाङ्गे ।

करन्यास —ॐ ह्लीं अङ्गुष्ठाभ्या नम, बगलामुखि तर्जनीभ्या स्वाहा, सर्वदुष्टाना मध्यमाभ्या वषट्, वाच मुख पद स्तम्भय अनामिकाभ्या हुँ, जिह्वा कीलय कनिष्ठिकाभ्या वौषट, बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्या फट् ।

हृदयादिन्यास —ॐ ह्लीं हृदयाय नम, बगलामुखि शिरसे स्वाहा, सर्वदुष्टाना शिखायै वषट् वाच मुख पद स्तम्भय कवचाय हुँ, जिह्वा कीलय नेत्रत्रयाय वौषट, बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—चतुर्भुजा त्रिनयना पीनोन्नतपयोधराम् ।
जिह्वा सङ्ग पानपात्र 'गदा धारयन्ती पराम्'[1] ॥१॥
पीताम्बरधरा देवी पीतपुष्पैरलङ्कृताम् ।
बिम्बोष्ठी चारुवदना मदाघूर्णितलोचनाम् ॥२॥
सर्वविद्याकर्षिणी च सर्वप्रज्ञापहारिणीम् ।
भजेऽहं चास्त्रबगला सर्वाकर्षणकर्मसु ॥३॥

[द्वाविंश पटल —५४-५६-६०]

१२. श्रीबगलाचतुरक्षरीमन्त्र —ॐ आं ह्लीं क्रो । ॐ अस्य श्रीबगलाचतुरक्षरीमन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषि, गायत्रीछन्द, श्रीबगला देवता, ह्लीं बीज, आं शक्ति, क्रो कीलक श्रीबगलामुखीदेवताम्बाप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोग ।

ऋष्यादिन्यास —श्रीब्रह्मर्षये नम शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीबगलादेवतायै नमो हृदये, ह्लीं बीजाय नमो गुह्ये आं शक्तये नम पादयो, क्रो कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यास —ॐ ह्लां अङ्गुष्ठाभ्या नम, ॐ ह्लीं तर्जनीभ्या स्वाहा, ॐ ह्लूं मध्यमाभ्या वषट्, ॐ ह्लैं अनामिकाभ्या हुँ ॐ ह्लौं कनिष्ठिकाभ्या वौषट, ॐ ह्लः अस्त्राय फट् ।

---

१ '—' गदामद्गर च बिभ्रतीं' तथा च 'गदां धारयन्तीं शिवान्' इति पाठभेदो वर्तते।

हृदयादिन्यासः—ॐ ह्लां हृदयाय नमः, ॐ ह्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्लूं शिखायै वषट्, ॐ ह्लैं कवचाय हुं, ॐ ह्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्लः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—कुटिलालकसंयुक्तां मदाघूर्णितलोचनाम् ।
मदिरामोदवदनां प्रवालसदृशाधराम् ॥१॥
सुवर्णशैलसुप्रख्यकठिनस्तनमण्डलाम्[1] ।
दक्षिणावर्त्तसन्नाभिसूक्ष्ममध्यमसंयुताम् ॥२॥
रम्भोरुपादपद्मां तां पीतवस्त्रसमावृताम् ।

[पञ्चविंशः पटलः—पृष्ठ-६७-६८]

१३. अशीत्यक्षरात्मकः श्रीवगलाहृदयमन्त्रः—ॐ[2] आं ह्लीं क्रों ग्लौं[3] हुं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं वगलामुखि आवेशय आवेशय आं ह्लीं क्रों ब्रह्मास्त्ररूपिणि एहि एहि आं ह्लीं क्रों मम हृदये आवाहय आवाहय सन्निधिं[4] कुरु कुरु आं ह्लीं क्रों मम हृदये चिरं तिष्ठ तिष्ठ आं ह्लीं क्रों हुं फट् स्वाहा ।

अस्य मन्त्रस्य ऋष्यादिन्यास-ध्यानादयो नैवोल्लिखिताः पुस्तके ।

[अष्टाविंशः पटलः—पृष्ठ-७७-७८]

१४. श्रीवगलाष्टाक्षरात्मको मन्त्रः—ॐ आं ह्लीं क्रों हुं फट् स्वाहा ।

ॐ अस्य श्रीवगलाष्टाक्षरात्मकमन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्रीछन्दः, श्रीवगलामुखी देवता, ॐ बीजं, ह्लीं शक्तिः, क्रों कीलकं श्रीवगलादेवताम्वाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, श्रीवगलामुखीदेवतायै नमो हृदि, ॐ बीजाय नमो गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ ह्लां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्लूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्लैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्लौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ ह्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

हृदयादिन्यासः—ॐ ह्लां हृदयाय नमः, ॐ ह्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्लूं शिखायै वषट्, ॐ ह्लैं कवचाय हुं, ॐ ह्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्लः अस्त्राय फट् ।

---

१. सुवर्णशैलविलसत्० इत्यपि क्वचित् । २. यद्यपीदं पुस्तके नैव मुद्रितं किन्त्वनेन विनाऽयं मन्त्र एकोनाशीत्यक्षरात्मकः स्यादत एवात्र एवं कृतम् । ३. 'ग्लौं' इति शक्तियाराहवी-मस्थाने रा० पुस्तके मुद्राराहणीम 'ह्लू' इति वर्त्तते । ४. 'सान्निध्यं'मपीति पाठोऽत्र ।

ध्यानम्—युवती[1] च मदोद्रिक्ता[2] पीताम्बरधरा शिवाम् ।
पीतभूषणभूषाङ्गी समपीनपयोधराम् ॥१॥
मदिरामोदवदना प्रवालसदृशाधराम् ।
'पानपात्रं च शुद्धिं च'[3] बिभ्रती बगला स्मरेत् ॥२॥
[त्रिंशः पटलः-पृष्ठ-८१]

१५. एकोनषष्टिवर्णात्मकः श्रीबगलोपसंहारविद्यामन्त्रः—ग्लौं हुं ऐं ह्रीं[4] श्रीं कालि कालि महाकालि एहि एहि कालरात्रि आवेशय आवेशय महामोहे महामोहे स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर स्तम्भनास्त्रशमनि हुं फट् स्वाहा ।[5]

ॐ अस्य श्रीबगलास्त्रोपसंहारविद्यामन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्रीछन्दः, स्तम्भनास्त्रविभेदिनी श्रीकालिका देवता, क्रीं बीजं, फट् शक्तिः, स्वाहा कीलकं श्रीबगलाप्रसादसिद्धिद्वारा ब्रह्मास्त्रोपसंहारार्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, स्तम्भनास्त्रविभेदिनीश्रीकालिकादेवतायै नमो हृदये, क्रीं बीजाय नमो गुह्ये, फट्शक्तये नमः पादयोः, स्वाहा कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ॐ क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

हृदयादिन्यासः—ॐ क्रां हृदयाय नमः, ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्रूं शिखायै वषट्, ॐ क्रैं कवचाय हुं, ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ क्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—काली करालवदना कलाधरधरा शिवाम् ।
स्तम्भनास्त्रैकसंहारीं ज्ञानमुद्रासमन्विताम् ॥१॥
वीणापुस्तकसंयुक्तां कालरात्रिं नमाम्यहम् ।
बगलास्त्रोपसंहारीदेवतां विश्वतोमुखीम् ॥२॥
भजेऽहं कालिकां देवीं जगद्वशकरां शिवाम् ।
[द्वात्रिंशः पटलः—पृष्ठ—८७-८८]

१. 'यौवना' मित्यन्यत्र । २. 'मदोन्मत्ता' मित्यपि पाठः । ३. 'वैरिजिह्वां पानपात्र' इति पाठोऽपि दृश्यते । ४. 'क्रीं' इत्यन्यत्र । ५. एष मन्त्रस्तु रा० पुस्तकपुतस्तुत्रोद्धार-स्वरूपः । पुस्तकस्यसूत्रात्तु निपञ्चाशद्वर्णात्मकः एष मन्त्रो जायते 'कालरात्रि' पदान्ते 'आवेशय आवेशय' इति पदद्वयविरहात् ।

१६. द्वात्रिंशद्वर्णात्मकस्तार्क्ष्यमालामन्त्रः[1]—ॐ क्षी नमो भगवते क्षी पक्षिराजाय सर्वाभिचारध्वंसकाय क्षीमो फट् स्वाहा ।

[बगलोत्कीलनविधिः]—

प्रणव पूर्वमुच्चार्य कूर्चयुग्म समुच्चरेत् ।
कामत्रय वाग्भव च लज्जापट्क समुच्चरेत् ॥१॥
क्रींकाराष्टकमुच्चार्य बगलाशापमुच्चरेत् ।
उत्कीलनपदद्वन्द्व ग्रग्निजाया समुद्धरेत् ॥२॥
शापोद्धारप्रकारोऽय तन्त्रराजे प्रकीर्त्तितः ।
उत्कीलिता ब्रह्मविद्या मन्त्रेणानेन सिद्ध्यति ॥३॥

स्पष्टार्थः—ॐ हूँ हूँ क्लीं क्लीं क्लीं ऐं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं बगलाशापमुत्कीलय उत्कीलय स्वाहा ॥

परिशिष्टम् (ख)

॥ अथ वज्रपञ्जरकवचस्तोत्रम् ॥

ध्यात्वा मनसा सम्पूज्य मुद्राः प्रदर्श्य पञ्जर न्यसेत्—

शिव उवाच—

पञ्जर तत्प्रवक्ष्यामि देव्या पापप्रणाशनम् ।
य प्रविश्य न बाधन्ते बाणैरपि नरा भुवि ॥१॥

ॐ ऐं ह श्री श्रीमत्पीताम्बरा देवी बगला बुद्धिवर्द्धिनी ।
पातु मामनिश साक्षात् सहस्रार्कयुतद्युतिः ॥२॥

शिखादिपादपर्य्यन्त वज्रपञ्जरधारिणी ।
श्रीब्रह्मास्त्रविद्या या पीताम्बरविभूषिता ॥३॥

बगला मामवत्वत्र मूर्द्धभाग महेश्वरी ।
कामाङ्कुशा कला पातु बगला शास्त्रबोधिनी ॥४॥

---

1. अय मन्त्रः पुस्तके द्वात्रिंशाक्षर एवोद्घोषितः किन्तूद्धाराात्त्रिशाक्षर एव सम्भवति स चोपरि प्रदर्शित एव । रा० पुस्तके चैष एव मन्त्रः षड्विंशाक्षर एव स्वीकृतोऽस्ति यथा—'ॐ क्षीं ॐ नमो भगवते पक्षिराजाय अभिचारध्वसकाय हुँ फट् स्वाहा'

पीताम्बरा सहस्राक्षी ललाटे कामितार्थदा ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रोः [मे]पातु पीताम्बरसुधारिणी ॥५॥
कर्णयोश्च युगपदतिरत्नप्रपूजिता ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पातु बगला नासिकां मे गुणाकरा ॥६॥
पीतपुष्पैः पीतवस्त्रैः पूजिता वेददायिनी ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पातु बगला ब्रह्मविष्ण्वादिमेदिता ॥७॥
पीताम्बरा प्रसन्नास्या नेत्रयोर्युगपद्भ्रुवोः ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पातु बगला बलदा पीतवस्त्रधृक् ॥८॥
अधरोष्ठौ तथा दन्तान् जिह्वां च मुखगा मम ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पातु बगला पीताम्बरसुधारिणी ॥९॥
गले हस्ते तथा बाहौ युगपद्विदा सताम् ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पातु बगला पीतवस्त्रावृता घना ॥१०॥
जङ्घायां च तथा चोरौ गुल्फयोश्चातिवेगिनी ।
अनुक्तमपि यत्स्थानं त्वक्केशनखलोम मे ॥११॥
असृग्मासं तथास्थीनि सन्धयश्चाति मे परा ।

श्रीशिव उवाच—

इत्येतद्वरद गोप्यं कलावपि विशेषत. ॥१२॥
पञ्जरं बगलादेव्या दीर्घदारिद्र्यनाशनम् ।
पञ्जरं य पठेद्भक्त्या स विघ्नैर्नाभिभूयते ॥१३॥
अव्याहतगतिश्चापि ब्रह्मविष्ण्वादिसत्पुरे ।
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले नारयस्त कदाचन ॥१४॥
प्रबाधन्ते नर व्याघ्राः पञ्जरस्थ कदाचन ।
अतो भक्तैः कौलिकैश्च स्वरक्षार्थं सदैव हि ॥१५॥
पठनीय प्रयत्नेन सर्वानर्थविनाशनम् ।
महादारिद्र्यशमन सर्वमाङ्गल्यवर्द्धनम् ॥१६॥
विद्याविनयसत्सौख्य महासिद्धिकर परम् ।
इद ब्रह्मास्त्रविद्यायाः पञ्जर साधु गोपितम् ॥१७॥
पठेत् स्मरेद् ध्यानसस्थः स जीवन्मरण नर. ।
य पञ्जर प्रविश्यैव मन्त्र जपति वै भुवि ॥१८॥

कौलिको वा कौलिको वा व्यासवद् विचरेद् भुवि ।
चन्द्रसूर्यप्रभुर्भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि ॥१९॥

सूत उवाच—
इति वर्णितमशेषं श्रेयसामादिबीजं,
भवशतदुरितघ्नं ध्वस्तमोहान्धकारम् ।
स्मरणमतिशयेन प्रातरेवात्र मर्त्यो,
यदि विशति सदा य पञ्जरं पण्डितः स्यात् ॥२०॥

इति श्रीपरमरहस्यातिरहस्ये श्रीपीताम्बरायाः पञ्जरं सम्पूर्णम् ॥

श्रीप्रसन्नास्तु ॥ श्रीबगलामुखी प्रीयता मिति पौष सुदि १३, संवत् १६२२ लिखित काशया दुर्गाबाई इव पुस्तकम् ॥



परिशिष्टम् (ग)

॥ अथ बगलामुखीत्रैलोक्यविजयं नाम कवचम् ॥

श्रीभैरव उवाच—
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि स्वरहस्यं च कामदम् ।
श्रुत्वा गुप्ततमं गोप्यं कुरु गुप्तं सुरेश्वरि ॥१॥
कवचं बगलामुख्याः सकलेष्टप्रदं कलौ ।
यत्सर्वं च परं गुह्यं गुप्तं च शरजन्मन ॥२॥
त्रैलोक्यविजयं नाम कवचेशं मनोरमम् ।
मन्त्रगर्भं मन्त्ररूपं सर्वसिद्धिविनायकम् ॥३॥
रहस्यं परमं ज्ञयं साक्षादमृतरूपिणम् ।
ब्रह्मविद्यामयं वर्म दुर्लभं प्राणिनां कलौ ॥४॥
पूर्णमेकोनपञ्चाशद्वर्णमन्त्रमयैर्युतम् ।
त्वद्भक्त्या वच्मि देवेशि गोपनीयं स्वयोनिवत् ॥५॥

श्रीदेव्युवाच—
भगवन् करुणासागर विश्वनाथ सुरेश्वर ।
कर्मणा मनसा वाच्यं न वच्म्यग्निमुखोऽपि च ॥६॥

भैरव उवाच—

त्रैलोक्यविजयाख्यस्य कवचस्यास्य पार्वति ।
मन्त्रगर्भस्य मु(सु?) तस्य ऋषिर्देवस्तु भैरव ॥७॥

उष्णिक् छन्द समाख्यात देवी क्ली (च?) वगलामुखी ।
बीज क्लो ग्रो च शक्ति. स्यात् स्वाहा कीलकमुच्यते ॥८॥

विनियोग समाख्यातस्त्रिवर्गफलसाधने ।
देवी ध्यात्वा पठेद्दर्म मन्त्रगर्भं सुरेश्वरि ॥९॥

विना ध्यानेन नो सिद्धि सत्य जानीहि पार्वति ।

चन्द्रोद्भासितमूर्द्धजा रिपुरसा मुण्डाक्षमालाकरा,
बाला पीतस्रगुज्ज्वला मधुमदारक्ता जटाजूटिनीम् ।
शत्रुस्तम्भनकारिणी शशिमुखी पीताम्बरोद्भासिता,
प्रेतस्था वगलामुखी भगवती कारुण्यरूपा भजे ॥१०॥

ॐ क्लीं मम शिरसि पातु देवी ह्लो वगलामुखी ।
ॐ क्लो पातु मे भाले देवी स्तम्भनकारिणी ॥११॥

ॐ ग्रे ईं ह् भ्रुवौ पातु वगला क्लेशहारिणी ।
ॐ ह् क्ष पातु मे नेत्रे नारसिंही शुभङ्करी ॥१२॥

ॐ ह्लो श्री पातु मे जङ्घे अ आ इ भुवनेश्वरी ।
ॐ क्लो स मे श्रुती पातु ईं उ ऊ ऋ मुखेश्वरी ॥१३॥

ॐ ह्ली श्री ह्ली सदाव्यान्मे नासा ऋ लृ सरस्वती ।
ॐ ह्ली ह्लां मे मुख पातु लृ ए ऐ छिन्नमस्तका ॥१४॥

ॐ श्री मे अधरौ पातु ग्रो ग्रौ दक्षिणकालिका ।
ॐ ह्ली हू मे द तान् पातु अ अ मे भद्रकालिका ॥१५॥

ॐ ग्रो श्री रसना पातु क ख ग घ चरात्मिका ।
ॐ ऐ सौ मे हनौ पातु ङ च छ ज झ जानकी ॥१६॥

ॐ श्री ग्री (क्ली) मे गल पातु ञ ञ ट ठ गयश्वरी ।
ॐ ह्ली स्कन्धौ सदाव्या मे ड ढ ण चैव तोतला ॥१७॥

ॐ ह्ली मे भुजौ पातु त थ द वरवर्णिनी ।
ॐ क्ली सौ मे स्तनौ पातु ध न प परमेश्वरी ॥१८॥

ॐ जूं स्रों मे रक्ष वक्षः फ ब भ भगवासिनी ।
ॐ स्रां ह्रां पातु मे कुक्षिं म य र चन्द्रिवल्लभा ॥१६॥
ॐ श्रीं ह्रूं पातु मे पार्श्वौ न व लम्बोदरप्रसूः ।
ॐ स्रौं ह्रूं पातु मे नाभिं श ष षण्मुखपालिनी ॥२०॥
ॐ ऐं सौं पातु मे पृष्ठं स ह हाटकरूपिणी ।
ॐ क्लीं एं पातु मे शिश्नं ळ क्ष ह् तत्त्वरूपिणी ॥२१॥
ॐ क्लीं ह्रूं मे कटिं पातु पञ्चाशद्वर्णमातृका ।
ॐ एं क्लीं पातु मे गुह्यं अ आ क गुह्यकेश्वरी ॥२२॥
ॐ श्रीं ऊरू सदाव्यान्मे इ ईं ख खगगामिनी ।
ॐ जूं सः पातु मे जानू उ ऊ ग गणवल्लभा ॥२३ ।
ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे जङ्घे ऋ ॠ घ च महारिणी ।
ॐ श्रीं सः पातु मे गुल्फौ लृ लॄ ङ च च कालिका ॥२४॥
ॐ एं ह्रीं पातु मे सन्धी ए ऐ छ ज जगत्प्रिया ।
ॐ श्रीं क्लीं पातु मे पादौ ओ औ झ ञ भगादरी ॥२५ ।
ॐ ह्रीं मे सर्ववपुः पातु अं अः ह्रीं त्रिपुरेश्वरी ।
ॐ श्रीं पूर्वे सदाव्या मा अ आ ट ठ शिखामुखी ॥२६॥
ॐ ह्रीं याम्या सदाव्यान्मां इ ड ढ ण च तारिणी ।
ॐ ह्रीं मां पातु वारुण्या ई त थ द च खेश्वरी ॥२७॥
ॐ यं मां पातु कौबेर्यां उ ध न प पिङ्गला ।
ॐ श्रीं पातु चैशान्या ऊ फ ब बैन्दवेश्वरी ॥२८॥
ॐ श्रीं मां पातु चाग्नेय्यां ऋ भ म य च योगिनी ।
ॐ ऐं मां पातु नैर्ऋत्यां ॠ र राजेश्वरी सदा ॥२९॥
ॐ श्रां मां पातु वायव्यां लृ ल लम्बितकेशिनी ।
ॐ प्रभाते च मां पातु लॄ व वागीश्वरी सदा ॥३०॥
ॐ मध्याह्ने च मां पातु ए श शङ्करवल्लभा ।
ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं पातु मां सायं ऐं ष शाबरी सदा ॥३१॥
ह्रीं निशादौ च मां पातु ओ स सागरशायिनी ।
क्लीं निशीथे च मां पातु औ ह हरिहरेश्वरी ॥३२॥

दली ब्राह्मे मा मुहूर्तेऽव्याद ळ त्रिपुरसुन्दरी ।
विस्मारित च यत्स्थान वर्जित कवचेन तु ॥३३॥
ह्लीं तन्मे सकल पातु म क्ष क्लीं बगलामुखी ।
इतीद कवच गुह्य मन्त्राक्षरमय परम् ॥३४॥
त्रैलोक्यविजय नाम सर्ववर्णमय स्मृतम् ।
अप्रकाश्यमदातव्य न श्रोतव्यमवाचकम् ॥३५॥
दुर्जनायाकुलीनाय दीक्षाहीनाय पार्वति ।
न दातव्य न दातव्यमित्याज्ञा परमेश्वरि ॥३६॥
अदीक्षित उपाध्यायविहीन शक्तिभक्तिमान् ।
कवचस्यास्य पठनात् साधको दीक्षितो भवेत् ॥३७॥
कवचेशमिद गोप्य सिद्धविद्यामय परम् ।
ब्रह्मविद्यामयमिद यथाभीष्टफलप्रदम् ॥३८॥
न कस्य कथित चैतत् त्रैलोक्यविजयेश्वरी ।
यस्य स्मरणमात्रेण देवी सद्यो वशीभवेत् ॥३९॥
पठनाद्धारणाच्चास्य कवचेशस्य साधक ।
कलौ विचरते वीरो यथा ह्लीं बगलामुखी ॥४०॥
इम मन्त्र स्मरन्मन्त्री सग्राम प्रविशद् यथा ।
त्रि. पठेत् कवचेशन्तु मुमुक्षु साधकोत्तम ॥४१॥
शत्रून् कालसमानान् तु जित्वा स्वगृहमेष्यति ।
मूर्ध्नि धृत्वा तु कवच मन्त्रगर्भं तु साधक ॥४२॥
ब्रह्माद्यानमरान् सर्वान् सहसा वशमानयेत् ।
धृत्वा गले तु कवच साधकस्य महेश्वरि ॥४३॥
वशमायान्ति सहसा रम्भाद्यप्सरसा गणा ।
उत्पातेषु च घोरेषु भयेषु विविधेषु च ॥४४॥
रोगेषु कवचेश च मन्त्रगर्भं पठेन्नर ।
कर्मणा मनसा वाचा तद्दूय शान्तिमेष्यति ॥४५॥
श्रीदेव्या बगलामुख्याः कवचेश मया स्मृतम् ।
त्रैलोक्यविजय नाम पुत्रपौत्रधनप्रदम् ॥४६॥
मृत्युहर्त्तारमेवतस्याल्लक्ष्मीभोगविवर्द्धनम् ।
वन्ध्या धारयते कुक्षौ पुत्र पश्यति नान्यथा ॥४७॥

मृतवत्सा च विभृयाथ कवच वगले सदा ।
दीर्घायुर्व्याधिहीनस्तु तत्पुत्रस्तु भविष्यति ॥४८॥
इतीद बगलामुख्या. कवचेश सुदुर्लभम् ।
त्रैलोक्यविजय नाम न देय यस्य कस्यचित् ॥४६॥
अकुलीनाय मूढाय भक्तिहीनाय देहिने ।
लोभयुक्ताय देवेशि न दातव्य कदाचन ॥५०॥
शिष्याय भक्तियुक्ताय गुरुभक्तिपराय च ।
लोभदन्तविहीनाय कवचेश प्रदीयताम् ॥५१॥
अभक्तेभ्यो विपुत्रेभ्यो दत्त्वा कुष्ठी भवेन्नरः ।
फल गृह न चाप्नोति पर च नरक व्रजेत् ॥५२॥
दीपमुज्ज्वाल्य मूलेन पठेद्वर्मेदमुत्तमम् ।
प्राप्ते कन्यार्कवारे च राजा तद्गृहमेष्यति ॥५३॥
मण्डलेशो महेशानि सत्य सत्य न सशयः ।
इद तु कवचेश तु मया दिव्य नगात्मने ॥५४॥
पूजनात् पठनाच्चास्य चतुर्वर्गफलप्रदम् ।
गोप्य गुप्ततर देवि गोपनीय स्वयोनिवत् ॥५५॥

इति रुद्रयामले उमामहेश्वरसवादे बगलामुखीत्रैलोक्यविजय नाम कवचं सम्पूर्णं श्रीजगदम्बार्पणमस्तु । मिति माघकृष्ण ५ सवत् १६२२ ईव दुर्वासाः ।

परिशिष्टम् (घ)

॥ अथ श्रीपीताम्बरारत्नावलीस्तोत्रम् ॥

॥ श्रीगणेशाय नम ॥ श्रीपीताम्बरायै नम ॥

श्रोङ्कारद्वयसम्पुटान्तरपुट मायास्थिराद्यन्वित,
तन्मध्ये वगलामुखीति विमल सम्वोधन सर्व च ।
दुष्टानामथ वाचमाशु च मुख[1] सस्तम्भयेत्यक्षर,
जिह्वा कीलय कीलयेति च[2] लिखेद् बुद्धि तथा नाशय ॥१॥
ब्रह्मास्त्र सकलार्थसिद्धिजनक षट्त्रिंशदर्णात्मक-
म्प्रोक्त पद्मभुवा हिताय जगता यन्नारदाग्रे पुरा ।

१. ख० पद। २ वि-।

जीवन्मुक्तपदे विभान्ति सुधियो येषां मुखे भासते,
निर्द्वन्द्वामृतसागरेन्दुकिरणाहाराब्धकोरास्तु ते ॥२॥
ओमित्यादिस्वरूपं[1] जयति तव शिवे शब्दतन्मात्रगर्भा-[2]
वाचो यस्मात् परार्थप्रकटितपटवो वर्णरूपा निरीयुः ।
ब्रह्माद्यैः पञ्चतत्वैः परिवृतमनघं चित्प्रबोधाधिगम्यं,
दुर्ज्ञेयं योगयुक्तैः कथमपि मनसा[3] योगिभिर्गृह्यमाणम् ॥३॥
ह्लीं[4] बीजं 'हृदि यस्य'[5] भाति विमलं लक्ष्मीः स्थिरा तद्गृहे,
धैर्यं तस्य कलेवरेऽपि विद्यते[6] दीर्घायुषो भूतले ।
कल्पान्तेष्वपि वृद्धिमेति विमला तद्वंशवल्ली परा,[7]
शौर्यं स्थैर्यमुपैति तस्य पुरतस्त्रस्यन्ति वादीश्वराः ॥४॥
बद्धं वारिधिमुद्यतो जनकजानाथोऽपि पीताम्बरे !
त्वां ध्यात्वाऽर्णवशोषणे कृतमतिः सेतुं प्रचक्रे द्रुतम् ।
जित्वा रावणमुग्रशत्रुमबलान् बन्दीन् विमुच्याऽमरान्,
कीर्तिं लोकसुखोदयां व्यरचयत् कल्पस्थिरामम्बिके ॥५॥
गर्वं खर्वति रङ्कति क्षितिपतिर्मूकायते वाक्पतिः
वह्निः शीतति दुर्जनः सुजनते पुष्पायते वासुकिः ।
श्रीनित्ये बगले तवाक्षरपदैर्यन्त्रीकृता[8] मन्त्रिणः,
के के नो निपतन्ति [9]त्रस्तमुकुटाश्चन्द्रार्कतुल्या अपि ॥६॥
लावण्यामृतपूरिते तव कृपापाङ्गे निमग्ना नरा
[10]ब्रह्मेशादिदिगीशवृन्दमपि ते जानन्ति गुञ्जोपमम् ।
येषां चेतसि संस्थिताऽसि बगले ! ते विश्वरक्षाक्षमाः,
प्रारब्धं द्रढयन्ति सत्वरतरं विघ्नैरविघ्नीकृताः ॥७॥
मुख्यत्वं समुपैति संसदि तवाऽपाङ्गावलोके नरः,
किं तच्चित्रमहो स्वयं प्रभवते सृष्टिस्थितिध्वंसने ।
मच्चित्ते तव 'भाति मामक इति'[11] त्वद्दर्शनं यस्य वा,
त सर्वा ह्यणिमादयोऽप्यतितरामाराधयन्ते ध्रुवम् ॥८॥
क्षीणानां[12] बलदायिनी जलनिधौ 'पोतस्थितो नाविकाः,'[13]
तत्त्राणे[14] घनकुञ्जगह्वरगिरिव्याघ्रादिभीतेष्वपि[15] ।

१. ख. ओमित्यत्र । २. ॰गर्भे । ३. तपसा । ४. ह्रूं । ५. हृदये वि । ६. भजते ।
७. ततिः । ८. ॰ थे स्थिता । ९. भ्रष्टमु॰ । १०. ब्रह्मेन्द्रादिदिगीशभूतमपि ।
११. ख. भक्तिभाग् कुरुते । १२. क्षिप्रानां । १३. पोतस्थितानां पतिः । १४. [illegible] त्राणे ।
१५. ॰ सत्वेष्वपि ।

त्वा पीताम्बरधारिणी 'परशिवा चन्द्रार्द्धचूडा गदा-'[1]
हस्ता वामकरे[2] प्रतीपरसनामुन्मीलयन्ती[3] भजे ॥९॥
स्वेच्छ[4] ये प्रणमन्ति पादयुगल पीताम्बरे ! तावक,
ते वाञ्छाधिकमर्थमाप्य सकला सिद्धि भजन्ते पुन ।
यद्यत्कर्तु मुरीकरोति बगले ! त्वत्साधकोऽत्राधुना,
तत्सञ्जातमिवेक्षते तव कृपाऽऽपाङ्गावलोके क्षणात् ॥१०॥
वाणी[5] सूक्तिसुधारसद्रवमयी सालङ्कृतिस्तन्मुखे,
दापानुग्रहकारिणी कविजनानन्दैकसवर्द्धिनी ।
व्याकर्तु क्षमते विशालमतिमास्त्वत्सेवको वाङ्मय,[6]
किं चित्र यदि सृष्टिमाशु रचते ब्रह्माण्डकोटचायते[7] ॥११॥
देवि ! त्वद्भक्तदृष्ट्या तुहिनगिरिमुखा पर्वता पासुतुल्या
ज्वालामालाश्च चन्द्रामृतकरसदृशा पुष्पना यान्ति नागा ।
मूकत्व वाक्पतीन्द्रा सरसि समतुलामाश्रयन्ते समुद्रा
राजानो रङ्कभाव रणभुवि रिपवो विद्रवन्ते विशाखाः ॥१२॥
लेख्य[8] तावकमन्त्रबीजममल दुष्टौघसस्तम्भन,
वश्याकर्षणमारणप्रमथनप्रक्षोभणोच्चाटने ।
व्यक्त वज्रमिवापर यदि मुखे जागर्त्ति तस्याग्रत ,
पादान्त परिसञ्चरन्ति रिपवो ये सप्तद्वीपेश्वरा ॥१३॥
नानारत्नविभूषितामलमणिद्वीपे सुधासागरे,
कल्पानोकहकाननान्तरगता या रत्नवेदी परा ।
तत्राकारितपञ्चप्रेतकमये सिहासने सस्थिता,
ध्यायेऽह करुणाकरा हरिहराराध्यामशेषार्थदाम् ॥१४॥
वाग्देवी वदने वसत्यविरत नेत्र च लक्ष्मी करे
दान दीनकृपालुता च हृदये वीरत्वभाजो सदा ।
त्वद्भक्तस्य भवाब्धिपारतरणे तत्त्वोदयो जायते,
तेनेद नलिनीदलोपरि जलाकार जगद् भासते ॥१५॥
चञ्चत्काञ्चनतुल्यपीतवसना चन्द्रावतसोज्ज्वला,
केयूराङ्गदहारकुण्डलधरा भक्तोदयायोद्यताम् ।

१. परचमूविद्रावणोद्यद्गदा । २ वामकरेण । ३ शत्रुरसना० । ४ स्पृष्ट ।
५ मुक्ति० । ६ ऽत्राधुना । ७ ०कोटचालये । ८ दृष्ट्वा ।

त्वां ध्यायामि चतुर्भुजां त्रिनयनामुग्रारिजिह्वां करे,
कर्षन्तीमहमम्ब पाहि बगले ! त्राणं त्वमेवासि मे ॥१६॥
मातस्ते महिमानमुग्रमधिकं प्रोक्तं स्वयं मानवैं—
र्वाक्यं सद्रियते[1] श्रमेण यदि वा शक्त्या गुणाम्भोनिधेः ।
नो निश्शेषतया सुरैरविदितप्रान्तस्य पद्मालये,
तस्मात् सर्वगता त्वमेव सदसद्रूपा सदा गीयते ॥१७॥
खड्गं तार्क्ष्यसमोद्यम[2] प्रकुरुते तार्क्ष्यं च खड्गाधिकं,
वान्त[3] स्तम्भयते जलाग्निशमने याऽव्यक्तशक्तिः शिवे ।
तद्बीजं बगलेति मेऽस्तु रसनालग्नं सदैवामलं,
यद्ब्रह्मादिसुदुर्लभं भुवि नरैः सत्प्राक्तनैर्लभ्यते[4] ॥१८॥
स्तम्भत्वं पवनोऽपि[5] याति भवतो[6] भक्तस्य पीताम्बरे ।
किं चित्रं यदि वारिधिः स्थलपदं मेरुस्तु मापोपमाम् ।
कल्पानोकहकामधेनुप्रमुखं रत्नैरलिन्दस्थितैः[7]—
र्वाञ्छार्थाधिकदानमाशु कुरुते दीनेष्वदीनेष्वपि ॥१९॥
भाग्याढ्यस्य मुखे विभाति विमला विद्या विशेषाधिका,
षट्त्रिंशद्भिरथोदिता बहुगुणैर्बीजैस्तु सर्वार्थदा ।
तं सर्वे प्रणमन्ति मानवममी[8] सेन्द्राः सुरा भूसुराः,
'कान्तादोषमहोदय स्वकलनाक्रान्तत्रिलोकालयम्[9][10] ॥२०॥
यत्किञ्चिद्भुवने विभाति विमलं रत्नं महानन्दनं,[11]
या या वृत्तिरुदारता जनयते यद्यत्परं सुन्दरम् ।
यत्किञ्चिद्भुवनेऽथवा नु[12] महता शब्देन वा कीर्त्यते,[13]
तत्सर्वं तव रूपमेव बगले ! संसारपारप्रदे ॥२१॥
जाग्रत्पूर्णकृपामृतौघभरिते श्रीमत्कटाक्षेक्षणे,
सर्वार्थप्रतिपादकव्रतधरे ये ये निमग्ना नराः ।
तेषां भाग्यमतीन्द्रियं निगदितुं ब्रह्मादयो न क्षमा
ये सङ्कल्पविकल्पमात्ररचना. प्राणात्यये हेतवः ॥२२॥
हस्ते संगृह्य चापं[14]शरधरनिकरैर्यात्किरान् महाजौ,
पार्थो ब्रह्मास्त्रविद्याभ्यसनपटुमतिर्द्वन्द्वयुद्धे तुतोष ।

---

१. ख. 'सद्रियते' इत्यपि पाठः । २. 'तार्क्ष्यजयोद्यत' इति पाठः । ३. 'वातु'' क्वचित् ।
४. 'सत्प्राक्तनैर्लभ्यते' इति पाठः । ५. परमोऽपि । ६. पवनो । ७ रत्नैरनेकैः स्थितैः ।
८. ०ममु । ९. कान्तारोष० । १०. स्वकलनाक्रमया० । ११. महानन्ददम् । १२ ऽथ ।
१३ कीर्त्तिते । १४. सितशर० ।

तत्सर्वं देववृन्दैरथ रिपुनिवहैर्वीक्षित सिद्धलोकै-
धैर्यं[1] शौर्यं च सर्वं[2] तव वरजनित भाति पीताम्वरेऽत्र ॥२३॥
पीता पीतजटाधरा त्रिनयना पीतांशुकोल्लासिनी,
हेमाभाङ्गरुचि शशाङ्कमुकुटा सच्चम्पकस्रग्युताम् ।
हस्तैर्मुद्गरवज्रवैरिरसना सविभ्रतीमादरात्,
दीप्ताङ्गी वगलामुखी त्रिजगतां सस्तम्भिनीं चिन्तये ॥२४॥
कर्णालम्बितलोलकुण्डलयुगा श्वेतेन्दुमौलि[3] करैं,
केयूराङ्गदपाशमुद्गरगदावज्रादिकान् विभ्रतीम् ।
देवी पीतविभूषणामरिकुलध्वसोद्यता ये नरा
ध्यायन्त्याशु लभन्ति सिद्धिमतुला ते वालिशा स्युः कथम् ॥२५॥
लब्ध्वा मातरशेषकान्तिभरितानन्द[4] कृपावीक्षण,
वर्षीयानपि मोहितु प्रभवति स्त्रीवृन्दमुन्मीलितुम् ।
किं तच्चित्रमनेकधा भ्रमयते दृष्ट्या त्रिलोकीमिमा,
सूर्येन्दुस्तनधारिणीमपि वलात् कन्दर्पदर्पाधिक [5] ॥२६॥
यन्त्र जंत्रमनकदु स्त्रशमन पीताम्वरे ! तावक-
मोङ्कारद्वयसम्पुटेन पुटित शिष्टैस्तथावेष्टितम् ।
तद्वाह्ये स्थिरमाययाष्टपुटितं पाशाङ्कुशाद्यावृत,
येषा चेतसि 'भाग्यतो निवसत ते विश्वसर्गक्षमा'[6] ॥२७॥
कर्पूरागुरुचन्दनैर्मृगमदैर्गोरोचनाकेशरै-
स्त्वत्पादाम्वुजमर्चयन्ति वगले[7] ये प्रत्यहं मानवा ।
ते लब्ध्वा श्रियमद्भुतामपि चिर भोगांश्च भुक्त्वाऽवनौ,
सायुज्यालयमाविशन्ति परमानन्दोऽस्ति यत्राधिक ॥२८॥
लब्ध्वा पादयुगे रतिं तव शिवे क्षुद्रोऽपि देवेन्द्रता-
मासाद्यामरसुन्दरीभिरमलैर्भोगैर्दिवि क्रीडति ।
ये हित्वा तव भक्तिमन्यभजनानन्दाश्चिर ते नरा
भ्रष्टा धर्मपराङ्मुखा भ्रमधियो भार वहन्ते भुवि ॥२९॥
यामाराध्य हरो हरत्वमभजद् विष्णुस्तु विश्वात्मता,
चक्रे सृष्टिमजोऽप्यवोचदखिल वेदादिसद्वाङ्मयम् ।
ध्यात्वा ध्वान्तमशेषमाशु हरते सूर्योऽपि पीताम्वरे ।
तीव्र तापमपाकरोति रजनीनाथोऽपि चूडाश्रितः ॥३०॥

---

१ स्त स्थैर्यं । २ समस्त । ३ पीतेन्दु० । ४ ०भरित विम्ब । ५. ०दर्पाधिकाम् ।
६. '—' सस्थिताऽखि वगले ते विश्वरक्षाक्षमा । ७. सतत ।

बुद्धि नाशय कीलयाशु[1] रसनामङ्घ्र्योर्गतिं स्तम्भय,
दुष्टान् द्रावय मारयारिनिवहान् दासाश्चिर पालय ।
इत्थं ये बगलामुखी पदगति लब्ध्वा पठिष्यन्ति ते,
यन्त्रारूढमिवारिवृन्दमखिल कर्त्तुं समर्था सदा ॥३१॥

ध्यात्वा त्वा बगले ! पुरा गिरिसुता चक्रे शिव स्व वर,
प्रोक्त नार्पयितु शिवेन गदिता सकल्पनाम्नी तदा ।
[2]त्यक्ताग्निर्गलितावलि गिरिसुतात् त्यक्त्वा गलस्तम्भुखात्,
तस्मात् त्व बगलामुखी निगदिता नित्या परा योगिनी ॥३२॥

[3]नागेन्द्रैर्देवसिद्धैर्मुनिवरनिवहैर्दानवै राक्षसेन्द्रै-
र्दिक्पालैर्दिक्करीन्द्रैर्दिनकरप्रमुखैः सद्ग्रहैस्तारकाद्यैः ।
ब्रह्माद्यैः स्थूलसूक्ष्मैरविदितमुदिता त्व परा चोन्मनी त्व,
नित्या पीताम्बरा त्व रिपुभयशमनी भक्तिचित्तासनस्था[4] ॥३३॥

[5]शम्भुर्यद्गुणगाननोद्यतमतिर्नाटघोत्सवैस्ताण्डवे,
चक्रे चन्द्रमयूखकम्पनकरा[6] नीराजना[7] पादयो ।
[8]हेमाम्भोजदलैर्जटाजलभरैरानन्दितैर्मौलिभि[9],
पूजा प्रत्यहमातनोति नटयन् स्वैर्हस्ततालादिभि ॥३४॥

या दध्रे चतुराननोऽपि वदने सितारविन्दस्थिता,
या वक्ष स्थलसस्थिता हरिरजामालिङ्ग्य पीताम्बराम् ।
यद्देहार्धमुरीचकार पुरजित्[10] सौन्दर्यसाराधिका,
पट्चक्राक्षररूपिणी भज सखे ! देवी जगत्पालिकाम्[11] ॥३५॥

हस्ते भाति गदा सदार्त्तिशमनी रत्नावली स्वङ्गजे,
पादे नूपुरमीशमौलिमणिभिर्नीराजित[12] राजते ।
ताटङ्क श्रवणे कुचोपरि सदा[13] कस्तूरिकालेपन,
काश्मीरद्रवमङ्गरागमधिका पीतच्छवि[14] तन्वते ॥३६॥

ॐकारद्वयसम्पुटन पुटिता 'विद्यागमे सस्थिता,'[15]
पट्चक्राक्षरबीजसाररचिता पट्त्रिंशद्वर्णात्मिकाम्[16] ।

१. ख.कीलयारि । २. त्यक्त्वा० । ३. नागेन्द्रैर्देवसंघैर्मुनि० । ४ भक्त० ।
५. ०गुणगानतापरमतिर्नित्योत्सवे । ६. ०कम्पनविभा । ७. नीराजन । ८. हेमाम्भोजजलैः० ।
९. नन्दिता मौलिभि । १०. पुरभित् । ११. जगद्व्यापिकाम् । १२. ०नीराजन ।
१३ ससद् । १४ पीतां छवि । १५. विद्यामवास्ये स्थिता । १६. सत्तत्ववर्णात्मिकाम् ।

'ये-जानन्ति जपन्ति सन्ततमभिध्यायन्ति गायन्ति वा,
ते वन्द्या विबुधैश्चरन्ति भुवने सिद्धार्चिता. सिद्धये'[1] ॥३७॥

स्वाहाशक्तिरुपासने तव ऋषिः श्रीनारदो देवता,
नित्या श्रीबगलामुखी निगदिता छन्दो भवेत् त्रिष्टुभम् ।
बीजं तु स्थिरमायया विरचितं नानाविधस्तम्भने,[2]
प्रोक्तं पद्मभुवाऽखिलाप्तिविनियोगोऽप्यच्युताकारता[3] ॥३८॥

हृद्यं सर्वसुरेश्वरैश्च ऋषिभिर्दुष्प्राप्यमेवाद्भुतं,
स्तोत्रं गोप्यतमं स्वभाग्यवशतः प्राप्य[4] पठिष्यन्ति ये ।
सूक्त्या[5] देवगुरुं 'धनेन धनदं'[6] जित्वा चिरञ्जीविता,
षण्मासात् सुखसागरे शिवसमाक्रीडां करिष्यन्ति ते ॥३९॥

देवी स्वप्नगता स्वयंव लिखितं मह्यं ददावद्भुतं,
दिव्यास्त्रं पुरतः पटस्थ विमलं सिन्दूरवर्णं करे. ।
रोमाञ्चाङ्कितहर्षमाप्य लुलितैरङ्गै[7] पठन्ति नर-
प्राप्तोऽहं परमोदयप्रदमिदं ज्ञानं कवीन्द्रादिदम्[8] ॥४०॥

प्राप्ता श्रीबगलामुखीवदनतः स्वप्ने सुविद्या मया,
षट्त्रिंशाद्भिरिमै. सुवर्णनिचयैः सद्बीजरत्नावली ।
येषा कण्ठगता विभाति जगतीपीठे प्रयोगक्षमा,
वश्याकर्षणमोहमारणविधौ स्तम्भे तथोच्चाटने ॥४१॥

चलत्कनककुण्डलोल्लसितचारुगण्डस्थलाम्,
लसत्कनकचम्पकद्युतिविराजिचन्द्राननाम् ।
गदाहतविपक्षका कलितलोलजिह्वाञ्चला,
स्मरामि बगलामुखीं विमुखवाङ्मुखस्तम्भिनीम्[9] ॥४२॥

॥ श्रीपीताम्बराष्टत्वाश्लोकस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥[10]

संवत् १८६० शाके १७५५ आषाढमासे शुक्लपक्षे ५ मङ्गवासरे लिखितं ब्रह्मचारि-काशिनाथेन ॥ श्रीगङ्गाविश्वेश्वराभ्यां नमः ॥

---

१. ख पादद्वय एकचत्वारिंशच्छ्लोकादनन्तरं विद्यते । २. नानाविधि० । ३. ०प्यसत्कारकः ।
४. नित्य । ५. शक्त्या । ६. धनैर्धनपतिं । ७. ललितै० । ८. कवीन्द्रार्चितम् ।
९. ख. श्लोकोऽयं नास्ति । १०. इति श्रीनारदोक्तं पीताम्बरादेवीस्तवराजस्तोत्रम् ।

सांख्यायनतन्त्रस्थानाम्

पद्यानामनुक्रमः

पृष्ठाङ्क पद्याङ्क

अ

ओ

क

ख

ग

द

ध

ह

